बीस नदियों का संगम

(1989)

सकलनकर्ता मीना अग्रवाल

वर्तिका प्रकाशन
50 कालू सराय होज खास नई दिल्ली-110016

MEENA AGARWAL (ED)
BEES NADION KA SANGAM
(Collection of short stories by women/authors)
1989 VARTIKA, NEW DELHI
PRICE Rs SIXTY FIVE (Rs 65/)

Laser setting by
Saket Phototypesetters
Delhi — 110 092

प्रकाशक	वर्तिका प्रकाशन
	50 कालू सराय हौज खास नई दिल्ली 110016
मूल्य	पैंसठ रुपये (65/)
मुद्रक	

मेरी बात

कई वर्ष पहले मै " अखिल भारतीय लेखिका संघ की सचिव थी। मेरा कार्यकाल छह वर्ष तक रहा। इस बीच मान्या शीला गुजराल जी जो मेरे समय मे अध्यक्ष थीं के तथा अपनी सहयोगी लेखिकाओं के साथ तीन सर्व भाषाई अखिल भारतीय आयोजन हुऐ। पहला रजत जयन्ती के उपलक्ष्य में साहित्यकार की भूमिका पर, दूसरा पुस्तक प्रदर्शिनी के रूप में तथा तीसरा बाल साहित्य की सभावनाओं पर था। ये तीनो ही सयोजन अखिल भारतीय स्तर पर सर्व भाषाई थे।

इस समय में पूरे भारत की अनेक लेखिकाओं से निकट का परिचय पाने का सुयोग मिला था। उनके स्नेह भरे पत्र मुझे अब तक निरन्तर मिलते रहते है।

एक दिन वर्तिका प्रकाशन के श्री अनिल वर्मा जी ने सर्व भाषाई लेखिकाओं की कहानियो का सग्रह प्रतिवर्ष छापने की अपनी योजना मुझे बताई।

मुझे फिर एक स्वर्णावसर मिला। एक–एक नन्हा सा आमन्त्रण पत्र क्या भेजा कि रचनाएँ स्वत आ जुडी।

यह पुस्तक बीस नदियों का सगम एकता के हमारे स्वप्न को साकार करती है। पढकर लगता है देश का कोना कोना कहीं न कहीं भारतीय परम्परा मर्यादा व सस्कृति की चूनर तले चिन्तन करता है, आचरण करता है। प्रकृति के लिए प्रेम चारो ओर के ससार के लिए प्रेम! — राष्ट्र के लिए प्रेम! — युवा प्रेम! — प्रौढ प्रेम!

यदि कुछ है कहीं तो है बस है प्रेम! और इसकी बहती हुई मदाकिनी!

प्रतिष्ठित लेखिकाओं के साथ जोडकर नवीन लेखिकाओं को उभार कर लाना भी इस पुस्तक का ध्येय है।

मै सभी लेखिकाओं के प्रति हृदय से आभारी हूँ जिन्हो ने अपनी कहानियाँ प्रदान कर अपनी सहृदयता व प्रेम का परिचय दिया।

प्रतिवर्ष यह गुलदस्ता खिलता रहे ऐसी कामना करती हूँ।

मीना अग्रवाल
डी 259 डिफेन्स कलोनी
नई दिल्ली

अनुक्रम पृष्ठ सख्या

समर्पण

स्मृतियों की गंध को

बीस नदियों
का
सगम

अपना- अपना कर्ज

-अमृता प्रीतम-

वह एक टूटी हुई बात की तरह थी।

किसी को मालूम नहीं कि वह कौन थी कहाँ से आयी थी कब आयी थी, शायद कुआरी थी, शायद विधवा थी, क्योंकि मर्द के नाम पर उसकी झुग्गी में कोई दो बरस का एक बच्चा था, पर वह उसका भी हो सकता था और उस दूसरी उससे कुछ पक्की उम्र की औरत का भी।

नयी, बन रही बस्ती में, सभी नये थे। वे भी—जो वहाँ अपने घरों की नींवे खुदवा रहे थे और वे भी जो ईंटे और चूना ढोकर दीवारे खडी कर रहे थे। सो नीम के पेडो के नीचे बनी हुई उसकी चाय की झुग्गी न जाने पेडों की आयु की थी, या हाल में ही खुदी नींवो की आयु की।

लोगों को केवल यह मालूम था कि उसका नाम मूर्ति है और उसकी झुग्गी मे सवेरे से लेकर शाम के पाँच बजे तक मजदूरों की छुट्टी होने के समय तक, गरम दालचीनीवाली चाय मिलती है।

वह अक्सर मोटी मलमल की लाल धोती बाँधे रहती थी और चूल्हे मे जलती हुई लकडियो के पास बैठी हुई वह भी चूल्हे की आग-जैसी मालूम होती थी।

वह दूसरी उससे पक्की आयुवाली, जब धूप चढती तब बच्चे को खिलाती हुई बाहर नीम के पेडो के नीचे बैठी दिखायी देती और जब शाम की ठड उतरने लगती तब बच्चे को आचल में लपेटकर वह झुग्गी के भीतर जाती हुई दिखायी देती। चाय सिर्फ वह मूर्ति बनाती और बरताती दिखायी देती थी।

राज बख्शी के घर की छतें जब पड चुकीं तब काम कुछ दिनों के लिए थम गया पर बख्शी साहब इन दिनों भी नियम से आते थे और चौकीदार को भेजकर चायवाली झुग्गी से चाय मगवाते थे तथा कुछ देर वहाँ अकेले कुरसी पर बैठे रहते थे।

एक दिन कुछ देर से आये। बन रहे सब मकानो के चौकीदार अपनी-अपनी झुग्गी मे आग जलाकर कुछ पका- वका रहे थे और मूर्ति की झुग्गी में भी चाय के बरतन माँजे धोये जा चुके थे, जिस समय उन्होने चौकीदार को चाय लाने के लिए भेजा।

मूर्ति ने नये सिरे से चाय का पानी रखा। चौकीदार शायद उनके लिए सिगरेट लेने चला गया था मूर्ति ने चाय बनाकर उसका इतजार किया फिर स्वय जाकर बख्शी साहब को चाय दे दी।

नीम के पेडो से झडे हुए पत्ते जमीन पर कुछ इस तरह हिल रहे थे जैसे मिट्टी को टटोल-टटोलकर अपनी जडे खोज रहे हो।

राज बख्शी ने चाय का प्याला हाथ मे लेते हुए मूर्ति की ओर देखा था, पर फिर आखे परे कर ली थीं। फिर भी आखों मे से कुछ उतर कर अभी तक मूर्ति के मुँह पर हिल रहा था

वे चाय पी रहे थे। मूर्ति परे कुछ दूर पर सध्या के सिमटते हुए उजाले की तरह खडी रही।

मूर्ति !" अचानक उसकी आवाज ऐसे आयी जैसे हवा के एक झोंके से नीम के पेड से बहुत सारे पत्ते झड पडे हों।

जी। न जाने क्यो मूर्ति को लगा जैसे उसकी आवाज पीपल के पत्ते की तरह काप गयी थी। शायद उन तक पहुची भी नहीं थी। होंठों में ही काप गयी थी।

"तुम यहाँ कब आयीं? किस तरह ?

मूर्ति ने परे शून्य में देखा परे वहा तक—जो आखों की पहुच से बाहर था फिर कहा 'काफिले के साथ जब सारे लोग आये थे।

राज बख्शी ने नजर भरकर उसकी ओर देखा। गोधूलि के इस समय में वह कासे की मूर्ति की भाति खडी हुई लगती थी।

उन्हें ख्याल आया—पिछले वर्ष इस धरती का विभाजन एक और गजनवी की तरह आया था जिसने न जाने कितनी मूर्तिया तोडी थीं और यह एक मूर्ति न जाने किस मंदिर में से उठा कर यहाँ एक झुग्गी में ला कर रख दी थी

पर साथ ही राज बख्शी को डूबते हुए सूरज की लाली-जैसा एक तीखा-सा एहसास हुआ—लोग सदा अपने घर-बार कार रोजगार और रहन-सहन—जैसी हैसियतों से ही पहचाने जाते है ये सब चीजें जब उनके पास से खो जाए—उनके चेहरे भी खो जाते है। पिछले बरस उन्होंने कई कैम्प और काफिले देखे थे—अपनी-अपनी हैसियत के बिना लोगों के अपने चेहरे भी खोये हुए थे। सब कुछ एक भट्ठी में गलकर एक-जैसा हो गया जान

पडता था—चेहरे भी आवाजें भी ख्याल भी

"पर यह मूर्ति किस तरह साबत की साबत ' राज बख्शी को मूर्ति का घर-बार या उसकी हैसियत का पता नहीं था पर एक गहरा-सा एहसास था— वह जो भी थी—वही है। उसकी किसी मदिर या महल मे रहनेवाली अदा यहा इस झुग्गी मे भी है "

मूर्ति उसी तरह एक दूरी पर खडी हुई थी। चाय का प्याला उसी तरह राज बख्शी के हाथों में थमा हुआ था। शायद वह खाली प्याले को लेने के लिए खडी हुई थी पर पावो के आगे बिछी हुई खामोशी को न वह तोड सकती थी न वह

फिर अचानक खामोशी टूट गयी। चौकीदार के पैरों की आवाज ने तोड दी। राज बख्शी ने खाली प्याला चौकीदार को थमा दिया, चौकीदार से मूर्ति ने ले लिया और पीछे झुग्गी की ओर मुडती हुई मूर्ति को चौकीदार ने जब दो आने दिये वह चीनी की प्लेट में इस तरह छनके जैसे दो टुकडों में टूटी हुई खामोशी से कुछ और ककड गिर आये हों

राज बख्शी अगले दिन भी आये उससे अगले दिन भी, उससे अगले दिन भी, पर उन्होंने स्वय झुग्गी के पास जाकर चाय मागी, पी और दो टुकडो मे टूटी हुई खामोशी फिर एक साबत टुकडा मालूम होने लगी।

कुछ आवाजें ऐसी होती है—जो खामोशी के बदन में लहू की नसो की तरह चलती है और उनके कारण वह चुप बडी जीती-जीगती मालूम पडती है। एक दिन चाय बनाते समय मूर्ति के पास खेलते हुए बच्चे की आवाज भी ऐसी ही थी।

'यह बच्चा ?

"मेरा है।"

यह सवाल और जवाब भी लहू की हरकत की तरह थे। ठडी खामोशी कुछ तपते हुए रग की हो गयी।

"वह ? राज बख्शी ने अदर झुग्गी में बैठी हुई दूसरी औरत की ओर देखा। जवाब में मू र्ति ने पहले बच्चे से कहा, अ दर अपनी मा के पास जाफिर बख्शी साहब से कहा वह मेरे बच्चे की मा है।"

खामोशी जैसे जोर-जोर से धडकने लगी।

अगले दो दिन राज बख्शी के कानो में मूर्ति की आवाज पत्तो की शा-शा की तरह चलती रही। उन्होंने उसकी झुग्गी से रोज चाय पी पर फिर कुछ पूछा नहीं।

मूर्ति के शब्द सीधे थे— 'यह मेरा बच्चा है, वह मेरे बच्चे की मा है।" पर अर्थ सिर्फ पत्तों की शा-शा जैसे थे पकड में नहीं आते थे।

यह नयी बन रही बस्ती शहर से आठ मील दूर थी जिसके आस-पास अभी कोई मडी या बाजार नही बना था। शहर से इस बस्ती तक एक बस चलती थी दिन भर में शायद तीन बारा यह बस न मिलने पर आठ मील पैदल चलने के सिवा कोई चारा नहीं था।

इसी रास्ते पर एक दिन राज बख्शी ने मूर्ति को शहर से बस्ती की ओर आते हुए देखा। मूर्ति के दोनो हाथो में कुछ गठरिया पोटलिया थीं। राज बख्शी ने अपनी गाडी रोक ली।

बस दो मिनट का फर्क पड गया,बस निकल गयी," मूर्ति ने गाडी में गठरिया पोटलिया रखते हुए कहा 'चाय की पत्ती चीनी और लटरम-सटरम लेने के लिए कभी-कभी शहर जाना पडता है।'

राज बख्शी ने गाडी को पहले से दूसरे और दूसरे से तीसरे गियर में डालते हुए धीरे से कहा 'बहुत मेहनत करनी पडती है?

सध्या समय की इठलाती हवा की भाति मूर्ति हस दी बोली कुछ नहीं।

मूर्ति !तुम्हारे बच्चे का बाप? राज बख्शी के मुँह से अधूरा-सा वाक्य निकला जो उन्हे कुछ गलत-सा भी लगा। फिर उसी वाक्य को कुछ ठीक करते हुए उन्होंने कहा 'तुम्हारा आदमी वहीं फसादों के दिनों में "

"हा बलवाइयो ने मार दिया।'

अगली खामोशी से फिर उस दिनवाले मूर्ति के शब्द राज बख्शी के कानों में शा शा करने लगे

कुछ देर बाद कह सके लोग अजीब-अजीब बातें करते है।

"मेरी ? मूर्ति ने पूछा पर आवाज में फिक्र-जैसा कुछ नहीं था।

"वह दूसरी औरत?

"उसका नाम रुक्मणी है वह मेरी सगी बहन है।

"यह बच्चा उसका है?

"हा !

"तुम्हारा नहीं?

"मेरा भी।'

राज बख्शी हस पडे "बहुत किसका है?"

"बहुत उसका है।" मूर्ति भी हस-सी पडी।

राज बख्शी एक पल की खामोशी के बाद गभीर-से स्वर मे कहने लगे,असल मे तुम दोनो मे एक को औरत होना चाहिए था एक को मर्द।'

"हा, पर तुम्हारी जगह यह ख़याल रब को आ ा चाहिए था' मूर्ति ने कहा तो राज बख्शी ने कुछ चौंककर मूर्ति की ओर देखा। फिर कहने लगे 'तुम्हें मालूम है लोग क्या कहते है?"

"क्या ?"

एक दिन मेरे ठेकेदार का मुशी किसी से कह रहा था '

"क्या ? '

"कि तुम्हें फिर से ब्याह करने मे कोई एतराज नही अगर राज बख्शी इस'अगर'के आगे कुछ नहीं कह सके।

मूर्ति ने ही कहा लोग ठीक कहते है, मैंने ही कहा था—अगर कोई मेरे और रुक्की दोनों के साथ ब्याह करे मै कर सकती हूं।"

अजीब शर्त है।

"नहीं अजीब नहीं है।' मूर्ति सामने वाली सडक की ओर देखती रही फिर कहने लगी, 'साहब ! अभी तुमने कहा था—'हम दोनो मे, मुझमे और रुक्की में एक को औरत होना चाहिए था, एक को मर्द' यह सच बात कही थी। मुझे रुक्की-जैसा मर्द चाहिए था।"

'पर इस वक्त तो तुम उसके लिए काम करती हो कमाती हो मर्द की तरह "

"मै ऐसे ही ठीक हू।

"पर वह बात ?"

"आखिर मै मर्द नहीं मर्द की जगह हू, मर्द की तरह '

राज बख्शी ने सोचा नहीं था कि वे कभी मूर्ति से बाते करके इस तरह आश्चर्य में पड जायेंगे, हस-से दिये। मानो हसी से आश्चर्य को ढक रहे हों।

मूर्ति ने ही कहा 'असल मे मर्द न उसे मिला न मुझे।

"उसका आदमी भी फसादों के दिनों मे ?'

वही जिसे बलवाइयों ने मार दिया ।'

मूर्ति ! राज बक्शी झडते हुए पत्तोवाली टहनी की तरह खाली-खाली से मूर्ति की ओर देखने लगे। फिर कहने लगे वह आदमी तुम्हारा भी उसका भी ?यह बच्चा तुम्हारा भी, उसका भी?

"हा साहब!' मूर्ति हस पडी 'रब एक बात पर चूक गया तो फिर चूकता ही गया।'

राज बख्शी ने गाडी की चाल को हलका किया कहा बस्ती आने वाली [redacted] मूर्ति !

अगर तुम्हे एतराज न हो मै यहा कुछ देर गाडी रोक दू।

मूर्ति की खामोशी बख्शी साहब से ज्यादा मूर्ति को अजीब लगी, कहने लगी, 'हा साहब मैने सुना है तुम अच्छे आदमी हो।

और क्या सुना है? राज बख्शी गाडी रोककर पूछने लगे।

और और यह कि तुम्हारे कोई बच्चा नही है

बच्चे की मा भी नहीं, राज बख्शी हसने लगे।

"हा कोई भी नहीं।

कहा सुना था?

"तुम्हारे ठेकेदार चौकीदार–सब मेरे पास चाय पीने आते है।'

वे यह बाते भी करते है?'

सिर्फ उस दिन कर रहे थे—–जिस दिन तुम्हारे मकान की नींव रखी गयी थी।तुमने उस दिन न हवन किया न मोतीचूर के लड्डू बाटे। वे सब लोग तुम्हारी इज्जत करते है—- सिर्फ सोचते है—– तुम्हारा कोई नहीं इसलिए तुम्हे मकान की खुशी नही "

राज बख्शी बहुत देर तक चुप रहे।

लगा—–उनमे और मूर्ति में बात करने वाली सडक टूट गयी है।

पर यह सडक शायद वह थी—–जो राज बख्शी की अपनी जिदगी की ओर मुडती थी। वे उधर से पलटकर उस दूसरी ओर देखने लगे जो मूर्ति की जिन्दगी की ओर जाती थी। कहने लगे अच्छा मूर्ति ! वह दूसरी औरत रुक्मी मर्द नहीं थी इसलिए तुम्हें किसी और से ब्याह करना पडा

"हा, साहब ! मूर्ति हस-सी पडी, "उसकी मेरी किस्मत एक ही थी इसलिए हमारा ब्याह भी एक ही जने के साथ हुआ और हमारा, दोनों का बच्चा भी एक ही है।"

बाहर कुछ बूदाबादी होने लगी थी। राज बख्शी ने धुधले-से हो रहे विडस्क्रीन की ओर देखा, वाइपर चलाया और कहने लगे 'दोनों का ब्याह ता एक आदमी के साथ हो सकता है लेकिन बच्चा किस तरह?"

"तन और मन मे कितना-सा फरक होता है साहब ?बस यह समझ लो—मन सिर्फ उसका था मेरा नहीं था, मेरा सिर्फ तन था।

शायद 'हू' जैसा कुछ राज बख्शी ने कहा फिर कितनी ही देर चुप रहे।

अचानक बोले, "उस समय एक आदमी से ब्याह करना शायद कोई मजबूरी थी या सिर्फ जरूरत थी, पर अब क्यो ?'

"वह जरूरत सिर्फ पैसे की थी। भट्ठोवाले की पहली औरत रुक्की थी——नही पहली नहीं——पहली मर गयी थी। फिर उसने रुक्की से ब्याह कर लिया——रुक्की के बच्चा नही हुआ। लोग कहते थे, भटठोंवाले को पहली का शाप लगा है। सो साहब बच्चे की खातिर उसने मुझे एक तरह से मोल खरीद लिया——पर साहब तुम यह सब क्यो पूछ रहे हो?"

राज बख्शी एकटक उसका मुह देखते रहे फिर बोले मै यहा रोज सिर्फ मकान के खातिर नहीं आता——मै तुम्हारे लिए आता हू, तुम्हारे साथ ब्याह कर सकता हू——पर तुम मेरे लिए भी वही शर्त लगाओगी वही रुक्कीवाली शर्त? '

"साहब ! बख्शी साहब ! यह बात पक्की है कि जहा मै रहूगी, वही रुक्की। जिस हाल मे मै रहूगी उसी हाल मे वह " मूर्ति कह रही थी कि बख्शी साहब ने बात काटी 'इससे मुझे कोई इन्कार नही है। वह पूरे सुख मे, पूरे आराम मे रहेगी।'

मूर्ति हस-सी पडी "किस तरह ?'

बख्शी साहब को मूर्ति का किस तरह'अर्थहीन-सा लगा, पर कहने लगे "पूरी इज्जत के साथ आराम के साथ, घर की मा की तरह बहन की तरह '

मूर्ति ने सामने विड-स्क्रीन की ओर देखा। वाइपर चल रहा था फिर भी हथेली से उसकी धुध को पोछते हुए बोली 'बस यही बात है बख्शी साहब !तुम चाहे कितने ही अमीर हो वह घर मे मा की तरह रहेगी तो मा नहीं होगी सिर्फ मा की तरह होगी। बहन नहीं होगी बहन की तरह होगी। यह'तरह'बहुत दिन नही चलती।'

राज बख्शी को लगा—इस वक्त शायद मूर्ति के कंधे को उनके हाथ की जरूरत नहीं थी लेकिन उनके हाथ को मूर्ति के कंधे की जरूरत थी। उन्होंने बाया हाथ कुछ कांपता-सा मूर्ति के कंधे पर रख दिया।

मूर्ति कहने लगी "पर जब कोई औरत किसी की बीवी होती है, वह बीवी होती है बीवी की तरह नहीं होती।

'हां मूर्ति ! राज बख्शी ने दलील मान ली पर कहा 'तुम्हें जिंदगी में पहली बार भी जो कुछ मिला उसके साथ बांटना पड़ा अब दूसरी बार तुम जान-बूझकर

सौतन कहलानेवाली औरत जो कुछ बटाती है, मैं उसकी बात नहीं करती '

फिर ?

मूर्ति कितनी ही देर चुप रही—जैसे कुछ बताने या न बताने का अपने साथ फैसला कर रही हो। फिर एक बार उसने एक गहरी निगाह से बख्शी साहब के मुह की ओर देखा लगा— उनके मुख पर कुछ ऐसा सच था जो उसने पहले कभी किसी मर्द के मुह पर नहीं देखा था। सोच लिया कि उसका अपना सच चाहे कैसा ही था पर सच के बदले में सिर्फ सच देना है।

कहने लगी— मेरे लिए भटठोवाले की माग बहुत दिनो से थी। मा-बाप गरीब थे पर इतने नहीं कि मुझे बेचे बिना उनका काम न चलता। जो जवान लडका मुझे अच्छा लगता था उसने मुझसे ब्याह करने का इकरार कर रखा था। गरीब था पर जवान था मूर्ति ने कड़वी सी हसी का एक घूँट पिया फिर कहने लगी— 'उससे ही मुझे दिन चढ़ गये थे '

राज बख्शी चुप थे मूर्ति भी चुप-सी हो गयी। फिर कहने लगी यह हमारी औरतों की जबान समझ गये हो न ?

राज बख्शी ने हां में सिर हिलाया। मूर्ति कहने लगी 'पर जब उसे पता चला वह ब्याह करने से मुकर गया। सो किसी मर्द का बदला किसी मर्द से लेने के लिए मैंने मा-बाप से कह दिया कि मैं भटठोवाले से ब्याह करूगी।

सो यह बच्चा

"यह भट्ठोंवाले का नहीं है।

"इस बात का पक्की को पता है?

"सिर्फ उसे पता है, और किसी को नही।

मूर्ति कह रही थी इस बच्चे को मैने मन की पूरी नफरत के साथ जन्मा था पर रुक्की ने मन के पूरे प्यार से इसे पाला है। उस समय तक रुक्की को कुछ पता नही था। वह भीतर से अच्छे मन की है——वह अपने तन की हसरत मेरे तन मे से मूर्ति की आवाज बाहर दूर तक बरसती हुई बूदों मे जैसे भीग गयी।

फिर ?

'फिर वह कमीना——जिसका यह बच्चा था और भी कमीनेपन पर उतर आया। मुझे धमकाकर उसने दो बार मुझसे पाच-पाच सौ रुपये लिये। मैने तग आकर सोचा कि मै भी मर जाऊ और उसके बच्चे को भी जीता न रहने दू। उसकी फिर धमकी आयी थी मै पागल-सी हो गयी थी——एक दिन बच्चे को उठाया आधी रात के वक्त और बाहर कुए की ओर चल दी। बच्चा रुक्की के पास सोया करता था मैने उसे सोते हुए उठाया था, सो रुक्की जाग गयी थी। मुझे तब पता चला जब वह भी मेरे पीछे-पीछे कुए की ओर दौडती हुई आयी। वहा मैने अपने मुह से सब कुछ बता दिया पर वह अपने बाप की बेटी मुझे अपने गले से लगाकर वापस लौटा लायी '

उसने उस आदमी को कुछ नही बताया ? उस भटठेवाले को ? राज बख्शी हैरान थे।

बिल्कुल नही। उसे सचमुच ही बच्चे का मोह हो गया था सिर्फ इतना ही नही उसने सबकी चोरी से उसे बुला भेजा जो मुझे आये दिन धमकाता था उससे कहने लगी कि भटठेवाले को सब कुछ मालूम है सो धमकी का कोई फायदा नहीं उल्टे भटठेवाले ने उसे मरवाने का बदोबस्त किया हुआ है——सो वह जान की सलामती चाहता है तो फिर कभी इस गाव से न गुजरे

राज बख्शी की आखों मे पानी-सा भर आया। उन्होने झुग्गी के हल्के अधेरे मे बैठी हुई रुक्की को दूर से देखा हुआ था पर आखो मे उसकी पहचान नही थी। उन्होंने मूर्ति की ओर देखा——लगा मूर्ति के मुह पर जो एक लौ है वह केवल उसकी जवानी की नहीं है, वह उस रुक्की की भी है—जिसे उन्होने देखा नहीं था।

मूर्ति कह रही थी यह बच्चा तो सचमुच मे उसका है मेरा तो यू ही एक बहाना है

राज बख्शी की हथेली मूर्ति के कधे पर बस-सी गयी। मूर्ति कहने लगी

मुझे पता है मेरी उम्र छोटी है

इसलिए सब मे री तरफ ताकते है पर अब जो हक उसे नहीं मिले गा मै भी नहीं लू गी ।

राज बख्शी बहुत देर चुप रहे। फिर हथेली से मूर्ति का मुह अपनी ओर मोडकर अपने सामने करके कहने लगे तुम्हे भी जिदगी का एक कर्ज चुकाना है मुझे भी जिदगी का एक कर्ज चुकाना है '

मूर्ति चुप पूरे ध्यान से उनकी ओर देखती रही। राज बख्शी एक गहरी सास लेकर कहने लगे मुझे अपने सगे भाई का कर्ज चुकाना है मेरी भाभी ने——मुझे अच्छी तरह होश भी नही था–जब मेरे साथ सबध जोड लिया था मै बहुत अन्जान था कुछ नही समझा था बस शरीर जलता रहा और मै दिन दिन बुझता रहा '

मूर्ति जाने समझ सकी थी या नहीं राज बख्शी ने ध्यान से उसकी ओर देखा फिर कहा 'उसका जिस साल ब्याह हुआ था उसे उसी साल कोई रोग हो गया था यह बात मुझे बरसो बाद मालुम हुई पर उसे तब से ही पता थी और उसने बच्चे की आस छोड दी थी बहुत छोटे घर से आयी थी सब कुछ अपने पास रखने के लिए सोचती थी कि मै भी उसके बस मे रहू मै कई बरस तक एक रुकी हुई घडी मे वक्त देखता रहा मैने समझा नहीं भाई का दु ख भी देखा लेकिन मै ने समझा नही मुझे अपने भाई का बहुत बडा कर्ज चुकाना है मूर्ति ।

मूर्ति——जो रोज कासे की मूर्ति के समान दिखायी देती थी——हाड-मास की औरत की तरह काप उठी।

राज बख्शी कह रहे थे अब उससे कोई वास्ता नही है पर मेरे भाई का हक उसी तरह है मै बीते हुए बरस लौटा कर नही दे सकता पर आगे से

आगे से ? मूर्ति के होंठ धीरे से हिले।

मेह की बौछार से चारो ओर धुध फैली हुई थी। राज बख्शी गाडी के अदर वाले हलके-से उजाले में मूर्ति के मुह की ओर देखते रहे फिर कहने लगे आओ मूर्ति ! हम अपने अपने कर्ज उतार दे।

"तुम मूर्ति उनकी ओर देखकर कुछ हैरानी-सी अपनी ओर देखने लगी जैसे अपने आपको उनकी आखों से देख रही हो

राज बख्शी ने 'हां' मे सिर हिलाया।

मूर्ति को शायद इस 'हां' की एक बार और जरूरत थी, मुह से निकला, और रुकी भी ?"

राज बख्शी ने मूर्ति के माथे के पास सिर झुकाकर उसके माथे को ऐसे चूमा कि मूर्ति को लगा —— उनकी 'हाँ' उसके विश्वास-जितनी हो गयी थी।

जा रे एकाकी
-शिवानी-

एक साथ ही मुझे अपने स्नेही पाठिकाओं के दो निमंत्रण मिले थे, किन्तु कैसा विरोधाभास था।

एक ओर समृद्ध क्लब के दर्शनीय लॉन के कतारबद्ध भव्य गाडियाँ, गाडियों से उतरती महिमामयी महिलाओं के हवा में फहराते चंदेरी, कोटा और चिकन के दामी आँचल और आँचलों से उठती सुगंधि की मदिर लपटे रंगीन निश्चित कहकहों के बीच परिवेशन में दस बैरे हाथ बाँधे इधर उधर घूम रहे थे। दीवार पर लगी संगमरमरी शिला की ओर मेरी दृष्टि स्वत ही उठ गई। छोटी-सी शिला पर क्लब की सरंक्षिकाओं के नाम खुदे थे और उनके बीच तो शायद अवध की पूरी ताल्लुकेदारी ही आकर बिखर गई थी। देखते ही देखते दूधिया धुली चाँदनी पर इन्द्रसभा उतर आई। रंगीन लाल चमकती कारचोबी की टोपियाँ कव्वाली मे झूमने लगी। अनभ्यस्त हाथो की संगत के बीच सहसा घुँघरू छनके और नृत्य संगीत के अबीर-गुलाल से दिशाए रंग गई।

दूसरा निमंत्रण आया था एक विचित्र खेमे से।

मै वहाँ पहुँची तो लौह-कपाट मुंदे थे।भयावह आकृति के दो मुच्छर सिपाहियो ने मुझे संदिग्ध दृष्टि से देखा, पर मै तो अपने उस विचित्र परिवेश को देख रही थी। क्या यह सचमुच लखनऊ था?दूर-दूर तक फैले बियाबान अरण्य को एक टिट्टिभ अपनी बेमौसमी चीत्कार से चीरता सन्न से निकल गया और मै सहम कर आगे बढी।

आज भी मै अतिथि थी किन्तु कैसी अनोखी बस्ती की।वहाँ का उन्मुक्त आकाश भी शायद उन अभिशप्त बंदिनियों के तप्त नि श्वास से मटमैला पड गया था। पेड थे किन्तु पत्तियाँ थीं पीली बीमार और मुरझाई पास ही एक घनी अमराई भी दिखी पर मुझे लगा उस आम्रकुंज मे कभी कोकिल भी नही कुहकी होगी। लोहे की मोटी-मोटी छडो को पकड कर दोनों सिपाहियों ने किसी बुंदेलखंडी दुर्ग की-सी सुदृढ ड्योढी के द्वार खोल दिए और उस अनोखी अनजानी बंदिनियों के स्नेहपूर्ण सरल आतिथ्य ने मुझे बाहो में भर लिया। मेरी मेजबान थीं वे बंदिनिया जिन्हें भाग्य परिस्थिति एव समाज ने अपने कुचक्र के झझावात में लपेटकर उन चहारदिवारियों मे मूँद दिया था। वहाँ यौवन वात्सल्य प्रेम उमंग आशा

सबका प्रवेश निषिद्ध था बीस वर्ष के जवान सलोने चेहरे पर ढूँढ़ने से भी तारुण्य की झलक नहीं दिख सकती थी। प्रौढ़ा वय भार नमिता वृद्धा लग रही थी,और वृद्धा अर्थी मे बँधी सी,निर्जीव देह लिए अवश, अचल बैठी थी,जैसे बैठे ही बैठे प्राण छूट गये हों, भावनाहीन चेहरा अडिग मुद्रा और परलोक की ओर बँधी टकटकी। एक सौ अस्सी जोड़ा आँखें एकसाथ मेरी ओर उठी और उस अचूक चानमारी से मेरी धज्जियाँ उड़ गई। मैने इधर-उधर दृष्टि घुमाई। सुघड़, स्वच्छ, शालीनता मंडित स्निग्ध नि स्तब्धता ने एक अदृश्य पुष्पहार जैसे मेरे गले डाल दिया। कौन कह सकता था कि यह कारागार है और मेरे सम्मुख नतमस्तक खड़ी उन एक सौ अस्सी बंदिनियो की अधिकांश गर्दनो पर फाँसी का फंदा कभी आते-आते रुक गया है।

"इनमे से अधिकाश खून की सजा भुगत रही है कुछ डकैती और फौज पाकर कोई भी बंदिनी यहाँ नहीं आती, प्राय उन्हे ही यहाँ भेजा जाता है, जिनकी फाँसी की सजा कम्यूट कर दी गई है।" डाक्टरनी ने कहा और मै अविश्वास से उन निरीह चेहरो को देखती रह गई।

खाना मेज पर लगाकर वे पूर्ण अनुशासन के सयम में बँधी किसी फौजी टुकडी के जवानों की भाँति अपनी-अपनी पत्थर की चौकियों पर बैठ गई। न उन चेहरों पर औत्सुक्य था न उन निष्प्रभ आँखों में नारी-सुलभ जिज्ञासा।

"खाना सब इन्होने बनाया है , डॉक्टर ने कहा और मैने मेज पर सजे सुस्वादु भोज्य पदार्थों के सुवासित अबार को ध्यान से देखा। क्या यह सभव था कि जिन्होंने गँडासे से न जाने कितने नरमुडो की कुट्टी-सी काट दी थी, उन्ही के पतिहता हाथो ने ऐसे सुस्वादु देवदुर्लभ भोजन में रस घोला होगा?मोयनदार पूड़ियाँ खस्ता कचौडियाँ कद्दू का वह साक जिसके बिना पूडी कचौडियों का व्यक्तित्व ही अधूरा रहता है रायता और चटनी। भला किस सुगृहणी एव सुपाचिका को आज उन्होंने बुरी तरह नहीं पछाड दिया था ?फिर उन पत्थर की चौकियों पर धरी चमकती काँसे की थालियों मे क्या सहज ही मे पूडी-कचौडियाँ उतरती थीं ?यह तो उनकी दयालु डॉक्टरनी बाई और सहृदय अधीक्षक की कृपा थी जो आज उन्हे मनचाही रसद जुट गई थी फिर दक्ष पाचिकाएँ भला कसर कर सकती थी? फिर भी मैने देखा सम्मुख परसी थाली के बहुप्रतीक्षित व्यजनो को वे न जाने कैसी खोई खोई दृष्टि से देख रही थी। क्या पता, घृत पकवानो की मदिर सुगन्ध उनके स्मृतिद्वार पर जग लगी लगी हो ?न जाने कितने भूले बिसरे विवाह भोज मुडन-जनेऊ सत्यनारायण की कथा और गौनों के चढे कडाहो में तैरती फूली-फूली पूडियो की स्मृति गह्वर बन उनके कठ मे अटक

गई हो ।

खाना शुरू करो तब हम भी खाएगी डॉक्टरनी से हँसकर कहा और कतार की कतार सकपकाकर थालियो पर झुक गई।

उदार अधीक्षक की कृपा से उन बंदिनियों को अनेक सुविधाएँ प्राप्त थीं फिर उनके सौभाग्य से उनकी अधीक्षिका भी एक सहृदय सौम्य विदुषी महिला थीं और उनकी डॉक्टरनी बाई एक लबे अरसे से उनके साथ रह अपराध पर ही शोध कार्य कर रहीं थी। इसी से उनकी आधि-व्याधियो का लेखा-जोखा उनके जिह्वाग्र पर था। यही नहीं प्रत्येक बदिनी का इतिहास भी उन्हे कठस्थ था और उन एक सौ अस्सी सहृदयो की धड़कने स्वय उनकी धड़कनें बन गयीं थी ।अपने सुदीर्घ अनुभव के वाचनालय मे सजी उन रग उडी जीर्ण पुस्तकों के पृष्ठ वे न जाने कितनी बार उलटी जा चुकी थीं।

' वह जो अभी तक आपको पखा झल रही थी हीरा नाम है उसका उसने मुझ से कहा, 'उम्र होगी अट्ठावन के लगभग पर पिछली पन्द्रह अगस्त को आप इसका नाच देखतीं तो दग रह जाती ।ऐसा लग रहा था,जैसे कोई बीस वर्ष की छरहरी नृत्यागना नाच रही है।जैसी ही लोच वैसी ही मोहक नृत्यभगिमा और लास्य कटाक्ष। मैने एक बार फिर उस नृत्य प्रवीणा को देखा। झुर्रियो से भरा एकदम स्याह चेहरा किन्तु उस स्याह चेहरे को अपने खद्योत प्रकाश से पल-पल मोहक बना रही मधुर स्निग्ध हँसी।कभी मुझे पखा झलती कभी पिलगट सी फटकती भागकर गर्म-गर्म पूड़ियाँ ले आती और मेरे लाख ना-ना कहने पर भी थाली मे डाल देती।यही नही मै हाथ धोने उठी तो पानी ही डालने नहीं बढ आई झुककर उसने मेरे हाथ स्वय ऐसे धुला दिए जैसे मै कोई अबोध बालिका हूँ,और स्वय हाथ धोने मे कपड़ों को छींटे डालकर खराब कर बैठूगी।फिर मै कुछ कहती इससे पहले ही वह मेरे जूठे हाथों का पानी आचमन सा पी गई।

'छि छि यह क्या कर रही हो ? मैने कहा।

'बहूजी पाप की गठरी ससुर बड़ी गरू है सिर पर। आप जैसे भले घर की बहू-बेटी का जूठा पानी हमरें गगा-जल है हमारे लिए।

मै लौटकर मेज पर आई और आते ही डॉक्टर से उसका इतिहास पूछा तो स्तब्ध रह गई आज दूसरे घर की बहू-बेटियो की जूठन का आचमन करनेवाली हीरा वर्षों पूर्व अपनी बालिका पुत्रवधू को उसी के पति की सहायता से जिदा जला चुकी थी। पुत्र को हुई थी फाँसी किन्तु उसे फाँसी की सजा से भी अधिक कठोर प्राणदड मिला था आजन्म

कारावास।इकलौते पुत्र की मृत्यु और जघन्य पाप का बोझ, फाँसी का अदृश्य फंदा बन,वर्षों से उसका गला घोंट रहा है और न जाने कब तक घोंटता रहेगा।और फिर साँवली उदास बडी-बडी आँखोंवाली लड़की,जो एक प्रकार से स्वय निरपराधिनी थी किंतु तीन भाइयों की कुटिल साजिश के चक्रव्यूह म फँसकर भाग्य का लिखा भोग रही थी। फौजदारी की सजा काट कर जब वह इस बिरादरी से विदा लेगी तो अनेक आँखे गीली होगी इसमे कोई संदेह नहीं उसकी सुघड सिलाई ने उसे पूरे कारागार की ड्रेस-मेकर बना दिया था। क्रोशिया की लेस मे वह ऐसे-ऐसे गुलाब गूँथकर रख देती थी कि मन करता था, उठाकर सूँघ लो। उस पर कपडों की सिलाईमें तो वह सचमुच ही सुई तोडकर रख देती थी, अपनी सुरुचि की बेजोड बखिया से वह सखियो की भूले-सी जेल की आकारहीन कुरतियो मे,अत्याधुनिका फ्रेंच मॉडल के बॉडी स्टाकिंग'की मरीचिका उभार देती। सजा मिलते ही प्रत्येक बंदिनी के आभूषण उतरवा लिए जाते है और एक-सी सादी धोती-कुर्ती में किसी प्रकार की भी साज-सज्जा की गुजाइश नही रहती। प्रत्येक बंदिनी को केवल अपने सौंदर्य के ही मूलधन पर बडी बुद्धिमानी से काम चलाना पडता है। इधर-उधर दृष्टि घुमाने पर भी मुझे कहीं एक दर्पण नहीं दिखा तो मन भर आया। यह तो किसी भी नारी के लिए प्राणदड से भी कठोर सजा थी। किंतु दर्पण के अभाव मे भी अनेक चेहरो पर प्रतिबिंब देखकर सँवारी गई लुनाई के स्पष्ट हस्ताक्षर थे। सलीके से निकाली गई माँग काली बिंदी जो समवत जली लुकाठी के औदार्य से जुटाकर अनेक ललाटो की शोभा बढा रही थी और आँखो को कर्णचुबी बनाने की सुचेष्टा भी टेढी-मेढी होकर कही नहीं फैल पाई थी। यह सज्जा भला बिना दर्पण के कैसे सभव हुई होगी ? मै यह सोच ही रही थी कि रहस्य स्वय स्पष्ट हो गया। एक साँवली ताड सी लबी युवती जल से भरी बाल्टी में झुककर अपना प्रतिबिम्ब निहार रही थी। मुझे देखकर सकपकाती बाल्टी उठाकर चौके मे चली गई। नारी सुलभ श्रृगारप्रियता को क्या आजन्म कारावास भी कहीं छीन सकता है? जली लकडी के कालिख से बनी कज्जल रेखा कोयला पीसकर बनाई गई मिस्सी या लाल गुलाब की पखुडी काटकर बनाई गई टिकुली क्या जल-पूरित घट दर्पण देखकर नहीं सँवारी जा सकती? खाना खाकर मै अधीक्षिका के साथ विभिन्न कमरो को देखने निकली। दिन-दहाडे भी कैसी मध्यरात्रि की-सी भयावह नि स्तब्धता थी। मोटी-मोटी लोहे की छडो से घिरी चौडी खिडकियाँ और दृष्टि की पहुँच से बहुत दूर छिटक गया आकाश जिसे देखने चहारदीवारी से चढती आँखे स्वय ही थक, परास्त हो फिर नीचे पसर जाती थी। विशाल कमरे को डॉरमेटरी में दूर तक बिछी पत्थर की कब्र-सी शिलाएँ। उन पर काले खुरदुरे कबलो मे लिपटा प्रत्येक बन्दिनी का बिस्तर बडे सलीके से

रखा गया था।

मै सोचने लगी दीवारों पर लिखी गई रघुपति राघव राजा राम पतित पावन सीताराम'की ये पंक्तियाँ क्या रात्रि की उस निस्तब्धता में इन अभागिनियों को शांति दे पाती होगी 'जब उन शिलाओं पर अभिशप्त मस्तक धरते ही उनके जघन्य अपराध, डरावने दु स्वप्न बन तक्षक नाग की-सी घातक कुडली मार उनकी छातियों पर बैठ इनका गला घोंट देते होंगे और फिर इनके अपराध भी क्या साधारण थे? प्रेमी के लिए काटा गया पति का मुड जिंदा जला दी गई पुत्रवधू, डकैती मे की गई कुपुरूषोचित नृशस लूटपाट अबोध बालिकाओं को फुसलाकर हाटबाजार मे बेचने का दु साहस भ्रूण-हत्या और फिर एक ऐसा अमानवीय अपराध जिसे सुन मेरे रोगटे खडे हो गए थे।

दो सगी देवरानी-जेठानी, कुछ समय पूर्व तक एक साथ इसी कारागार में आजन्म कारावास की सजा भुगत रही थी। किंतु दोनों की नित्य की कलह कभी भी गभीर रूप ले सकती थी। इसी से एक को नैनी जेल में भेजे जाने का अनुरोध किया गया था। यदि ऐसा न किया जाता तो यह सभव था कि अवसर पाते ही उन में से कोई भी एक बार फिर हत्या मे सधे अपने हाथ का चमत्कार दिखा सकती थी। अब जेठानी का स्थानातरण कर दिया गया था।

उनकी कहानी जितनी ही रोचक थी उतनी ही भयावह। वर्षों से चल रहे मनोमालिन्य ने पहले जेठानी को ही रणचडी बनाकर जीवन रगमच पर भेजा। देवर समृद्ध था और श्रृगारप्रिया देवरानी पति की समृद्धि का उन्मुक्त प्रदर्शन कर,दिन-रात जेठानी का जी जलाया कर विकट रूप धारण कर लिया। फिर जेठानी पर एक दिन शैतान सवार हो गया।

जिस गर्दन पर हुलसती पचलडी का देवरानी को इतना गुमान था क्यो न उस गर्दन को ही साफ कर दिया जाए?बाँस और बाँसुरी को एक साथ साफ करने के दुष्परिणाम की उसे कोई चिन्ता नहीं थी देवरानी की नृशस हत्या के अपराध में जेठानी को मिला प्राणदड किन्तु गोद के दूध-पीते शिशु को देखकर ही फाँसी का फदा खींच लिया गया अबोध शिशु पुत्र भी माँ के साथ आजन्म कारावास भुगतने लगा। जेल के नियमानुसार छह वर्ष की आयु तक उसे भी अपनी माँ के आतिथ्य का भागी बनना पडा। इस बीच विधुर देवर ने अपनी साली से विवाह कर लिया था। इधर इसका पुत्र भी छह वर्ष का होते ही घर भेज दिया गया था। बडी बहन की हत्यारिणी जेठानी के अपराध को बडे सरल औदार्य से भुलाकर

उसकी नई चाची उसे बडे लाड-दुलार से पाल रही थी कि सहसा अग्निगर्भा जेठानी पैरोल पर छूटकर फिर घर पहुँच गई। पुत्र लाख बुलाने पर भी जेल से छूटी जननी के निकट नही गया। चाची का आँचल पकड छिप गए पुत्र को देखकर जेठानी की हाडमज्जा भस्म हो उठी। जिन आभूषणों से दमकती देवरानी की ग्रीवा को उसने मूली-सा काट दिया था, वह तो जैसे फिर उसी धड पर उग आयी थी। फिर इस बार तो उस धड का दु साहस और भी बढ गया था। इस बार तो अभागी ने उसकी कोख का बेटा ही उसका दुश्मन बना दिया। जाने की वेला निकट आयी तो वह क्रोध और विवशता के अधड में भटकती एक बार फिर अधी बन गई। जेल के परिवेश की सान मे जिह्वा की कतरनी उसने ऐसी तेज बना ली थी कि घर भर के लोग एक- एक करके उसके जिह्वा-प्रहार से घायल हो चुके थे। अब उसने देवरानी को खूब जली-कटी सुनाई।

"जैसे तेरी बहन को साफ किया ऐसे ही एक दिन आकर तुझे भी साफ कर जाऊँगी, समझी ?खबरदार जो मेरे ननकू को फुसलाया। मै क्या नहीं समझती कि तू उसे दूध-जलेबी खिला-खिलाकर क्यो फुसला रही है?चुपचाप किसी दिन कत्ल कर देगी उसका।" यह सुनते ही उसके नन्हे पुत्र ने स्नेही चाची से कन्नी काट ली। चाची का क्रोध उतरा नन्हे भतीजे पर। जेठानी वापस जेल पहुँची भी नहीं थी कि बेटे का कत्ल हो गया।

हत्या की थी स्वय चाची ने। फिर विधाता ने न जाने क्या सोचकर दोनो को प्राणदड से भी अधिक कठोर दड दिया एक साथ एक ही कारागार में आजन्म कारावास। यह सचमुच ही दोनों के लिए बडी भारी सजा थी। उठते-बैठते दोनों एक दूसरे को अदृश्य भाले-बरछियो से छेदने लगीं। अब जेठानी नैनी जेल भेज दी गई थी किन्तु पश्चाताप का असाध्य कैसर देवरानी को घुला रहा था।

"इससे तो मुझे फाँसी ही मिल जाती तो अच्छा था रात रात को उठ कर बैठ जाती हूँ कान के पास आकर दुश्मनिया कहने लगता है- चाची ओ रे चाची ! "

सुना—जिस कमरे में उसने बालक की नृशस हत्या की थी वहाँ इतना अँधेरा था कि दिन मे भी पुलिस ने मशाल जलाकर लाश के टुकडे बरामद किए थे।

किन्तु उसी कारागार मे पश्चाताप की ज्वाला से अछूती बंदिनियाँ भी है।

एक कमरे मे हाथ बाँधे राजमहिषी-सी ऊँची खडी अगली नाजमती ने मुझे देखते ही बडी अवज्ञा से उदासीन दृष्टि का थप्पड-सा मार, अपनी मराल ग्रीवा फेर ली। क्या रग था और कैसी खड्ग के धार-सी नासिका। उसके उसी अभद्र अशिष्ट आचरण के कारण

संभवत उस दिन सहभोज में सम्मिलित नहीं किया गया था। सर्कस की किसी अपसिधी सिंहिनी-सी ही वह खूंखार नरभक्षिणी कभी भी दर्शकों पर झपट सकती थी। इसी से उसे बाहर रिंग में लाना शायद अधिकारी वर्ग को खतरे से खाली नहीं लगा होगा उन कजी आँखों में एक हिंस्र वन्य लपट देखकर मैं काँप गई उसे सहभोज से वंचित रखा गया था किंतु उस सामान्य दण्ड से सुन्दर चेहरे पर एक शिकन भी नहीं उभरी थी। यह तो कारागार नहीं जैसे महाराजा छत्रसाल की पटरानी का अन्त -पुर था,और असत्य अदृश्य चेरी-बंदियों से घिरी बड़ी रानी सरकार प्रभुता के मद में झूमती टहल रही थीं। पहली झलक में मुझे वह बीस वर्ष की युवती-सी ही छरहरी लगी किंतु गौर से देखे जाने पर उस छलनामयी गतयौवना का बहुरूपी उत्तरीय खिसक गया। इस बार शायद उसके नारी-सुलभ औत्सुक्य ने उसके बनावटी गाम्भीर्य पर विजय पा ली। कनखियों से वह भी हमें देखने लगी और उस काकदृष्टि में कुटिल चेहरे की एक-एक भाज स्वयं खुलती चली गयी। व्यंग्यात्मक बंकिम स्मित में उसने क्रूर स्वभाव के द्योतक पतले अधर खिंचकर रह गए जैसे पूछ रही हो-क्यों क्यों देखने आई हो हमें ?क्या हम किसी चिड़ियाघर के नुमाइशी पशु-पक्षी है?

जैसा जीवन जिया हो उसकी छाप मानव के चेहरे को सचमुच ही अपने रंग में रँग देती है इसमें कोई संदेह नहीं। मिस्सी लगे दाँतों की क्षणिक चमक नुकीले तेवर ठोढ़ी का गोदना और कजी आँखों में छिपी कुटिल बरछियों की झलक दिखाकर उसने फिर पीठ फेर ली। मैं आगे बढ़ गई।

अब भी इस उम्र में इतनी सुन्दर है तो अपने यौवन काल में यह कितनी सुन्दर रही होगी मैंने उसकी अधिक्षिका से कहा तो वह हँसकर बोली—– सुन्दर? काश इसके सुन्दर चेहरे-सी ही सुन्दर इसकी केस हिस्ट्री भी होती। किन्तु वह तो है एकदम विपरीत कदर्य कुत्सित ही नहीं, कलंकमंडित। न जाने कितनी डकैतियों में डाकुओं की निर्भीक संगिनी बन वह कितने ही हरे भरे घर उजाड़ चुकी थी। यही नहीं अब भी उसके प्रशंसकों का अभाव नहीं था। सबसे अधिक मिलने वाले इसी के पास आते है। इससे बीस वर्ष छोटा एक' सुदर्शन ठाकुर अभी कुछ ही दिन हुए इससे मिलने आया था टोकरी भर मेवे लेकर इतने सारे मेवे एक साथ किसी भी बंदिनी का नहीं दिए जा सकते। हमने कहा—कारागर के नियमानुसार आप इसे केवल अभी खाने भर की सामग्री दे सकते है। तब हँसकर इसके छोकरे प्रेमी ने अपनी ही उपस्थिति में इसे सारे मेवे खिला दिए। मुझे उस प्रत्युत्पन्नमति पठान की कहानी का स्मरण हो आया जो साथ में एक मोटा दुंबा लेकर यात्रा कर रहा था। टिकट चेकर द्वारा दुंबे का टिकट मांगे जाने पर उसने तत्काल वहीं दुंबे को काट-कूट

उदरस्थ कर लिया था। निश्चय ही उन प्रौढ कपोलो की लालिमा मे उन पौष्टिक मेवों की ललछौंही आभा एक लम्बे अर्से के लिए रिसकर रह गई थी।

'अभी तो आप उससे मिली ही नहीं।" दक्षिणी डॉक्टरनी का आनदी चेहरा बचकाने उत्साह से रँग गया। मुझे भी जैसे उस उत्साह की छूत लग गई और मै उतावले कदमो से चौके की ओर बढी। छोटा सा धुएँ से भरा चौका किसी भी सुगृहिणी के चौके-सा साफ-सुथरा और पकवानों की सुगध से सुवासित था। एक बडी-सी कढाई मे घुटनों तक धोती चढाए दो लबी तातार-सी औरतें पूडियाँ तल रही थीं। सहसा धुएँ की कुहेलिका को चीरती वह अपने दो गुलगोयने हाथ जोडकर खडी हो गई।

'यह मेम साहब तुम्हारे ही देश से आई है चनुली, उसकी अधीक्षिका ने कहा और उसने एक लजीले दृष्टिपात से मुझे बीधकर आँखे झुका लीं।

"क्यो चनुली, किस गाँव की हो तुम ? मैने हँसकर पहाडी मे पूछा। पर मै क्या जानती थी कि उसके बिछुडे देश की भाषा मे पूछा गया मेरा निर्दोष प्रश्न नश्तर बन उसी क्षण उसके पके नासूर को बेरहमी से चीर देगा।

दोनों हाथो में मुँह ढाँपकर वह फफक-फफककर रोने लगी तो मै अप्रस्तुत हो गई।

बहुत दिनो बाद आपके मुँह से अपनी भाषा सुनकर ही शायद बेचारी अपने आप को नहीं रोक पाई। वैसे यह कभी रोती नहीं। डॉक्टरनी ने अग्रेजी में कहा और फिर बडे चातुर्य से प्रसग बदल दिया अच्छा चलो चनुली हमको काम है तुम मेम साहब को स्कूल और पूरी जेल दिखा लाओ।

मेरी अनजान उपस्थिति में अचानक ऐसे टूटकर बिखर जाने से चनुली जैसे मेरी ओर आँखें उठाकर देख नहीं पा रही थी। आँखे पोछकर नीची नजर किए ही बोली 'आइए? ' और मै नि शब्द उसके पीछे-पीछे चलती एक बार फिर जेल की परिक्रमा कर गई। बच्चो की कक्षा देखी तो मन भर आया। किन्तु क्या यह सचमुच बच्चे थे। छह वर्ष के भोले निष्पाप चेहरों पर छब्बीस वर्ष के अनुभव की छाप थी। बेरौनक उदास चेहरो मे जडी पीली आँखों में क्षण भर के लिए किसी दम तोडती टार्च के नन्हें-नन्हें बल्ब की-सी ही चमक आई, फिर दप -से बुझ गई। नन्हें-नन्हे हाथ हिला हिलाकर उन्होंने मुझे कविता सुनाई गाने गाए, चाबी खतम हो रहे लट्टू की भाँति एक-दो ने गोल-गोल घूम सक्षिप्त नृत्य प्रदर्शन भी किया किन्तु मुझे लगा वर्षों पूर्व बचपन मे देखे राजस्थानी कठपुतलियो के किसी कठपुतले का नाच फि का अपूर्व अभिनय करता, धडाम से गिर फिर उठ गले में बँधा सार्डिन का टीन

पीट सीटियों मे गाने लगता था—थोडी-थोडी और बजेगी।

छह वर्ष का होते ही जब उन्हे पिता या अभिभावको के पास भेज दिया जाएगा, तब जननी का यह अवाछनीय सान्निध्य क्यो उनके लिए अनिवार्य है मेरी समझ में नहीं आया। कैसा ही आदर्श कारागार क्यो न हो इन अबोध शिशुओं के कोमल मन पर क्या इस परिवेश का छाप सदा के लिए नही पड जाती होगी?

मैने एक बार फिर उन्हें देखा और सहमी दृष्टि फेर ली। मुझे लगा जैसे फूलदान मे यत्न से लगाए गए उन कोमल पुष्पो की पखुडियाँ छूते ही झरकर बिखर जाएँगी।

'शायद आप चनुली से एकात मे बाते करना चाहेगी,' दयालु जेलर मुझे अपने कमरे मे छोड आई। छोटा-सा साफ-सुथरा हवादार कमरा चारों ओर से खुला था। चनुली चुपचाप मेरे पैरो के पास आकर बैठ गई जैसे मेरी बहुत दिनो की बिछुडी पालतू बिल्ली हो।

नि स्तब्ध कमरे की नि सीम शून्यता के बीच मै थी और मेरे पैरो के पास बैठी चनुली। ठीक ही कह रही थी अधीक्षक की पत्नी। जैसा ही रूप है वैसा ही आचरण 'आश्चर्य होता है कि ऐसी सत बालिका ने भी किसी के प्राण लिए होगे।' चनुली का करूण इतिहास मै उन्हीं से सुन चुकी थी पर स्वय चनुली के मुँह से सुना तो फिर कुछ कह नहीं सकी।

उत्तराखड के सीमावर्ती आसपास बसे दो ग्रामों मे ही उसका मायका और ससुराल थी। विवाह हुआ था स्वय पति की इच्छा से। अपने सीढी से बने खेत पर खडे उस बाँके कुमाउँनी जवान ने सुदरी चनुली को बकरियाँ चराते देखा था। निर्णय लेने मे फिर उसने विलब नही किया। किन्तु पुत्र जब जननी को पुत्रवधू चयन के जन्मजात अधिकार से वचित करने की धृष्टता करता है तो कभी पढी-लिखी जननी का चित्त भी विद्रोह कर उठता है फिर वह तो एक अपढ ग्राम्या माँ थी। विवश होकर बहू ले तो आई किंतु उसे स्वीकार नहीं कर पाई। आए दिन गृह-कलह की आतिशबाजी से ग्राम का आकाश रगीन बनने लगा और आनद उठाने के लिए प्रतिवेशी परिवारो की भीड जुटने लगी। इसी बीच सीमात के चीनी युद्ध ने नवेली चनुली के फौजी पति को भी बुला लिया। वह गया और फिर नही लौटा। पुत्र की अकाल मृत्यु ने कर्कशा सास को जीती-जागती तोप बना दिया और वह दिन रात आग उगलने लगी 'कुलच्छिनी तू ने ही मेरे बेटे को खा लिया' चनुली की एक प्रतिवेशिनी उसकी सास के तोपखाने के लिए नित्य बारूद जुटाती थी। सुबह-सुबह चनुली नई दराँती लेकर घास काटने निकली तो वही झगडालू पडोसिन जानबूझकर ही उसके पीछे हो ली। मार्ग भर वह उसको छेडती गई। छौंक लगा रही थीं उसकी अन्य सखियाँ। चनुली ने गले का मगल-सूत्र

और नाक की फुल्ली न उतारने की धृष्टता की थी। इसी से नारी वर्ग ने उसका बहिष्कार कर दिया था। अभियान की अगुवा थी वही कर्कशा प्रतिवेशिनी। 'यह श्रृंगार क्या रॉड रडकुली औरत को शोभा देता है? वहाँ बुढिया बेटे के लिए पागल हो रही है यहाँ इस मुई का यह चरित्तर है।'

"दिदी", चनुली का गला रूँध गया, "मेरा मन कहता था कि वे जिंदा है, और मेरा मन कभी झूठ नहीं बोलता इसी से मै चरयो फुल्ली नहीं उतारती थी, और क्या मै सजने-धजने के लिए यह सब करती थी?फिर उसी रात को मैने उन्हे सपने मे देखा था। मन भारी था उसने मुझसे ऐसी बात कह दी तो मै क्रोध से पागल हो गई खींचकर मैने दराँती उसकी ओर फेकी। मै क्या जानती थी दिदी, कि एक ही चोट मे उसकी गर्दन ऐसे लटक जाएगी?

चनुली ने अपनी निर्दोष आँखे मेरे चेहरे पर गड़ा दीं यदि मै न्यायाधीश होती तो उसी क्षण उन निर्दोष आँखो की गवाही ही को सत्य मान, उसे मुक्त कर देती। कैसा भोला निष्पाप चेहरा था, और निष्कपट कैशोर्य का कैसा सरल आत्मनिवेदन!

"फिर? मैने साँस रोककर पूछा।

"फिर खून का फव्वारा-सा छूटता देख मै भागकर घर आ गई, पर सबने तो मुझे देख लिया था। उसी दिन मुझे अल्मोड़ा ले आया गया।'

'क्यो किसी ने क्या तुम्हारी जमानत नहीं दी? मैने पूछा।

'मेरी जमानत कौन देता? उसने अपनी एक लम्बी साँस खींचकर कहा, "मैने खून किया था, वह भी बरमहत्या। वह ब्राह्मणी थी अकेली मेरी माँ ही रोती-रोती बस के पीछे बहुत दूर तक भागती आई थी।

'फिर मुकददमा चला, मुझसे बार-बार पूछते 'तुमने उसे दराँती मारी थी?" 'हाँ जी मारी। मै कहती। तब तुम जानती हो लडकी, कि तुम्हीं ने उसका खून किया है -नहीं साब, मैने खून नही किया वह तो मुझसे हो गया।' "

उसने फिर बड़े भोलेपन से अपने कथन की पुष्टि के लिए मेरा हाथ कसकर पकड़ लिया।

'आप ही बताइए दिदी मै झूठ बोलती ?खून क्या मैने जानबूझकर किया था?वह तो मुझसे हो गया था। यह जो मुझसे हो गया की मिठास और निरीह भोली भोली कमनीयता पहाडी भाषा मे है उसे ग्राह्य करने की क्षमता यदि उस न्यायाधीश में होती, तो निश्चय

ही वह उसे छोड देता।

पुण्यतोया भागीरथी सलिल-से पवित्र अश्रुजल से छलछलाते, विकसिताबुज नेत्रपत्र पद्रह दिन के सक्षिप्त हनीमून की मधुर स्मृति का उल्लेख करते ही थरथरा रहे रसीले अधरद्वय और सुडौल काचन-सन्निभ देहयष्टि 'एक अकेली चनुली ही उस कारागार की ज्योतिपुज बन आलोकित कर सकती थी। वह अब जेल की सर्वश्रेष्ठ सुदरी ही नही अपने अनुकरणीय आचरण से अपूर्व लोकप्रियता भी प्राप्त कर चुकी थी। इधर उनके उदार अधीक्षक ने बडे साहब से उन्हे गाइडिग की सुविधाएँ भी उपलब्ध करा दी थी नीली साडी और गाइडिग का बिल्ला लगाए मुडे कफ की कुर्ती मे चनुली किसी द्युतिमान तारिका से कुछ कम आकर्षक नही लगती थी। उसे पहले प्राण-दड ही मिला था क्योकि उससे अनजाने मे हो गई हत्या भी नृशसता के दायरे मे आती थी। छिन्नमस्ता प्रतिवेशिनी ने अपनी गर्दन धड से दूर छिटका उससे चलते चलते भी प्रतिशोध ले लिया था। किंतु उस कमनीय चेहरे की लुनाई ने स्वय ही उसकी पैरवी की। ससार का कौन जल्लाद भला उस चेहरे पर नकाब की यवनिका डाल फाँसी का फदा खीच सकता था ?आजन्म कारावास का काला कबल ओढ वह पहली नैनी रही फिर अपने सौम्य आचरण का पासपोर्ट दिखाकर आदर्श कारागार मे प्रवेश पा गई। इसी बीच किसी हिन्दी फिल्मी नायक की भाँति उसका प्रणयी पति सहसा आकर उपस्थित हो गया। पद्रह दिन की सहचरी के क्षणिक साहचर्य की मादक स्मृति उसे पागल बना गई उसने उच्च न्यायालय मे अपील की। यदि दयालु न्यायाधीश उसकी पत्नी को छोड दे तो वह उसे ग्रहण कर लेगा। दोष उसका पत्नी का नही था उसकी कर्कशा प्रतिवेशिनी ने ही उसे उकसाया था।

एक विदेशी उक्ति है कि प्रेमी से समस्त विश्व प्रेम करता है। सुप्रीम कोर्ट ने चनुली की सजा चार वर्ष की कर दी। इस बीच वह बराबर अपनी बदिनी सहचरी को रसपगे आश्वासनपूर्ण पत्र लिखता रहा।

क्या वह तुमसे मिलने भी आया? मैने पूछा।

'नहीं मेरी सास ने उन्हे आने नहीं दिया मुझसे मिलने आते तो पूरे गाँव को खिलाना पडता। पर उनकी चिट्ठियाँ   अधूरे वाक्य के बीच ही उसका चेहरा गुलाबी पड गया। दोनों घुटनो में सिर डालकर वह चुप हो गई। उसके अनकहे वाक्य से ही मै समझ गई कि उन मधुर रसीली चिट्ठियों में ही उसने अपने खोए पति को फिर पा लिया है। 'किन्तु इधर दो सालों से उसकी एक भी चिट्ठी नहीं आई एक बार जेठजी ही आए थे।

"तुमने उनसे पूछा नहीं? मैने कहा।

'पूछती कैसे दीदी, मुझे शरम जो आती थी।"

पहली बार मैने उसके पीले चेहरे पर मधुर लजीले स्मित की प्रेमछाया-सी देखी। उस अँधेरे कमरे मे भोले चेहरे को क्षण भर के लिए दर्शनीय बना गई उस मोहक मुस्कान को देख, मै पलक झप- झपाते ही समझ गई कि क्यो प्राणदड पा गई प्रेयसी को छुडाने उसके पति ने अपील की होगी।

मै जानती हूँ दिदी, उन्होने दूसरी शादी कर ली होगी यही सोचती हूँ। दो साल तो कट गए है दो साल और है। पर छूटकर कहाँ जाऊँगी मै? कभी मिलते तो यही पूछती। जब ले ही नहीं जाना था तो मेरी सजा कम क्यो करवा दी? अब तो यही मेरा मायका यही ससुराल है। सच पूछो तो मुझे मायका ही अच्छा लगता है। यहाँ जब आई तो पढना नहीं जानती थी। अब पढना सीख गई हूँ। दिन भर तो काम में कट जाता है पर रात नहीं कटती। चैत आता है तो सोचती हूँ, काफल पका होगा, घर-घर भेटुली'बन रही होगी। बैसाख मे सेब खुमानी वाली हवा चलने लगेगी और माघ-पूस मे बरफ ही बरफ- कभी-कभी तो सारी रात बरफ ही के सपने दिखते रहते है।'

"चनुली मै इस गर्मी मे पहाड गई तो तुम्हारे गाँव भी जाऊँगी। कहती हो, अल्मोडा से दो घंटे का रास्ता है। क्या नाम है तुम्हारे गाँव का और तुम्हारे पिता का?

बर्फीली हवा के दिवास्वप्न भग हो गए। फलो से गदराए खुमानी आडू के पेड सहसा मेरे प्रश्न के वज्रपात से धराशायी हो गए। उसका चेहरा फीका पड गया।

'जिस गाँव से रिश्ता ही टूट गया उसका अब क्या नाम लूँ दिदी ' वह बोली 'बाबू के नाम पर तो उसी दिन कालिख पोत आई कसम खाई थी कि अब इस पापी मुँह से उनका नाम कभी नहीं लूँगी। पर और पता बता सकती हूँ। ब्राह्मण है गाँव के पधान है चौरवानी पट्टू का भूरा कोट और काली गबरून का बद पाजामा पहनते है। ऐनक लगाते है एक कमानी डोरी से बँधी है। घर के दायीं ओर की पगडडी शिवालय से होकर ठीक हमारे 'ग्वाल'में उतरती है। सामने तीन मीहिल नाशपातियों के पेड है और पिछवाडे एक कागजी अखरोट का जगी पेड भी है।"

चनुली ने एक साँस में अपने गाँव का पूरा नक्शा उगल मेरी ओर बडी आशा से देखा। फिर उसे लगा, शायद कुछ कसर रह गई है। रुक-रुककर वह फिर कहने लगी 'बाबू मेरे एकदम गऊ है शात किसी से कुछ नहीं कहते। देवरजी का भी जनेऊ नहीं हुआ। इसी से

दो चोटियो की लटी करते [redacted] शकल इनसे बहुत मिलती है पर रग इासे बहुत गोरा है।

फिर उसने धीमे स्वर में पूछा अब तो आप ढूँढ लेंगी ना?

पर क्या मै ढूँढ पाऊँगी?

उत्तराखड की गोरखधधे-सी दुरूह ज्यामिति में भूरा कोट और काले गबरून का बद पाजामा पहने उस गऊ-से शात पधान को क्या मै सहज में ढूँढ पाऊँगी जिसकी तागे से बँधी एक कमानी वाली ऐनक के नीचे धुँधली आँखो मे एक गोल पीले चेहरे का करु चित्र बार-बार उभरता विवश अश्रुजल के बीच डूब जाता?कुमाऊँ के असख्य घटो के बीच क्या मै उस घट को ढूँढ सकूँगी जिसके दाई ओर से मुड गई पगडडी शिवालय से होती ठीक उस'म्वाल'मे उतरती है जहाँ सामने तीन मीहिल नाशपातियो के पेड है और पिछवाडे एक जगी कागजी अखरोट जहाँ दो चोटियों की लटी लटकाए उसकेगोरे देवरवा' का चेहरा एकदम उसके साँवरे प्रीतम से मिलता है?

और कुछ ? मैने अपनी विवशता को एक लबी साँस से दबाकर पूछा। हाँ दिदी! वह अब बडे उत्साह से मुझे अपने मायके की देहरी से अल्मोडा कचहरी की ओर खीच ले चली 'वहाँ से अल्मोडा कचहरी जाकर मेरा एक काम और कर देना। जब मुझे अल्मोडा ले जाया गया तो मेरे सब गहने खुलवा लिए गए थे पर चरयों' (मगलसूत्र)मैने नही खोलने दिया नाक की फुल्ली उतारने लगे तो मै हाथ जोडकर बहुत गिडगिडाई पर पटवारी ज्यू बोले 'पगली जेल मे क्या सोहाग धरम का शगुन-अशगुन चल सकता है? यह क्या आज तेरे ही गहने खोले जा रहे है?यहाँ तो रानी-महारानी भी जेल जाएँ तो उनके गहने भी खुलवा लिए जाते है। फिर फुल्ली उतारकर पत्थर पर धरी तो मैने पैर पकड लिए। आप तो पहाडी है जानती ही होगी कि सोहाग कहीं पत्थर पर धरा जाता है?

हाँ मै जानती थी मगलसूत्र लौंग या चूडी पत्थर पर धरे जाने का श्राप, कुमाउँनी सधवा के लिए सबसे घातक श्राप है-तेर चरयो ढुग में धरी जा इससे बडी गाली भला और क्या हो सकती थी?

'तब पटवारी ज्यू ने कहा था अभी सब गहने गिनती होकर रजिस्टर मे चढते ही तिजोरी मे धर देगे रोती क्यो है? तुम जरा जाकर अपनी आँखो से देख लेना दिदी मेरी फुल्ली ठीक से धरी है या नहीं।

अब तक जिस गह्वर को मै बडी देर से घुटक रही थी वह सहसा कठनली में एक मुक्का मारकर बाहर निकलने को व्याकुल हो उठा। पते ने आँखें फेर ली थीं हृदयहीन समाज के

द्वार, बंदिनी के मुक्त होने पर भी उसी निर्ममता से मुँदे रहेगे, फिर भी सवा रुपये की फुल्ली के प्रति ऐसा मोह!क्या यह भोली सावित्री इसी फुल्ली के बल पर अपने सत्यवान को लौटा पाएगी?

"मैने सुना तुम बहुत अच्छा गाती हो चनुली। बहुत दिनो से पहाडी गाना नही सुना।' मैने करुण प्रसग का पृष्ठ स्वेच्छा से ही पलट दिया।

उसकी आँखो मे एक अनोखी चमक आई, फिर उसने अपनी स्वाभाविक लजीली चितवन से मुझे देखकर आँखें झुका लीं।

"पन्द्रह अगस्त को तुमने सुना, एक बहुत ही बढिया पहाडी गाना गाया था नही सुनाओगी क्या? मैने उसे किसी बच्ची की भाँति फुसलाया। वह कुछ झिझकी फिर पहाडी दुनाली मुरली—सी ही मीठी पतली आवाज कारागार के कठिन कपाटों से टकराकर गूँज उठी-

पल्टनो को बाजो
बाजन लागो

झोला समलोटा
सजन लागो

ओ मेरी इजा
पकै दे खीरा

लडना हूँ जाछ
कुमय्याँ बीरा।

(पलटनिया बाजा बजने लगा है फौजी झोले-समलोटों से सजा वीर रणबाँकुरा युद्ध मे जा रहा है- अरी मेरी माँ तू जल्दी खीर तो पका दे तेरा कुमय्याँ वीर लडने जा रहा है।)

उन सूजे पपोटों के नीचे झपकती रेसमी पलको में पैर रखता क्या सचमुच ही उसका कुमय्याँ वीर खाकी वर्दी पहने परेड करने लगा था?

बाहर लू की प्रचड लपटें उठ रही थीं, किन्तु मुझे लगा खुली खिडकी से मुट्ठी भर देवद्रुमो की शीतल बयार आकर बिखर गई है। किसी छरहरी किशोरी-सी कृशोदरी सुँआल' नदी को देखती मै नैनीताल से अल्मोडा जा रही बस में बैठी हूँ। सामने है काकडी घाट की सुरम्य घाटी और घाटी की गोद में बिखरा देवालय। बस बल खाती चली जा रही है। सरल

सहयात्रियो के बीच बिखरी पोटलियाँ पोटलियों के बीच बिखरा सेब की पेटियो का वैभव और पेटियो की दरार से आती सेब की मादक सुगन्धा दूर-दूर तक फैली पर्वत-श्रेणियों से ही टकरा-टकराकर क्या वही-सी मिठठी कठ की मधुर गूँज उठ रही थी? "पस्टनो को बाजो बाजन लागो, भोला तमलोटा बाजन लागो। ' अचानक मैं चौंकी। कमरे में क्या अब हम दोनो अकेली रह गई थीं?चनुली के मीठे स्वर का जादू न जाने कब, कारागार की बंदिनियो को उस कमरे मे खींच लाया था। मीठे स्वर के जादू ने, किसी चतुर मेकअप मैन की-सी तूलिका से एक-एक का चेहरा रँगकर बदल दिया था। काली हीरा, उदास आँखोंवाली माया दाँतों में सोने की कील ठुकी पिथौरागढ निवासिनी वार्डर सबके चेहरों पर बद्री-केदार से लौट रही वैष्णवियों की-सी ही सात्विकी स्निग्धता उतर आई थी। मै उठ गई।

'क्या आप इनसे दो शब्द नहीं कहेंगी? ' अधीक्षक की हँसमुख पत्नी ने मुझसे पूछा।

'नहीं " मैने गर्दन हिला दी पक्षपात के किसी आकस्मिक झटके ने मेरी वाणी हर ली थी। वाणी होती भी तो मै किस भाषा मे उनसे दो शब्द कह सकती थी?वहाँ जो भाषा ग्राह्य थी आँखों ही आँखों में उसी भाषा के माध्यम से मै उनसे विदा लेकर बाहर आ गई। एक क्षण के लिए उन्मुक्त आकाश भी मुझे अनचीन्हा लगा। सामने की विराट ड्योढी फिर बन्द हो गई किन्तु खिडकी बन्द होने से पहले मेरी उतावली दृष्टि स्वय ही मुँद रहे कपाटो पर जड़ गई। दो अश्रुसिक्त आँखों को पहचानने में मैने भूल नहीं की।

दो साल और है दिदी फिर कहाँ जाऊँगी? उसका प्रश्न बार-बार मेरे कानों में बज रहा था। वर्षोंपूर्व आश्रम के लोकप्रिय नेत्रहीन गायक कालू ने छातिमतला की एक सगीत सभा मे अपने एक अपूर्व गीत से श्रोताओं को झुमा दिया था, आज उसी मिश्री घुले कठ-स्वर की स्मृति मुझे चनुली की अश्रुसिक्त आँखों के मूक प्रश्न का उत्तर सुझा गई।

छिन्न शिकल पाये नीये।
रे पाखी
जा उडे जा उडे जा रे एकाकी

(अरे पछी छिन्न श्रृखला पाँवों मे लेकर तू अब एकाकी ही
उड जा)



धागा ज्यूँ टूटे
-सरोज कौशिक-

पत्थर पर इस्पात का घरघराता शब्द-खस-खस-खसा चुभती हुई धड़धड़ाहट को माटी की कुंडिया से रंग भरे पानी के छींटे दे-देकर नरम करने की कोशिश। इस कोशिश तक एक चुप्पी-व्यापती हुई। फिर वही बेसुरी खस-खस की आवाज और उसके साथ रामदास जुलाहे का स्वर'अबकि बार पार करो नद के दुलारे।

आज सुबह से यही गुनगुनाहट है। होता है- कभी-कभी ऐसा भी होता है जब किसी गीत या किसी भजन की एक कड़ी गले से लिपटी रहती है। घूम-फिरकर उसी कड़ी को गुनगुनाते चले जाना। आज रामदास के गले से भजन की यह कड़ी छूट ही नहीं रही। अनमनापन है तो क्या 'नारायण इच्छा मान लेने पर मानसिक अस्थिरता का असर नहीं होता। वही तो सब कुछ है-मनुष्य तो निमित्त मात्र। कालक्रम के बहाव में तिनके समान। बहते-बहते कहाँ जा पड़े कोई ठौर ठिकाना नहीं।

जीवन यात्रा के आरंभ और शेष का एक-दूसरे से तादात्म्य भी नहीं। करघे पर चढ़ी साड़ी के ताने-बाने की तरह रामदास का पिछला हिस्सा जितना जगर मगर है-आगे का हिस्सा उतना ही मटियामेट। बुनावट की चतुराई में रंगों का सही तालमेल न होने पर साड़ी के पल्लू के छपे के बिगड़ जाने की तरह। उस्ताद बुनकर होते हुए भी रामदास अपनी चदरिया का तानाबाना सही तरह से बुनने में असफल रहा। वह भी नारायण इच्छा। उनकी अनुकम्पा से सुख-दु:ख आते है, दिन और रात की तरह। पानी के छींटे डालने के बाद करघे की किटकिनी पकड़ने के साथ ही फिर वही परिचित स्वर खस-खस-खसा। कंठ-स्वर के साथ करघे की आवाज में कोई संधि नहीं। दोनो एक दूसरे के विपरीत।एक कर्ण कटु दूसरा श्रुति मधुर एक में रोष भरा घर्षण तो दूसरे में आत्मनिवेदन। जीवन का तीन चौथाई बीत जाने के बाद अब इस चौथे और आखिरी काल में आत्मनिवेदन का भाव ही गहरा गया था। नारायण कब बेड़ा पार करेंगे बस उसी ओर भावना स्थिर।

रामदास के पिता की देह माटी हुई थी पचास कम एक उम्र में। सजी सजायी गृहस्थी से हसते-हसते ही विदा हो लिए थे। दो-दो बेटियों के कन्यादान का परमसुख भी उन्हें प्राप्त हुआ। छोटी का विवाह रामदास के हाथों हुआ। रामदास की मा ने लंबी उम्र पायी थी लेकिन

रामदास को विश्वास था कि वह भी अपने पिता की ही तरह भरे-पूरे घर-ससार से बडे तृप्त चेहरे से विदा लेगा लेकिन ऐसा हुआ नहीं। रामदास के हिसाब का जोड गलत हो गया।

नारायण इच्छा जानने मे रामदास को कोई खास देर नहीं हुई। वह शीघ्र ही जान गया कि उसके

रामदास यह भी समझ गया कि सजी-सजायी गृहस्थी से उठने का भाग्य उसके ललाट पर नहीं लिखा। लिखा होता तो क्या उसका इकलौता बेटा चरणदास अपनी गर्भवती पत्नी एव बूढे बाप को पीछे छोड ससार त्याग जाता ?बुढापे के आखिरी भरोसे को यूँ छूटते और अपनी आखों की जोत को अधकार मे डूबते देख आसमान की ओर नेत्र टिकाये करुण स्वर से अपने नारायण से रामदास ने पूछा था ' नारायण, इतनी बडी चोट खाकर मै जिदा रहूँगा?

लेकिन रामदास जिदा रहा। नारायण ने जैसे उसे अनत आयु देकर पृथ्वी पर भेजा था। अपने दिल पर पत्थर रख रामदास ने ही पतोहू को सात्वना दी थी बेटे का दाह-सस्कार भी उसे ही करना पडा। और तो और पीछे छूट गये जिदा और खाली पेटों के लिए रोटी जुगाडने के लिए उसे फिर करघे पर बैठना पडा।

पास ही चरण का करघा ज्यों का त्यो पडा था। अपने मालिक की तरह ही खामोश मिट्टी की तहो के नीचे दबा हुआ।

रामदास ने चरण के बडे होने के साथ-साथ ढेरों सपने देख डाले थे। नये करघों की खरीदारी बुनकर की तादाद मे बढोत्तरी और शहर-बाजार को अपनी छाती पर उठाये रामदास जिदा लाश की तरह करघे पर दिन रात झुका रहता आखिर रोज के दस रूपये जो कमाने थे। वरना दो-दो पेट के साथ पेट में पलते तीसरे प्राणी को पालना कठिन होता। धीरे धीरे हाथ चलाते हुए भी तीन-चार दिनों में महीन किनारे की एक साडी बुन ही लेता था। उसके हाथ करघे के साथ चलते और मन नारायण की पुकार मे डूबा बाहरी दुनिया के हाल चाल भाग-दौड से पूरी तरह अनजान। नारायण की ही इच्छा रही होगी कि एक बूढे कारीगर को अपनी जमा उम्र से तीस साल को झाड-फूककर फिर बाइस-तेइस साल के कारीगर की तरह करघे पर जुटना पडा था।

भ्रम तडके ही उठता और एक जवान मर्द की खाल ओढकर काम पर बैठ जाता। घोडे की

तरह दौडता उसका करघा करघे को चलाते उस आने वाली जान की चिंता रहती सूत बुनते-बुनते वह बच्चे के लिए जरूरी चीजो को भी मन ही -मन गुनता रहता था। *

चरण की विधवा के लडकी हुई। नन्ही सी जान तमाम दु खी चेहरे को किस तरह बदल देती है इसकी सुध उस बच्ची के जन्म के साथ ही रामदास को हुई। पोती को छाती से चिपकाये- उसे लोरी सुनाने मे अपने नारायण तक का नाम भी भूल गया रामदास। बालिका का नाम रखा लक्ष्मी। अब नारायण नही लक्ष्मी ही थी उसके जीवन और जगत का आधार उसका भरोसा उसका सबकुछ ।

रामदास नारायण को भले ही भूल जाये लेकिन नारायण ने रामदास को ठीक याद रखा था। ठीक-ठीक चलते जीवन मे तभी एक घटना और घट गयी। जिसने सबकुछ एक बारगी बदल दिया। सबकुछ एक बारगी बदल दिया।

लक्ष्मी चलना सीख चुकी थी। तोतली भाषा मे कुछ उच्चारती रहती-बात करती मौका मिलते ही चरखे के पास पडे सूत या सुलिया को भी उलट-पुलटकर देती। अपने दादू के करघे के पर पाव झुलाकर हर घडी चाऊ माऊ करती रहती पल्ले से सूत तोडने मे सफल होने पर बदर की तरह ताली बजा बजाकर हसती-मानो लंका जीत आयी हो। वह अपनी मा पर भी कम मेहरबान न थी। इधर से घुडकी खाती तो पहुच जाती रसोईघर में। कभी आग छूने का भय दिखाती तो कभी साग सब्जी पलटने की ढिठाई पर उतर जाती। कभी बडी -बूढी की तरह अनाज साफ करने बैठ जाती दादू और मा दोनों ही-इस नन्हीं लडकी के चारों ओर चक्कर काटते हुए दु खों की हद से बाहर से हो गये थे। तभी लक्ष्मी की माँ बीमार पड गयी। साधारण सा बुखार था। आम औरतों की तरह वह भी दो-एक दिन खटिया पर लेटी रही और फिर बुखार टूटने के साथ-साथ काम मे जुट गयी। कमजोर देह काम के बोझ को सभाल नहीं पायी। बुखार रह रहकर आने लगा। घर के तमाम काम के साथ सूत पका कर नील चढाने का काम भी करती रहती। लक्ष्मी की मा को काम करते देख रामदास ने भी कोई खास ध्यान नहीं दिया। छोटी-मोटी हारी-बीमारी पर गरीब ध्यान देने लगे तो कमाई का एक हिस्सा तो दवाई पानी पर ही खर्च हो जाये। रामदास ने भी घरेलू नुस्खा ही बताया तुलसी का काढा लौंग काली मिर्च और शहद। बुखार जब उतरा या तो अपनी सूझ-बूझ पर वह मन ही मन खुश भी हुआ। लेकिन सच्चाई कुछ और ही थी चरण की पत्नी दिन ब दिन सूखती चली गयी। जान जैसे आखों में आ टँगी हो कुछ इस तरह। मोहल्ले के जानकारों ने पास के अस्पताल में जाकर दिखाने की सलाह दी। पहले तो रामदास अपने घर और करघे की चिंता बात टाल गया। लक्ष्मी की मा अस्पताल गयी तो लक्ष्मी का क्या

होगा ?चंचल लड़की मां को छोड़ कभी अकेली नहीं रही। रामदास बुनाई करेगा या बच्ची संभालेगा?कितना ही खैराती अस्पताल क्यों न हो फिर भी बाजार से कोई दवाई लाने को पुर्जा थमा ही देते है। रामदास पहले भी कई मौको पर देख चुका था कि गरीब की हालत पर दया-माया तो दूर-घुड़कने से बाज नहीं आते। अस्पताल वालो से तो कोई कसाई भी बेहतर होता होगा।

गांव या कस्बे के अस्पताल कसाइबाड़ा से भी गया गुजरा क्यों न हों -रोगी की बिगड़ती हालत मे उसे वहीं ही ले जाना पड़ता है। चरण की बहू को भी अंत में वहीं ले जाया गया। रामदास अकेला सब कुछ देखता रहता। लेकिन दु:ख कभी अकेला नहीं रहता। इस बार वह अस्पताल से लक्ष्मी की मां की माटी के साथ ही वापस आया। लक्ष्मी रोती-रोती उसके कंधे पर सो गयी थी। पड़ोसी श्मशान जाकर उसे फूंक ताप आये। रामदास सुन्न इस बार रोया भी नहीं न आसमान की ओर आंखें टिका रखीं। बड़े ही शांत और सहज भाव से श्राद्ध के सारे कर्म कांड किये और उसके बाद लक्षी के साथ फिर से नया जीवन शुरू करने में जुट गया। लेकिन इससे उम्र का दबाव तो कम नहीं हो जाता न?अब साड़ी का ताना भरते ही उसका दम फूल जाता। धागा बुनते समय हांफने लगता। साड़ी छोड़ सिर्फ धोती बुनने लगा। बुनना जरूरी था क्योंकि लक्ष्मी को पालना था। उसे बड़ा करना था। यह एक तरह से तीसरा कठिन परीक्षा थी।

लक्ष्मी धीरे धीरे बड़ी हुई। रामदास जर्जर होता चला गया। लक्ष्मी का विवाह करना निश्चित हुआ। जमाई भी ठीक-ठाक ही था। उसने अपना दायित्व पूरा कर दिया था। बस अब तो नारायण से छुट्टी लेना ही बाकी था।

रामदास के जीवन की जन्मपत्री में छुट्टी का योग नहीं था। जो जुआ उसने अठारह साल की आयु से कंधे पर उठाया था वह झुकी कमर के साथ भी ज्यों का त्यों रखा हुआ था। उसे लगता करघा चलाते- चलाते ही उसकी देह शांत हो जायेगी। कफन की जगह सूत में लिपटी। लेकिन वह छिन कब आयेगा जो सब छीन लेगा? वह कातरभाव से नारायण से पूछता और कितने दिन ?वह जब बहुत तरल हो उठता तो गुनगुना देता'अब कि बार पार करो नंद के दुलारे' उसकी उमर के तो सभी बुनकर पार उतर गये बस वही एक रह गया है और साथ-साथ रह गया हरि बोला उसके साथ वह संसार में रह गया तो क्या रामदास की तरह उसे करघे पर बैठना नहीं पड़ता। उसके दिन उसके बेटे-पोतों के बीच बड़े सुख से गुजर रहे है एक वही है अभागा।

हाथ की गति और कठ स्वर दोनों रूके हुए थे। बहुत देर से रामदास काठ- सा करघे के पास बैठा था। जड-एकदम चुप्प। लक्ष्मी ने आकर दो बार आवाज भी लगायी। 'रामदास' उस आवाज से भी परे था। अचानक गले से आवाज निकली, "नारायण-नारायण" और उसके साथ ही वही खस खस खस की आवाज और वही कठ स्वर।

लक्ष्मी ने दादू की आवाज सुनी तो दनदनाती हुई बाहर आयी और बोली "ओ दादू, करघे को भी तो थोड़ा आराम दो?दो दिनों से जाने क्या उलट-पुलट कर रहे हो?

रामदास ने पोती की ओर देखते हुए कहा,"क्यो दू आराम। मुझे क्या तुम लोगों ने आराम करने दिया? मुझे रिहाई दी बोल?इस बूढ़ी देह को हर तरफ से बाँध रखा है। फिर किस दु ख-सुख के चलते इसे ाराम दूँ ?'

"ठीक है जो खुशी वही करो।' लक्ष्मी ने भीतर जाते हुए गुस्से में भरकर कहा। आँखों से हँसते हुए रामदास ने कहा "बाप रे गुस्सा।" रामदास ने करघे के मुख पर तकुए को छूते हुए पाया कि फेटे की धार सचमुच खत्म हो आई थी।

बूढ़े करघे पर लक्ष्मी को बडा गुस्सा आता था। वह बार-बार दादू को धमकाती रहती- "कहे देती हूँ दादू, नया करघा लाये बिना बुनाई नहीं होने की। लगे रहना इसी अड़ियल टट्टू के साथ।'

रामदास कहता, "तू क्या पैसो की गरमी दिखा रही है रे?

"नहीं, तुम्हे करघे की खस्ता हालत दिखाई नहीं देती?"

"देती है।"

"तब बदलते क्यो नहीं?"

"तू क्या सोचती है ? से नहीं है इसीलिए नहीं बदल रहा?"

'और नहीं तो क्या ?

रामदास हँस पड़ा। बो ा, "मोह री सिर्फ मोह के पीछे इसे फेंक नहीं पा रहा, समझी?"

लक्ष्मी भड़क उठी ादू, तुम्हारी बुद्धि की बलिहारी।मेरा तो जी तड़प उठता है तुम्हारी सठियाई बातों से।

रामदास जानता था उसने सच ही कहा था। इस करघे के साथ उसे एक लगाव-सा हो गया था। कितने सालों से इसी पर बैठे बुनाई करता आया है। पुराना है इसलिए बिगड़ेगा

तो जरूर लेकिन यही कहकर इस करघे को कूड़े में फेंक दूँ। आजकल के पूत तो माँ-बाप क्या किसी को भी कचरे या घूरे पर फेंक सकते है?यह करघा तो उसके लिए पिता भी था और पोता भी। चार पीढ़ियों का पेट पालने वाला। उनकी किस्मत लिखने वाला।

आज जैसी मनहूस घड़ी की चपेट में गाँव के बुनकर भी आ जायें तो अचरज क्या ? यहाँ भी बुनकरो के घरों के आसपास पुराने करघों का पहाड़ जमा है। बड़ी कीमत पा जाने के लोभ मे कचरे को जमा करने का मोह। स्याले गये है-सारे। सारा दोष तो क्या करघे के पुराने होने का ही होता है?तानी के पास गाँठ पड़ने से सूत कटता है बुनाई गड़बड़ा जाती है। ताना-बाना सही न हो तो बुनाई उलट-पुलट जाती है। रामदास एक कुशल बुनकर है। बुनाई के समय करघे का रोग पकड़ना उसके लिए असाध्य नहीं। करघे की मूठ पकड़ने के साथ-साथ उसकी जात बताने में उसे एक पल भी नहीं लगता। कितने काउन्ट का सूत है-उसका हिसाब भी वह तुरन्त बता सकता है। आजकल के लौंडे-लपाड़े तो अस्सी और एक सौ के बीच के फर्क को भी नहीं जानते। कुछ पूछो तो टाल जायेगे। रामदास ने बाप के साथ बैठकर काम सीखा था। उसे याद है एक बार कचड़ापाड़ा के अतीन बाबू ने उसके पिता से कहा था, "तुम्हारा बेटा थोड़ा-बहुत लिखना-पढ़ना तो जानता ही है। नौकरी में डालना हो तो कहना रेलवे में लगवा दूँगा।'

उसके पिता हँसकर बोले 'हमारी टोली में किसी ने भी नौकरी नहीं की बाबू जी।

अरे उससे क्या होता है। तेरा बेटा करेगा।

उसके पिता अतीन बाबू के मुँह पर ना करने का साहस नहीं जुटा पाये। बोले बेटे से पूँछ लूँ-वह क्या कहता है?

लेकिन बेटे की बात सुनकर अतीन बाबू आश्चर्य चकित रह गये। उससे भी ज्यादा आश्चर्य हुआ था रामदास के पिता को। बेटे का उत्तर सुन आँखों से आँसू टपक पड़े--टप-टप-टप।

अतीन बाबू ने उन दिनों शान्तिपुर के कई लड़कों को रेलवे में नौकरी दिलवायी थी। उनमें से कई तो नौकरी में उन्नति करते हुए बड़े बाबू तक बन गये थे। कइयों ने नौकरी छोड़ फिर से करघा चलाना शुरू कर दिया था। जो लौट आये थे वे जीवन के अन्तिम काल में पछतावा करते रहे। लेकिन रामदास को टुक पछतावा नहीं हुआ। चाहे नारायण ने बार-बार आघात किया --कंगाली दी-फिर भी ताँती होने का अनुभव और गौरव भी तो दिया। वही उसके लिए सबसे बड़ा उपहार और पुरस्कार था।

वह अपने जमाई पाचू को पुरानी बातें सुनाता जिन्हें पाचू बड़े ध्यान से सुनता। रामदास

कहता पता है पाचू–आजकल के लडकों के साथ सबसे बड़ी दिक्कत क्या है काम से उन्हे कोई लगाव नही रहता। लगन न होने पर काम सीखना होता नही रे , अरे पाचू, हम बुनकर महादेव की सन्तान है। महादेव ही है सृष्टि का बनाने वाला लेकिन वह भी एक अनोखा भिखारी! अपने पास कौडी तक नही रखता। उनके जैसा होना होगा। मन मे लोभ आया नहीं कि सब खत्म सर्वनाश।

शुरू-शुरू मे पाचू रामदास के कहे उठता-बैठता। काम सीखता। चरणदास भी इस तरह सीखकर उस्ताद बना था। पान्चू चरणदास के करघे पर बैठने भी लगा था।

लेकिन पाचू चरण जैसा नही था। वह था इस युग की सन्तान। दु ख सहने की ताकत नहीं थी उसमे इसलिए निकल पडा सुख की खोज मे शहर की ओर। रामदास मन ही मन कहता 'पाचू लौट आ रे मुझे रिहाई दे अब और सहने की दम–खम नही है रे मुझमें।

तभी किसी के आने की आहट आयी और परछाई दिखी। विपिन का बेटा बिशु पूछ रहा था- 'कक्का काम कर रहे हो?

मुँह उठाकर रामदास ने उत्तर दिया हाँ बेटा। तू कहीं जा रहा था?

"कहीं नहीं आपके पास ही आया हूँ।

रामदास की आँखो मे आशा की जोत चमकी। बिशु ने इन दिनो चार पैसे कमाये है। तीन चार करघे भी है। बुनकर रखे है और खुद हावडा की हाट मे बैठता है। हर सोमवार कपडों की बडी-बडी गठरी लेकर हावडा की ओर निकल जाता है। कलकत्ते मे बहुतो से जान पहचान भी हो गई है। बिशु को उसने कितनी बार कहा था बेटे तुम तो शहर में घूमते-फिरते हो मेरा पाचू दिखे तो बताना। महीने गुजर गये मगर पाचू का कोई पता नहीं मिला। कमजोर मन मे बुरे विचारों ने घर कर लिया। चारों तरफ दगा-फसाद खून-खराबा पाचू के साथ ऐसी ही कही कोई दुर्घटना हो गयी हो तो?

उम्र के इस दौर मे ऐसा ख्याल रामदास के खून मे आग और आँच बढाने के लिए काफी था और इसका गुस्सा उतारता था वह लक्ष्मी पर। इतनी समझदार लडकी किस अक्ल के चलते पति को बाहर जाने को कहा। वह भी शहर की ओर। बुनाई का काम करके क्या उसका पेट नहीं भरता?शान्तिपुर के अन्य बुनकरो को क्या दो जून भात नहीं या बदन ढँकने को धोती नहीं मिलती ? बाहर शहर में दो मुट्ठी ज्यादा भात खाने को उसे ही मिलता है-जो दस-पाँच क्लास पढे हों। बी ए पास तक लडके सडक नापते नजर आते है। यह काना घोडा क्या करिश्मा दिखाएगा।

लेकिन यह बडबडाहट भी ज्यादा दिनों नहीं रह पाती थी। लक्ष्मी के लिए फिर ममता उपजती और फिर वही कहा-सुनी का पछतावा और चिरौरी "मेरे जमाई को देखो तो बताना। "

विशु क्या पाचू का समाचार लेकर उसके पास आया है?पूछ बैठा, तेरे पास कोई खबर-ववर है क्या ?'

"हाँ।"

'क्या ? रामदास के भीतर उत्कंठा हुई, अच्छी तो है न?

विशु रामदास के सामने जा बैठा। बोला ' करघा तो जग खाता जा रहा है।"

रामदास को विशु की यह बात समझ नहीं आयी। बेमन से उत्तर दिया, "हाँ।"

'यहाँ तो दो करघे की जगह और है।"

"सो तो है।'

विशु अब अपने मतलब की बात पर आया, 'इस जगह को क्यो बेकार रख छोड़ा है इसे भाडे पर लगाया जा सकता है न?

अब जाकर रामदास को विशु की बात का मतलब समझ मे आया। अपना उल्लू सीधा करने को सुबह-सुबह यहाँ दौड़ा आया है- मतलबी ससाला!

रामदास ने उत्तर दिया भाडे पर देकर क्या मिलेगा?

विशु ने पलटकर कहा, "वाह महीने के महीने दो-चार सौ रुपये मिलेंगे-यह फायदा नहीं?'

फीकी हँसी हँसते हुए रामदास बोला ' मै इस उम्र में फायदे या घाटे का हिसाब मिलाना नहीं चाहता रे विशु।

विशु चुप।

रामदास ने बात आगे बढ़ायी और फिर पाचू तो एक न एक दिन लौटेगा ही। उसकी जगह भाडे पर लगाने की मुझे क्या पडी है? 'उसकी कोई खबर ?'

'नहीं। रामदास ने अब करघा चलाना शुरू कर दिया था। यानी बात खत्म।

थोडी देर चुप बैठ विशु उल्टे पाँव लौट गया। रामदास अपमान-क्रोध से भर उठा। क्या समझते है लोग? वह कोई कंगला है-भिखारी है?लालची है?ऐसा होता तो भरी जवानी मे

नौकरी पर न निकल पड़ता।

करघा ही उसका साथी है और यह घर उसकी यादों का मंदिर। इसी करघे को चलाकर वह उस्ताद बना था। इसी करघे पर जब चरण उस्ताद हो गया तब घर में दूसरा करघा आया था। कैसा सुघड़ और मेहनती था। रोज एक 'विश्वभारती' बुन लेता था। काम में भी उतनी ही सफाई जितनी बात-व्यवहार में।

आज वह नहीं रहा, लेकिन उसके पसीने की गंध अब भी करघे में रची-बसी हुई है। कोई और सूँघ पाये या न पाये वह बाप है। उसकी नथुनों में वह गंध अँटी हुई है।

रामदास सुबह से ही अनमना है। बेचैना बार-बार सूत कट जाता है। बुनाई करते समय मुट्ठे की मजबूत पकड़ की जरूरत होती है। साथ-साथ ही कारीगर बुनकर के मन मे ताल का बना रहना भी जरूरी होता है। यही धन तो उसे विरासत मे मिला था। लेकिन आजकल कारीगर के काम को आदर देने वाले लोग है कहाँ? दिनभर में कितना कपड़ा बुन पाता है बस इसी पर बुनकर की कदर निर्भर है।

अच्छी-बुरी बुनाई से कोई मतलब नहीं। यहाँ तक महाजन भी अपने बुनकरों को उधार देते हैं। ले भर से सब कुछ ठीक।

लक्ष्मी चाय और डबल रोटी ले कर खड़ी थी। रामदास को खबर तक नहीं हुई। लक्ष्मी ने आवाज लगाई तो चेतना लौटी। देखा नहा-धोकर तैयार खड़ी थी। माँग में सिन्दूर माथे पर बिंदी झक-झक करती। साक्षात् लक्ष्मी। विश्वास नहीं कर पाया कि इसी सौंदर्य को उसने अपनी गोद मे और कंधे पर उठाकर बड़ा किया था। लोरी गाकर सुलाया करता था। पेड़-पक्षियों को दिखाकर भात खिलाता रहा था। यह वह नहीं थी पेड़ की कोई सुलगती टहनी खड़ी थी। वह मुग्ध भाव से पूछ बैठा- 'बोलो देवी?

'कहना सुनना क्या ?' लक्ष्मी बोली 'चाय-पानी पीकर बाजार की ओर पाँव उठाओ।'

रामदास की दृष्टि लक्ष्मी पर ज्यों की त्यों स्थिर थी। लक्ष्मी ने करघे के तख्ते पर चाय रोटी रखते हुए कहा "खाओ न दादू देखो धूप चढ़ आयी है।

"चढ़ आयी है तो चढ़ने दो। हाट इतनी जल्दी उठ जाने वाला नहीं। अरे जा कँहा रही है तुझे नजर भर देख तो लूँ।'

"क्या देखना है?

तेरा रूप। रामदास ने हँसकर कहा। लक्ष्मी ने होंठ टेढ़े किये और गर्दन हिला दी।

रामदास बोल पड़ा 'उस गधे को लौट आने दो। ऐसी सुंदर पत्नी पीछे छोड़ कौन-से अनोखे सुख को पाने शहर गया था आने पर पूछूँगा। तू देख लेना, वह बाद में पछतायेगा तू देखना।'

लक्ष्मी चुपचाप खड़ी रही।

रामदास ने चाय रोटी हाथ मे उठा ली।

'उस करघे के बारे मे क्या चर्चा हो रही थी? लक्ष्मी ने बात बदली।

चाय मे रोटी डुबाते रामदास ने उत्तर दिया, "बिशु आया था भाड़े पर उसे देने की बात कह रहा था।'

तुमने क्या कहा?

'भगा दिया रामदास ने सगर्व उत्तर दिया "पैसों का लोभ दिखाने आया था हरामी!क्या समझता है मेरे पास कुछ नहीं।

रामदास ने चाय का बर्तन तख्ते पर आवेश में रखा और बीड़ी सुलगाते हुए बोला, मै बुनकर का बेटा इसलिए मेरा कोई मान-सम्मान नही। विपिन के बेटे को मैं अपनी जगह दूँगा? वह भी भाड़े पर?बेटा मर गया तो क्या मै अपने बाप की सपति बेच दूँ?पाचू को भी अभी गायब होना था ऐसे बुरे वक्त पर ही न? बीड़ी की कश जोर से लेते हुए धुँआ छोड़ने लगा।

बाजार की भीड़ मे रामदास ने खयाल नहीं किया, लेकिन फिर समझ मे आया कोई उसे ही बुला रहा है। एक लड़का था। वह ही उसे बुला रहा था। वह उसे पहचान नही पा रहा था। इस पीढ़ी के कई बच्चों को वह कहाँ पहचानता है?फिर भी चेहरा अपना-सा लग रहा था?इसी बाजार में कभी देखा हो?

रामदास ने पूछा मुझे बुला रहे हो?"

लड़के ने तपाक से कहा और किसे दादू कहकर बुलाऊँगा?

'हाँ यह तो ठीक है।

आपके घर बिशु आया था।"

हाँ।

'क्या कहा?'

"करघा भाडे पर चाह रहा था " राम दास की आवाज नरम हो गयी थी 'लेकिन मैने ही मना कर दिया।"

"पूरी तरह तय कर लिया है?

रामदास ने गर्दन हिला दी।

"ठीक ही किया, लडके ने कहा 'वह कमरा मुझे भाडे पर दे दीजिए।"

'तुम्हे?" रामदास के जैसे जबडे ही हिल गये।

लडके ने तडककर कहा "हाँ।"

'लेकिन तुम वह कमरा लेकर क्या करोगे?

"परचून की दुकान खोलूँगा। उस मोहल्ले मे ऐसी एक भी दुकान नहीं। मै भी बेकार हूँ। पिताजी भी रिटायर हो गये। सौ-दो सौ जो कहोगे भाडा दूँगा।'

रामदास का बदन पथराने लगा। लडका उसे समझाता जा रहा था कि वह बूढा हो चुका है। आँखो मे मोतिया उभर आया है। देह की ताकत कम हो जायेगी। पैसों की जरूरत तो रहेगी ही आदि-आदि।

लेकिन रामदास कुछ नही कह सका। उसने थूक निगलकर कहा 'मेरा जमाई है उससे भी बातचीत करके '

लडके ने बात बीच में काटते हुए रुखे स्वर मे कहा यह सब बाते किसी और को कहियेगा दादू। आपका जमाई?वह भगोडा क्या लौटेगा?

रामदास ने धीरे से कहा 'कभी तो लौटेगा।

लडका बेरुखी से हँस पडा "मै बिशु नहीं हूँ दादू।मेरा नाम शैतान है शैतान।

रामदास मानो भय के सामने खडा था। इस नाम की महिमा सुन रखी थी। गाँव मे इसका कितना आतक था। इलाके की राजनीति में भी बडा दखल था। मरने-मारने मे रत्ती भर हिचकिचाहट नहीं।

"मुझे दो दिन सोचने का समय दो बेटे।"

'ठीक है- दिया।

घर के पास आते-आते रामदास ने देखा, उसकी टूटी देहरी के पास एक साइकिल थामे कोई खडा था। यह लडका अब कौन होगा?इसे तो पहचानता नहीं। कहीं यह भी तो भाडे की बात करने तो नहीं आया?या उस शैतान का चेला-चटिया तो नहीं?कैसा बेअदब है-चेहरा काठ की तरह सपाट है। बडो का भी कोई मान-सम्मान भी कुछ होता है, उसकी राई-रत्ती भी परवाह नहीं।

नजदीक आकर देखा दरवाजे के पास लक्ष्मी उससे बाते कर रही थी। विवाह से पहले लक्ष्मी बहुत चचल थी। चिडिया-सी फुदकती-फिरती–सबसे बतियाती। हँसी-मजाक करने मे भी किसी से पीछे नहीं रहती। विवाह के बाद उसमे बडा बदलाव आया था। लडके तो दूर सहेलियो से भी दूर चली गयी थी। पाचू के चले जाने के बाद तो और भी गुम-सुम। बस वह और उसका कामकाज–यही था उसका दायरा। बातें कहने-सुनने को उसके बूढे दादू थे। काम खत्म होता तो करघे के रख रखाव में हाथ बँटाती। सूत पकाती, नील बनाती। माड का माक्षा तैयार करती।

लक्ष्मी के इसी स्वभाव की वजह से रामदास निश्चिंत था। परित्यक्ता के प्रति लोगों की भावना कैसी होती है–रामदास यह जानता था। किसके मन में कब कहाँ कौन बात उठ रही है वह तो सिर्फ नारायण जाने।

रामदास को देखते ही लक्ष्मी ने निष्कपट भाव से कहा, "दादू ये गढी से आये है–तुमसे मिलने।

रामदास फटी आँखों से लडके को देखता रहा 'तुम्हें पहचान नहीं पा रहा हूँ।'

"उत्तरपाडा के सिंहजी को जानते है?हरिहरण सिंह? लडके ने पूछा।

'हाँ' याद आया उसे। एक दिन इसी सिंह जी का नाम लेकर पाचू भी रामदास के पास काम सीखने आया था।

सिंहजी का रामदास के प्रति बडा सम्मान था। उसी ने पाचू को बताया था कि अगर काम सीखने की इच्छा हो तो चले जाओ रामदास पूडा के पास। करघा तो कोई भी चला सकता है लेकिन ताने-बाने की महीन से महीन बातों को कोई उस्ताद ही बता सकता है। यूँ भी हाथ करघे के उस्ताद बहुत कम रह गये है। और पाचू ने रामदास के चरण स्पर्श करते हुए कहा था "मुझे काम सिखाइए।'

सुनकर रामदास अवाक। आजकल के लडके भी काम सीखने का चाव रखते है ?उन्हें देखकर तो लगता है वे दूध के दाँत के साथ ही उस्ताद बन जाते [redacted] राणापाट और किशनगढ

जाकर बाइस्कोप देखते है–गली में बैठकर अड्डे मारते है–आती-जाती छोकरियो को छेडते है। उन्हे काम सीखने की फुरसत कहाँ ?

रामदास ने पाचू का परिचय लिया था। वह भी बुनकर का बेटा था। बचपन मे माँ-बाप की मृत्यु हो गयी थी। बडे भाई ने विवाह करके पाचू को अकेला छोड दिया। पाँचवीं क्लास पढकर पढाई-लिखाई भी छूट गयी। रोजी-रोटी का सवाल खडा हो गया।

पाचू की बातों से रामदास का दिल नरम पडा। फिर भी सशय मिटा नहीं था। आजकल के लडकों का क्या भरोसा। काम के प्रति चाव नहीं, गुरू के प्रति आदर नही। दो दिन मे काम का बुखार उतरता नजर आता है। पहले तो वह पाचू को टालता रहा लेकिन अत मे पाचू की जिद के आगे काम सिखाने को तैयार हो गया। चरणदास का बुनाई घर उसे दिया। बहुत दिनो बाद उस घर का सन्नाटा टूटा था।

"क्या तुम्हीं सिंह जी के लडके हो? रामदास ने साइकिल थामे लडके से पूछा।

लडके ने दूसरे हाथ से रामदास के पाँव छूते हुए कहा, "हाँ दादू।'

लेकिन सशय ज्यों का त्यों बना रहा। सिह जी का बेटा सिह जैसा ही स्वभाव पाये, यह जरूरी नहीं। अभी तो शैतान से पाला पडा था। बामन का पूत और करम का भूत। नहीं किसी का विश्वास नहीं किया जा सकता। उसने बुझे स्वर मे पूछा, ' मेरे पास क्यो आये हो?

"एक खबर देने आया था।"

'खबर अच्छी तो है न?

"हाँ। पाचू की खबर।

रामदास के हाथ से जैसे बाजार का थैला गिर पडा। उनसे ठट्ठा करने तो नही आया यह लडका? इतने महीनों से पता पूछ-पूछ हार गया, और आज सिहजी का बेटा खबर लेकर आ गया।

'वह कहाँ है रे? रामदास का स्वर मानो सप्तम में चढ गया था।

"वह ठीक है। एक पावर-लूम में काम कर रहा है।

बहुत दिनों की जमी हुई व्यथा मानो फुटकर आँसुओं में उतर जाना चाह रही हो। पनिआई आँखों में चमक भर गयी। पाचू चरण के करघे पर ही नहीं बैठा था धीरे-धीरे उसके हृदय में चरण की जगह बैठ गया था। पाचू ठीक-ठाक [redacted] स्वस्थ है। सुनकर रामदास उत्तेजित हो

गया। सिह जी के लडके का हाथ पकड बोल पडा, 'तूने मुझे जीवनदान दिया है रे उस छोकरे की फिक्र मे तो रातों को सो नही पाया था। आह खबर सुनकर कलेजे को क्या आराम मिला है बेटे—बडा सुख मिला है रे। और बाजार का थैला लक्ष्मी के हाथ दे सिहजी के लडके को भीतर ले गया लक्ष्मी को चाय बनाने के साथ-साथ भोला हलवाई के यहाँ से मिठाई लाने को भी कहा।

सिह जी के लडके से सारी बाते सुनीं रामदास ने। लक्ष्मी ने भी। बुनाई के चक्कर मे पाचू रामदास के घर आया था। लेकिन वह जल्द ही समझ गया, जितनी मेहनत थी उतनी फल प्राप्ति नहीं हो सकती । तरक्की के लिए तो शहर का ही भरोसा था। यही बात वह लक्ष्मी को समझाकर गया था। कह भी गया था "जब तक काम ठीक-ठाक नहीं हो जाता तब तक गाँव मे कोई खबर नहीं भेजेगा।"

पाचू ने अपना वचन निभाया। काम और कमरा मिलते ही खबर भिजवा दी। दो-एक हफ्ते मे ही लक्ष्मी को आकर ले जायेगा।

लेकिन यह सब सुनकर लक्ष्मी खुश नहीं हुई। अजीब तरह की उदासी के घेरे मे घिर गयी। रामदास ने हँसी की क्यो री लडकी तेरी हँसी कहाँ खो गयी?

लक्ष्मी बोल पडी मै वहाँ नहीं जाऊँगी।

रामदास अवाक अरे जायेगी क्यो नहीं? वहाँ ठाठ से रहेगी सिनेमा-बाइस्कोप देखेगी बस-ट्राम मे घूमेगी इतना काम नहीं करना पडेगा। जा चली जा।

और तुम दादू। लक्ष्मी ने पूछा।

रामदास हँस पडा तू तो मेरे गले की फाँस थी। तू चली जायेगी नं तो मै भी मुक्ति पाऊँगा। समझी।

लक्ष्मी कुछ देर चुप रही। फिर अचानक बोल पडी मै नहीं जाऊँगी नही जाऊँगी। कहकर पिछवाडे टाटवाले रसोईघर की तरफ दौड पडी।

वह दिन किसी तरह बीत गया। आनेवाले दिनो के बीतने का कुछ अता-पता नही। अगले दिन लक्ष्मी ने रोज की तरह ही अपना काम किया लेकिन अपने दादू के सामने पहले की तरह जाने का साहस जुटा नहीं पायी। उधर रामदास ने भी सारा दिन करघा चलाते हुए गुजार दिया। बीच-बीच में बातो में मजाक जरूर करता लेकिन बातों में पहले जैसी खनक नहीं थी।

आज इस घर मे आनन्द-विषाद की धूप-छाँव है। खुशी का कारण तो समझा जा सकता है। इतने महीनो बाद पाचू की खबर मिली थी। नारायण ने उसका कोई अमगल भी नही किया। विवाहिता बेटी पति घर जाये इससे बडे सुख की बात और क्या हो सकती थी। रामदास भी तो उसे पति के घर भेजकर भारमुक्त होना चाहता था। रामदास अब आजाद पक्षी की तरह इधर-उधर उड सकता था। श्री गोविंद नारायण के भजन-कीर्तन मे बची-खुची साँसे लुटा सकता था नारायण की यही इच्छा थी मुक्ति आनद बस अब वहीं।

पाचू गया तो उसकी चिता मे दिन रात बिता दिये। कैसा होगा?लौटेगा तो इसी करघे पर बैठेगा न।

लेकिन आज की चिता का चेहरा ही कुछ दूसरा था। सुबह तक जो विश्वास लिये रामदास बिदास बैठा था- अब उसकी चूले हिल गयी। रामदास का हृदय हार की ग्लानि से भर गया।

पाचू को पाकर उसके अदर आत्मबल की वृद्धि हुई थी। अपने बाप से सीखा काम उसने बडे जतन से पाचू को इसी भरोसे सिखाया था कि वह इस कारीगरी को जिदा रखेगा। शाँतिपुर मे ताँत के बुनकर जादूगर थे-- इसका प्रमाण पाचू उसकी मौत के बाद देता रहेगा।

रामदास का मन खिन्न हो उठा। वह हर तरफ से हारता जा रहा था। उसके काम की मर्यादा--काम सिखाने का गर्व कण-कण करके बिखर गया। उसके पूर्वज अपने काम का अभिमान लिये चोला छोड गये।

एक दिन उसने पूछा 'धोती आजकल बिकती क्यो नही?इसमे क्या दाम ज्यादा होता है?

उत्तर मिला था 'दाम ज्यादा के लिये नही काका। धोती इस जमाने का पहरावा नहीं।

रामदास अवाक। अपने पिता को उनकी आखिरी घडी तक धोती बुनते देखा था उसने। ढाई सौ सूत की धोती। सोना जरी किनारे की धोती। महादेव बाबू भी उसके पिता के पास आते थे। एक-आध धोती नहीं दो चार धोती। यह था उन दिनो के बाबूओं का शौक। लोग आज भी उसकी तारीफ करते नही थकते। आप जैसे कारीगर ने ही शाँतिपुर की लाज रखी है--परन्तु टगाइल के सामने शाँतिपुर का कपडा कुछ नहीं। यह सुनकर रामदास का हृदय गर्व से भर उठता था।

लेकिन आखिरी दिनों में पाचू ने भी पावर लूम मे काम करना तय कर लिया। उसे आराम चाहिए। आजादी चाहिए। दु ख और पीडा के व्रत को वह शिल्पी भूल गया। वह शहरी हो गया।

साँझ बीत चली थी। उसने करघे से उठकर देखा, लक्ष्मी कमरे में चुपचाप बैठी थी। मजाक करते हुए पूछ बैठा, 'क्यो री सुदरी चुपचाप क्यो बैठी हो?

लक्ष्मी मानो अपने दादू के इन्तजार में ही बैठी थी। झटपट उठ खडी हुई और उसी मद्धम स्वर में बोली "मै यहाँ से कहीं नहीं जाऊँगी यह जान लो दादू।"

"छी, ऐसे भी कोई करता है। लोग क्या कहेंगे।

" और तुम्हारी देखभाल कौन करेगा?

रामदास ने उत्तर दिया, 'मुझे देखेगे नारायण। मुझे अब सुख-दु ख से क्या लेना देना?

जैसे-जैसे दिन बीतते जा रहे थे रामदास घर से बाहर रहने लगा था। काम खत्म कर घूमने निकल पडता। उद्देश्यहीन—काली मदिर की सीढी पर जाकर बैठ जाता। जीवन बहुत व्यथ-सा लगता— पानी के ऊपर पडी बूँद अस्थायी-अनित्य। सब कुछ किया- दिया अर्थहीन लगता। उधर लक्ष्मी के चेहरे को पढने में रामदास को तनिक भी परेशानी नहीं होती। किसी अभिमानिनी नारी की तरह धीरे-धीरे तैयार होती होगी अपने दादू को छोड पति के घर जाने के लिए।

घर लौटा तो आसमान में आधा चाँद टँगा था। आकाश में एक बडा-सा तारा जगमगा रहा था। बचपन में सुना था- आदमी मरकर आकाश का तारा बन जाता है। और रामदास ने भी निर्बोध की तरह आकाश में अपने पिता को ढूँढा। पिता-माँ-चरणदास-बहू। सभी तो इन्हीं तारों में गुम हो गये। एक दिन वह भी खो जाएगा। उसकी आँखें भर आईं। नहीं अब वह यह करघा एकदम हटा देगा। आँखों के सामने रहेगा तो पीडा बढेगी। उसे आशा थी कि एक दिन पाचू आयेगा—महाजन से पैसा लेकर फिर शुरू कर देगा काम-धाम।

लेकिन पाचू अब और बुनाई करने नहीं आनेवाला। मशीन के आगे यह हायकरघा बहुत छोटी-सी चीज लगने लगी। कारीगरी और दस्तकारी मूल्यहीन है उसके लिए।

बिशु अब फिर आयेगा भाडे की बात करने। शैतान भी परचून की दुकान खोलने के लिए जगह माँगेगा। बिशु को तो इकार कर भी दे लेकिन शैतान को क्या कहेगा? ताँतघर की पवित्रता बाप-दादे की थाती की अब रक्षा नहीं कर पायेगा। तमाम परीक्षाओं में सफल होने

वाला अंतिम साँसें गिननेवाला रामदास अंतिम परीक्षा में रह गया। अंततः उसे समझौता करना ही होगा—शायद दोनों से।



अब उड जा रे पछी

- वसत प्रभा-

लॉन के एक ओर लगी कुर्सियों के पास आकर वे खडी हो गई और मीता से बोली,"तुम जाओ लोगो से मिलो।"

'आप नहीं चलेगी चलिए आपका परिचय करवा दूँगी कुछ लोग है यहाँ जिनसे मिलकर आपको अच्छा लगेगा।

'नहीं, मै यही बैठूँगी।"

"अकेली ही?

' अकेली कहाँ हूँ,इतने लोगो को देखूँगी सुनूँगी तो पहचान अपने आप ही हो जायेगी, तुम जाओ मेरी चिन्ता मत करो मै यहाँ मजे में बैठूँगी। '

एक लम्बी अवधि के बाद वे भारत लौटीं थी। दिल्ली मे इतना समय व्यतीत करने पर अब उन्हे यही शहर कुछ अपरिचित-सा कुछ बेगाना-सा लगने लगा था। मीता जोर देकर उन्हें इस पार्टी मे ले आई थी। पार्टी इस महानगरी के भव्य होटल में थी। भारतीय सस्कृति के दो दिवसीय कार्यक्रम के समापन समारोह के उपलक्ष्य में इस पार्टी का आयोजन किया गया था। मीता इस आयोजन मे सक्रिय भाग ले रही थी। इसीलिए न चाहते हुए भी उसके साथ चली आई थी।

मीता ने उन्हें बताया था 'बडे-बडे लोग आ रहे है देश-विदेश से आये हुए अतिथि तो होंगे ही साथ में जाने-माने साहित्यकार चित्रकार और कलाकार भी होंगे। उच्च पद पर आसीन सरकारी अफसरो को भी निमत्रण पत्र भेजे गए है। और बडे-बडे उद्योगपतियों का आना तो आवश्यक है ही। उन लोगों से पैसा जो लिया है। '

मीता ने सच ही कहा था वह मन ही मन अनुमान लगा रही थीं। और देख रही थीं कि जिस तरह से लोग किसी विशेष व्यक्ति के आस-पास मँडरा रहे है जरूर कोई विशिष्ट मेहमान होंगे या कोई कलाकार तभी तो प्रेस फोटोग्राफर कैमरा लेकर भागने लग जाते है। फिल्म अभिनेत्रियों को वह देख चुकी थी शक्ल-सूरत की पहचान न होती तो वेश भूषा से

पहचान करना असभव हो जाता। हाव भाव से, बातचीत के ढग से और विविध प्रकार की स्वदेशी-विदेशी वेशभूषा से अभिनेत्रियों-सी लग रही थीं।

समृद्ध और विशिष्ट महिलाएँ सुन्दर-सरुचिपूर्ण ढग से सुसज्जित थीं। रग-बिरगे जरी के बार्डर वाली कीमती सिल्क की साडियों में उनका व्यक्तित्व निखर आया था। और दूसरी ओर ऊँची एडी के सैन्डल पहने चुस्त-दुरुस्त शलवार-कमीज में युवतियाँ इधर-उधर घूमती हुई कहकहे लगाये जा रही थीं।

इधर-उधर निगाह दौडाते हुए वे होटल की भव्यता को भी निहारती हुई प्रफुल्लित हो रही थीं। कितने शानदार और सजे लॉन है। जहाँ तक दृष्टि जाती है हरे मखमली कालीन ही बिछे हुए मालूम होते है। चार दीवारी के पास-पास कतारो मे बँधी मेंहदी की झाडियो के झुरमुट मे से झाँकती हुई नीली-हरी बत्तियाँ सजी-धजी नई दुल्हिनों-सी छटा बिखेर रही है। और उधर पार्क से आती हुई सगीत की स्वर लहरी इस सध्या को और भी अधिक रगीन बना रही है।

वेटर के हाथ मे से ली ट्रे में से उन्होंने पाइनेपल जूस का गिलास उठाया तो अनायास ही एक हाथ उनके कन्धे पर आकर थम गया 'यह क्या जूस से काम नहीं चलेगा यह लीजिए आपके लिए मै बढिया वॉइन ले आया हूँ

कौन आप मि मेहरा

'जी हाँ मीता ने बताया कि आप आई हुई है और उधर एक कोने में अकेली बैठी है तो सोचा मैने कि आपको कम्पनी देने मै ही चला जाता हूँ।

'धन्यवाद आपके आने के लिए। मगर मै वाइन नहीं लूँगी मुझे यह जूस [illegible] है।'

'अच्छी बात है कहते हुए मि मेहरा साथ-वाली कुर्सी पर बैठ [illegible] अविनाश जी ने अपना वाइड-अप कर दिया है।

'नहीं ऐसी कोई बात नही जतेन्द्र है वहाँ वह और उसकी पत्नी [illegible] रहे है।"

"और आप-लोग लोग हमेशा के लिए आ गए है [illegible]

अभी तो कुछ सोचा नहीं यहाँ भी अपना घर है [illegible] है वरना चले जायेंगे ।" कहते [illegible]

छोडने और हमेशा के लिए यहाँ बस जाने की बात सोची ही नहीं थी उन्होने। एक आवेश था एक जिद थी या एक अभिमान था जो उन्हें यहाँ खींच लाया। वरना उस घटना से पहले कभी सोचा भी नहीं था कि एकाएक यहाँ लौट आने का फैसला कर लेंगे। और फिर सुमीता और जतेन्द्र के लाख समझाने पर भी वहाँ नहीं रूकेंगे। विगत दिनों की याद में वह एकाएक उत्तेजित-सी हो उठी। कही कोई भाँप न ले, इसी से जल्दी से जूस पी गिलास एक ओर घास पर लुढकाती हुई बोली 'मि मेहरा नही आई क्या ?

जी नहीं उनकी तबीयत ठीक नहीं थी तो मुझे अकेले ही आना पड़ा। और यहाँ आया तो मालूम हुआ कि अर्जुन भी नही आया और आपके पति महाशय भी नहीं आये।

जी अर्जुन किसी काम से मेरठ गया था और अविनाश जी आये नहीं कहने लगे हमारी कोई जान पहचान तो [redacted] नहीं सो क्या करूँगा वहाँ। अर्जुन होता तो बात दूसरी थी

मुझे मालूम होता तो मै ही फोन कर देता मिलना भी हो जाता और कम्पनी भी एक दूसरे को मिल जाती।

आपकी तो काफी जान-पहचान होगी आप तो यही रहते है न?मि मेहरा हँस कर बोले अजी कहाँ मै तो ज्यादातर बम्बई मे ही रहता हूँ। हाँ आना-जाना तो लगा रहता है क्यो कि अभी फैमिली यहीं है बच्चे पढ रहे है और माँ भी हमारे पास रहती है ।

बम्बई में कोई काम शुरू किया है क्या ?

थोड़ा-बहुत है अभी अब देखिए न रिटायर्ड होने में तीन चार महीने ही रहे है। इसके बाद कुछ न कुछ तो करना ही है। यहाँ ट्रासफर हो गई थी दो साल के लिए मद्रास भेजा था। वहाँ से लौटा तो एकदम आर्डर आ गए आसाम जाने के लिए। आजकल मै तो छुट्टी पर हूँ, इसीलिए बम्बई जाता रहता हूँ। वहाँ बडे भाई है उनकी फैक्टरी है अपनी। सो उसी फैक्टरी मे काम करने का इरादा है। भाई साहिब भी बहुत जोर दे रहे है।

अच्छा है अपनों का साथ अच्छा ही होता है। कहने के साथ ही वह फिर कहीं खो गई।

अपने अपने भी कहाँ होते है अपने।मीता का भाई सुखदेव भी तो एक तरह से अपना ही था। कितना धोखा दिया है उसने। जबसे मुरादाबाद का काम उसके हवाले किया तभी से बिजनेस मे नुकसान ही होता चला गया। हमारे दिखाए हुए रास्ते पर चलता हुआ खुद ही मैदान सँभाल बैठा। अब जगह-जगह उसका निजी व्यापार चल रहा है हमारे ग्राहक सभी हथिया लिए है। मीता को मन ही मन बुरा जरूर लगा होगा मगर प्रत्यक्ष में तो वह उसी

की तरफदारी करेंगी, भाई जो ठहरा।

मि मेहरा उठ खड़े हुए और बोले,"आप चलेंगी?"

"कहाँ?

"देखिए मिस रेणुका आई है। लोग उन्हें देखने के लिए इकट्ठे हो रहे है।'

उन्होंने नजर उठाकर देखा तो पाया कैमरामैन भागे-भागे उसी ओर जा रहे है। यह रेणुका वही रेणुका है जिसकी विदेशों में भी धूम मची थी। उसका नृत्य देखने वह भी तो गई थीं जब वह कैनेडा आई थी। कितना मान-सम्मान मिला था उसे ।

एकाएक उनकी नजर एक भूले-बिसरे परन्तु खूब चिर-परिचित चेहरे पर जाकर अटक गई। एकटक देखने और याद करने के बावजूद नाम याद नहीं आ रहा था। कहाँ देखा है इसे?कुछ क्षण वे याद करती हुई सोचती रहीं, फिर एकाएक चौंक उठीं। बीता हुआ युग लघु क्षण मे परिवर्तित हो गया। कमलेश है, कमलेश!वे खुशी और उत्साह से खड़ी हो गई। अपने को आश्वस्त करते हुए मन ही मन बोल उठीं यह कमलेश ही है , जो मेरे पास आकाशवाणी में बहनो के प्रोग्राम में भाग लेने आया करती थी तब तब यह अस्थाई रूप से काम करती थी लेकिन कुछ समय पश्चात उसे स्थाई रूप से रख लिया गया था। कुछ क्षण उसी की ओर देखती रहीं और कमलेश ने भी उन्हें अपनी ओर निहारते हुए पहचान लिया था। इसी से हाथ में लिया गिलास जल्दी से कुर्सी के नीचे लुढ़काती हुई तेजी से उनकी ओर आकर बोली, आप आप सुमित्रा जी है न!"

खुशी के आवेश में अधीर होती हुए वे उसके कन्धे पर हाथ रखती हुई बोल उठीं "और तुम कमलेश हो न कमलेश पुरी " "चमत्कार हो गया आज तो! मै तो सोच ही नहीं सकती थी कि आप आप इतने बरसो बाद अचानक ही यहाँ मिल जायेगी सचमुच आप इतने बरसो के बाद भी बिलकुल वैसी ही लगती है।"

'क्या करती हो कमलेश!मै तो अब बूढ़ियों की पंगत में आ रही हूँ ।

"अरे सुमित्रा जी आप भी कैसी बातें करती है। मै तो आपको देखते ही पहचान गई थी लेकिन हाँ विश्वास नहीं हो रहा था कि आप ही है ..वह इसलिए कि आप तो विदेश में बस चुकी थीं मेरे ख्याल मे पन्द्रह बरस तो हो ही गए होंगे।"

"हाँ पन्द्रह बरस से कुछ ज्यादा ही हो गए है।"

आप कैनेडा में थी न ?"

"नहीं न्यूयार्क मे। लेकिन तुम सुनाओ, यहीं दिल्ली में रहीं कि कहीं ट्रासफर वगैरा भी हुई?'

मै तो यहीं हूँ दिल्ली में ही।'

"पुरी साहेब ठीक है?वह भी तो आकाशवाणी में काम करते थे।

"पहले थे अब तो टी वी में है। यहाँ नहीं कलकत्ता में, तीन-चार साल से कलकत्ता में है।

"तुम नहीं गई उनके साथ?"

कमलेश कुछ क्षण सोचती-सी चुप रही फिर धीरे से कहा अभी तो यहीं हूँ, मेरा काम तो यहीं है। लगे-लगाये काम को छोड़कर जाना भी तो मुश्किल है।

सुमित्रा जी कुछ पूछतीं कि तभी वेटर ट्रे उठाये उनके पास आ खड़ा हुआ।

कमलेश ने ट्रे में रखा पेपर नैपकिन उठाते हुए कहा खूब गर्मा-गर्म कबाब है। सुमित्रा जी आप भी लीजिए न' कहने के साथ ही उसने चार-पाँच कबाब नैपकिन पर रख लिए और कहा, "यहाँ के कबाब बहुत अच्छे होते है।

'किस चीज के है?

जवाब वेटर ने दिया "मटन कबाब है और यह फिश-फिगर है "

आगे बढे हुए हाथ सुमित्रा ने खींच लिए और सिर पीछे हटाती हुई बोलीं 'कुछ वेजीटेरियन स्नैक्स हों तो ले आना "

"यह क्या आप वेजीटेरियन कब से हो गईं ' कबाब कुतरते हुए कमलेश बोली और साथ ही साथ वेटर को रुकने का इशारा करते हुए ट्रे में से कुछ कबाब और फिश-फिगर उठाते हुए बोली 'विदेश में रहते हुए भी आप इन चीजों को नहीं छूतीं बड़ी अजीब बात है?

"अजीब तो कुछ नहीं मै तो शुरू से ही वेजीटेरियन थी मगर अब तो अविनाश जी भी शाकाहारी हो गए हैं।

कमलेश कुछ याद करती हुई चौंक उठी "अरे मै तो भूल ही गई आपके साथ अविनाश जी भी आये है कि अकेली ही आई है और आपके बच्चे

"अविनाश जी भी आये है यहाँ बच्चे तो नहीं है "

कमलेश एकदम बोल उठी, आपकी बेटी भी क्या वही रहती है मै तो उसका नाम भूल गई।"

'अमिता हाँ, उसकी शादी भी हो गई है। उसकी शादी तो हमने यही दिल्ली मे ही आकर की थी। आजकल वे जिनेवा में है। सुधीर यानि उसका पति विदेश मत्रालय में ज्वाइन्ट सेक्रेटरी है और जतेन्द्र न्यूयार्क में।'

'वह भी बिजनेस मे होगा?

"नहीं वह तो डाक्टर है, उसका अपना क्लीनिक है वहाँ '

"ओह ? तब तो सब वही जम गए है फिर आपा आप आप कैसे यहाँ आ गई?"

"अरे भई, अब इतने बरस वहाँ गुजार दिए [redacted] न अब मन भर गया था। वैसे भी अब इन्हे आराम करना चाहिए न बहुत कर लिया है काम अविनाश जी ने तो सुमीता से कह दिया था कि अब यह शो रूम तुम ही सँभाल लो।"

'सुमीता कौन?

'मेरी बहु ? कहते हुए उनके चेहरे पर गौरव झलक आया और उसी अभिमान भरे स्वर में बोलीं 'बडी समझदार और होशियार लडकी है, घर भी देखती है और बिजनेस भी '

कमलेश ने वेटर को संकेत करते हुए बुलाया और कैम्पा-कोला लेती हुई बोलीं- 'सुमित्रा जी आप भी कुछ लीजिए न "

'मैने तो अभी-अभी खत्म किया है अभी और इच्छा नहीं है।

हाँ, मै पूछना ही भूल गई। सुमीता यानी आपकी बहु, इण्डियन [redacted] या फारनर?

'सुमीता इण्डियन है मगर उसकी माँ विदेशी ही समझो '

"क्या मतलब?

"पिता बगाली है और माँ कनेडियना जतेन्द्र मेडिकल कालेज में था तभी से उसकी जान-पहचान थी सो उनकी पसन्द में तो हमें कोई आपत्ति नहीं हुई। एक तो इस बात के लिए कि लडकी अच्छी थी दूसरा उनके घर का वातावरण और रहन-सहन सर्वथा भारतीयों जैसा था। सुमीता हिन्दी-बगाली खूब जानती [redacted] और उसकी माँ कनेडियन होते हुए भी भारतीय स्त्री-जैसी मालूम होती है। बोलचाल में भी और वेशभूषा में भी। मैने उसे हमेशा साडी में ही देखा है। मै तो हैरान हूँ यहाँ आकर। यहाँ के रग-ढग तो बिलकुल बदल

गए है। लोग आपस मे हिन्दी मे नही अग्रेजी में ही बात करते है। जहाँ देखो अग्रेजियत का बोलबाला है। देखो न यहाँ भी कितने लोग है जो परस्पर हिन्दी में बात कर रहे है। मालूम होता है जैसे अपने आपको शिष्ट और सम्भ्रात कहलाने के लिए अग्रेजी बोलना आवश्यक है।

आप तो विदेश में रहते हुए भी ठेठ हिन्दी बोलती है '

अरे हाँ मै तो वहाँ भी हिन्दी पढाती रही हूँ।

सच!

हाँ पहले स्कूल मे पढाती रही फिर बाद मे घर मे पढाना शुरू किया आठ-दस बच्चे ऐसे थे जो मेरे यहाँ पढने आया करते थे।

वह अभी बातें कर ही रही थीं कि उनके पास एक सज्जन आ खडे हुए बहके-बहके कदम और लडखडाती हुई जबाँ हाथ मे व्हिस्की का गिलास थामे वह कमलेश की ओर देखते हुए बोले-

डार्लिंग तुम यहाँ हो चलो उधर चले बडे-बडे लोग आये हुए है

कमलेश कुछ सकपका गई। फिर सयत होती हुई बोली 'आइए सुमित्रा जी से आपका परिचय करवा दूँ आप अभी-अभी विदेश से लौटी है। इनके पति का न्यूयार्क में बहुत बडा बिजनेस है

वैरी गुड वैरी गुड आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई । फिर कमलेश ने सुमित्रा जी की ओर देखते हुए कहा-

आप मि माथुर है मेरे बॉस' आजकल मै इन्ही के आफिस मे काम करती हूँ इनकी अपनी विज्ञापन कम्पनी है।

अच्छा तो तुम आजकल विज्ञापन कम्पनी में हो ?'

मि माथुर कमलेश की बाजू पकडते हुए बोले अब चलिए भी वहाँ मि सिन्हा और जोशी जी हमारा इन्तजार कर रहे है।

कमलेश ने विवशता भरी आँखो से उनकी ओर देखते हुए कहा अच्छा सुमित्रा जी फिर मिलूँगी आपसे

औपचारिकता निभाने की शिष्टता मे वह सहज भाव से बोलीं 'जरूर और अपने पर झुँझला उठीं अता-पता मालूम नही और कह दिया फिर मिलूँगी इससे बढकर

औपचारिकता निभाने का और कौन-सा ढोंग हो सकता है। आदमी कितने मुखौटे ओढ़े रहता है?वे मन ही मन सोचने लगी यह मायुर यह सिन्हा कौन होते है कमलेश के पुरी कलकत्ते मे है इतना बता कर उसने बात का रुख बदल दिया था। क्या वह एक दूसरे से अलग तो नहीं हो गए?

जितनी देर कमलेश उसके पास बैठी रही, उनके बारे में ही पूछती रही थी। तब तो उन्हे लगा ही नहीं था कि उसके लिए भी कुछ पूछा जाये और अब उसके चले जाने के पश्चात वह उसके विषय में अपने आपसे पूछने लगी थीं तभी उनकी इस विचारधारा को छिन्न-भिन्न करती हुई मीता वहाँ आ पहुँची और आते ही बोली, "दीदी, इनसे मिलिए ये है कनुप्रिया बहुत अच्छा गाती है। कल इनका भी गाना हुआ था। आप आईं नहीं थीं सुनतीं तो खूब खुश हो उठतीं। बडी अच्छी गजलें गाती है।

उनकी मुस्कुराहट होंठों तक फैल गई, एकटक उस ओर देखती हुई बोलीं, "नाम बडा प्यारा है लगता है इस नाम को बहुत निकट से सुनती रही हूँ " फिर याद करती हुई बोलीं, 'कहीं तुम अरून्धती की बेटी तो नहीं हो?

"जी हाँ आप उन्हें जानती थीं? कनुप्रिया ने सहजता से पूछा।

"हाँ बहुत अच्छी तरह से जानती थी हम लोग दोनो कालेज मे एक साथ थीं, तुम्हारे नाना श्री रामप्रसाद जी एक प्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी थे।'

"ओह आंटी ! आप तो हमारे पूरे खानदान को जानती है। सच, आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई है।"

"मम्मी कहाँ है तुम्हारी '

"जी , वह तो अब नही रहीं। एक उदासी, एक पीडा कनुप्रिया के चेहरे पर व्याप गई जिसे देख वह स्वयं दुखी हो उठीं।

उदासी के उन क्षणो से कनुप्रिया को आहत देख मीता ने बात का रुख बदलने के प्रयत्न में कहा, लोग शायद इधर ही आ रहे है। अभी-अभी मालूम हुआ है अलका जी भी आने वाली है? मुझे उनके स्वागत के लिए जाना चाहिए।कहने के साथ ही मीता सुमित्रा से बोली 'दीदी, हम जाये ।'

हाँ हाँ जरूर " कहते हुए उन्हें एकाएक एहसास हो आया। अब और यहा रूककर करना ही क्या है क्यो न मै अभी ही चली जाऊँ?इसका विचार आते ही वह उठ खडी

हुई और बोली "मीता मैं भी चलती हूँ "

"क्यों कहाँ "

"घर जाना चाहिए "

आप बोर हो रही है न मैं जानती थी तभी तो कहती थी कि मेरे साथ रहिए "

"नहीं वह बात नहीं वैसे ही "

आप बैठिए मैं अभी आती हूँ । वैसे अब तक तो नीता जी को भी आ जाना चाहिए था मैंने गाड़ी तो भिजवा दी थी उन्हें ताकीद की थी कि आप जरूर आइए.. "

"तो ठीक है मैं यहीं इन्तजार करती हूँ "

वह फिर उसी कुर्सी पर उसी स्थान पर बैठ गई। कभी-कभी ऐसा क्यों लगने लगता है जैसे बीते हुए दिन एक अँधेरी गुफा में जाकर खो जाते है, फिर यादों के झटके से एक-एक दृश्य बनकर आँखो के सामने से घूमते हुए चले आते हैं। भारत लौटने के फैसले पर जतेन्द्र ने कितना समझाया था'मम्मी, आपको क्या तकलीफ है यहाँ? सुनीता और बच्चे कितना चाहते है आपको। यहाँ किस चीज की कमी है? हम सब है यहाँ। आप पापा को लेकर अकेली रहेंगी वहाँ और नन्हा राहुल उनकी टाँग पकड़ता हुआ कह उठा था।'दादी हमें छोड़कर मत जाओ। उसकी याद आते ही उनका मन भर आया और रजीता का चेहरा सामने आते ही उनकी आँखे छलछला आई। उन्हें महसूस हुआ जैसे अभी भी वह उनके गले से लिपटती हुई कह रही है-हम बहुत रोयेंगे दादी मत जाइए

एक पीड़ा एक रुलाई उनके तन-मन को झकझोर गई। बच्चे भी क्या सोचते होंगे कितनी निठुर थी दादी लाख मना करने पर भी नहीं रुकी आप तो चली गई साथ में दादाजी को भी ले गई?

आँखो में आया हुआ पानी लम्बी साँस लेते हुए घूँट घूँट पी लिया।

सच ही कितनी जिदद थी उनकी। वह ही तो खींच लाई थी उनके दादाजी को। वरना उन्होने भी तो कहा था-अब वहाँ क्या रखा है सुमित्रा अब दिल्ली हमे अपना नहीं परदेश सा लगेगा। पुराने मित्र अब कहाँ याद रखेगे। सगे संबधी भी तो नहीं है वहाँ? हाँ अर्जुन है वहाँ बस यही एक खींच है आपके लिए

तब वह झुँझला उठी थी। कह देती थी—भाई की खींच बहिन को न होगी तो किसे होगी लेकर-देकर एक भाई ही तो है

यह सुनकर सब चुप लगा जाते थे, मगर जतेन्द्र कह देता था-भाई अपना है और हम आपके अपने नहीं?

जतेन्द्र की बात सुन तब उन्हें भी बहुत बुरा लगा था लेकिन फिर भी उन्हें फैसला यही सुना दिया था'अब इतने बरस आपके साथ गुजार दिए है अब कुछ देर हम तुमसे अलग रहकर भी तो देखें 'कहने को वे कह गई थीं,मगर बाथरूम में जाकर वह फफक-फफक कर रो दी थीं सच, उन्हें छोड़कर आना भी कितना दुष्कर था और फिर अमिता ने भी तो लिखा था-'हमारा ट्रांसफर हो गया है मम्मी, हम लोग अगले हफ्ते ही जा रहे है। तीन साल जिनेवा में रहेंगे फिर उसके बाद न जाने कहाँ जाना होगा। सुधीर भी यही कहते है मम्मी पापा वहीं रहें तो अच्छा है। यहाँ नये सिरे से गृहस्थी चलाने में झंझट उठायेंगे। इतना बडा घर अकेले कैसे चलायेंगी मम्मी। पापा से तो कुछ होगा नही।

फिर आगे लिखा था—'मामा जी भी यही कह रहे थे कि दीदी को समझा दो अभी यहाँ आने की जरूरत क्या है?

पत्र पढकर तब उन्हें अपने भाई पर बेहद क्रोध हो आया था। वे बुदबुदाती रहीं थी कैसा भाई है जो बहन को आने से रोक रहा है। हमारे से उसे कुछ असुविधा नहीं होगी मैं साफ-साफ लिख दूँगी'अर्जुन, तुम्हें हमारे आने पर चिन्ता क्यो होने लगी है। यकीन रखो हम तुम्हें किसी तरह की तकलीफ नहीं देंगे।

पत्र लिखने के बाद उन्होंने एक निश्चितता की साँस ली थी और मन ही मन प्रण किया था कि दिल्ली पहुँचकर सीधा अपने घर वसन्त विहार ही जायेंगे अर्जुन के यहाँ नहीं रूकेंगे।

और सच ही जब वे भारत आईं _दिल्ली पालम हवाई अड्डे पर पहुँची तो उन्होने अपने पति से साफ-साफ कह दिया था अर्जुन अपने साथ ले जाने को कहेगा मगर हम सीधे अपने घर ही जायेंगे। कहीं ऐसा न हो कि मै मना करती रहूँ और आप मान जाये।

दिल्ली पालम हवाई अड्डा । एकाएक उसकी आँखो के आगे चलचित्र की भाँति घूम गया था। एक-एक घटना एक-एक ब्यौरा याद आने लगा। कितनी परेशानी पडती थी उन्हें पहले सामान आने में इतनी देर लगी थी। फिर काउंटर पर की भीड ने रोके रखा। उसके सामान की तलाशी हर एक चीज जाँच-पड़ताल। उनके हजार-बार आश्वासन देने के बावजूद भी कस्टम वाले परेशान करने से बाज नहीं आये थे।

ले-देकर सब था ही क्या ? पहने-ओढे हुए कपडे इस्तेमाल किए हुए रसोईघर के कुछ

उपकरण उपहार स्वरूप मिली छोटी मोटी चीजों पर भी आपत्ति। कुछ सामान साथ लाये और कुछ वहीं छोड़ आये तीन-तीन चक्कर लगाने पड़े तब कहीं जान छूटी थी। अर्जुन ने तो कहा था —'दीदी कोई छोटी-मोटी चीज दे दो इन्हें खामखाह में देर हो रही है?

सुनकर इन्हे कितना आश्चर्य हुआ था कितना गुस्सा आया था। अवसर होता तो वह बहुत कुछ उगल देती

घूस दे भ्रष्टाचार को बढ़ावा देना कहाँ से सीखा है तुमने तुम तो अर्जुन, बहुत बड़े आदर्शवादी और ईमानदार आदमी थे क्या हो गया है तुम्हें?

फिर वहीं खड़ी-खड़ी उन्हे बचपन मे देखी भोगी घटनाएँ याद आने लगी थीं।

स्वतत्रता से पहले देश विभाजन से भी बहुत पहले यही अर्जुन देश की आजादी के लिए जान जोखिम मे डाले रहता था। भाषण देने ओर राष्ट्रीय गीत गाने में उसका कोई मुकाबला नहीं था। आस-पड़ोस वाले आते और माँ को सावधान कर जाते। और माँ अर्जुन के घर आते ही बरस पड़तींतुम खुद तो जेल जाओगे ही हमे भी कहीं का न छोड़ोगे अपना नही तो इस जवान बहन का भी ख्याल रख लो वह जालिम लोग हमें बरबाद कर देंगे

तब अर्जुन अपराधी बना सिर झुकाये सब सुनता रहता था। माँ थाली परोस सामने रख देती तो हाँ-ना किए बगैर अनमना सा रोटी के टुकड़े तोड़ मुँह मे डाल लेता। माँ हाथ पकड़ फिर कह उठती थी।सूखी रोटी खा रहे हो दाल सब्जी तो लगा दिन भर मारा मारा फिरता रहता है। दो वक्त चैन से बैठ रोटी भी नहीं खा सकता। अर्जुन जैसे तैसे थाली खाली कर मुँह हाथ धोने लगता तो माँ पास में जा खड़ी होती। कहतीं-देख मेरे पास तुम दोनो के इलावा और कोई भी नहीं है। तुम्हारे पिता के रहते बात कुछ और थी मगर अब अब कुछ हो गया तो कोई मदद करने वाला भी नहीं है। मेरा कहना मान और मीटिंग आदि मे जाना छोड़ दे।

तब हाथ पोंछते हुए अर्जुन कह उठता था

'ठीक है माँ नहीं जाऊँगा। माँ आश्वासित होती या नहीं यह जाने बिना ही अर्जुन चारपाई पर जाकर लेट जाता और मुँह चादर से ढँप लेता।

पालम ऐयर पोर्ट पर खड़ी-खड़ी वे कितनी ही बातें याद किए जा रही थीं कि अर्जुन ने उनका कन्धा झँझोड़ते हुए कहा था-'कहाँ खो गई दीदी चलो बाहर चलो तब अचकचा कर

उन्होंने देखा था, पोर्टर सामान ले जाने के लिए पूछ रहा है। वे कुछ क्षण पोर्टर की ओर देखती रह गई थीं-यह क्या यह भी अंग्रेजी मे बाते कर रहा है?क्या इसे हिन्दी में बात करने की मनाही है?

"सुमित्रा, अब चलो भी खडी क्यो हो गई हो पहले ही इतनी देर हो गई है आवाज उनके पति अविनाश चन्द्र जी की थी जो बहद थके-थके और झुँझलाए-से थे।

बाहर हल्का धुँधलका-सा था फरवरी का अतिम सप्ताह हवा मे हल्की सी ठडक थी। सामान रखवा गाडी मे बैठी तो पूछा

"यह गाडी नई ली है अर्जुन ? इम्पोर्टिड कार है कितने में खरीदी ?

"यह मत पूछो दीदी बस ले ली है पर चलोगी तो सब बता दूँगा "

उन्हे अपनी गलती का एहसास हो आया था। गाडी ड्राइवर चला रहा था, और वे अपने ख्यालो में डूबी हुई बेखबर सी थी।

गाडी तेज रफ्ता र में थी इधर-उधर निगाह डालते हुए अब वे खूब तरोताजा हो आई थी। जो झुँझलाहट कुछ समय पहले हो गई थी वह अब दूर हो चुकी थी। सडक के आर-पार के खेत-मैदान छोटे-बडे टीले देख म न प्रफुल्लित हो उठा था। सडक के साथ-साथ लाल-लाल रोशनी देख उन्हे अपने देश पर गर्व हो आया। सुन्दर कितना सुन्दर है सब'वहाँ विदेशी यों ही हमारे देश को बदनाम करते है। पिछडा हुआ देश कहते हुए नाक-भौंह सिकोड लेते है?कौन कहता है हमारा भारत पिछडा हुआ है?

सडक का यातायात देख उन्होंने मन ही मन सोचा था-लोग खूब अमीर है। इतनी बडी शानदार गाडियाँ है यहाँ, पैसा है तभी तो'वहाँ के लोग हमारे देश की तरक्की देख नहीं सकते कहते है, गरीब देश है भारत।

ऊँची आसमा न को छूती इमारतें देख पूछ बैठी थीं यह कौन-सी बिल्डिंग है अर्जुन?

"दीदी यह होटल है नया बना है। ऐशियन गेम के वक्त बहुत से नये होटल बने थे.. "

उनकी वयस की सीमा लाँघ बचपन जैसे खिलखिला रहा था उसी की उछल-कूद में वह पूछती जा रही थीं और क्या-क्या बना है अर्जुन'यह सब देखूँगी मै ले चलोगे न ?

बाजू का टहोका लगाकर अविनाश जी ने उन्हें सचेत कर दिया था। वह बार-बार क्यो भूलती जा रही हो कि हम तीनों के अतिरिक्त कोई और भी है गाडी में इतना भी ध्यान

नहीं रहता क्या ?वे अपने आप पर लज्जित सी हो उठी थी और खामोश-सी बैठी शीशे के आर-पार देखती रही थीं कि तभी गाड़ी बडी सड़क को छोड बायीं ओर घूम गई। नेम प्लेट देखकर अनायास ही वह दबी जबाँ मे बोल उठी थीं 'यह क्या ?हमे तो वहाँ जाना था वसन्त विहार'

चौकीदार ने गेट खोल दिया था और गाड़ी भीतर पहुँचकर रूक गई थी, नीचे उतरते हुए उन्होंने देखा मीता अर्जुन की पत्नी दरवाजे पर खड़ी थी।

दीदी आप आ गई " मीता ने आगे बढ़कर उनके दोंनो हाथ थाम लिए थे। और उन्होंने मीता को अपने सीने से लगा जोर से भींच लिया था। ओह, कितना अपनत्व है, कितना सुखद कितना शीतल'वह भाव-विभोर हो उठी थी। मीता उन्हें भीतर ले गई थी और ड्राइंग रूम मे बिठला कर वह चाय आदि के लिए वह किचन की ओर बढ़ गई थी।

ड्राइंग रूम मे बैठी वे इधर-उधर का अवलोकन करने लगी थीं। खूब बड़ा-सा सुसज्जित ड्राइंग रूम देख उनके आश्चर्य का ठिकाना नही रहा था। बढ़िया आरामदेह फर्नीचर दीवार से दीवार तक लगा कथई रंग का बढ़िया कालीन। जिधर निगाह दौडाती वहीं कलात्मक सुन्दर मूर्तियाँ दिखाई दे जातीं एक-एक चीज सुन्दर और कीमती थी।

अर्जुन उन्हें भाँप रहा था इसी से बोला "घर कैसा है दीदी?

घर घर तो बहुत सुन्दर है केवल सुन्दर ही नही भव्य और आलीशान भी है।'

अविनाश चन्द्र तो मन्त्रमुग्ध से चारो ओर देख रहे थे। इतना सब कब और कैसे कर लिया है! लिखा तो था कि शान्तिनिकेतन मे एक मकान खरीद रहा हूँ मगर घर इतना बड़ा और इस कदर खूबसूरत होगा इसकी तो उन्होंने कल्पना भी नही की थी।

उनका ध्यान अपनी ओर खींचते हुए अर्जुन बोला जीजा जी चलिए आपको बाथरूम दिखाता हूँ हाथ-मुँह धोकर ताजा हो लीजिए तब तक चाय आ जाती है मीता बना रही है।

'इसकी अभी क्या जरूरत थी।

'जरूरत कैसे नहीं थी रात भर के थके हुए हो ।'

"सिर्फ एक ही रात नहीं दो रातें कहो। अमेरिका से लन्दन आये फिर वहाँ से यहाँ पहुँचे। दो-तीन दिन यों भी मिलते-मिलाते और तैयारी करने मे लग गए।' सो तो है ही

दीदी लेकिन अब तो आप चाय पीकर आराम करेंगी और जीजा जी आप भी। जल्दी से हाथ-मुँह धो लीजिए मै तब तक आपका सामान ले आता हूँ ।"

"नहीं नहीं सामान वहीं रहने दो अर्जुन।उतारने-रखवाने का झंझट क्यो करते हो "

"थोडी देर मे तो हमे जाना ही है।"

"घर ? '

"घर और कहाँ ?

"क्या कह रही हो दीदी।इतनी जल्दी क्या है, दो-चार दिन बाद जाना। अभी तो सफाई आदि भी करवानी होगी ।"

भाई का स्नेह और उत्साह देख वे गदगद हो आई थीं। नाहक ही उसे खत लिखकर आहत किया। उन्हें अपने पर ग्लानि हो आई। ले देकर एक ही तो भाई है उसके लिए भी इतनी छोटी बात सोचना कितना बडा अन्याय है।

स्नेह और प्यार से वे भीतर तक भीग उठी थीं। फिर कुछ याद करती हुई कह उठी थीं—

'अरे बच्चे कहाँ है सो रहे है क्या ?

"बच्चे "हँसते हुए अर्जुन ने कहा था ' वह तो यहाँ नहीं है दीदी।'

"यहाँ नहीं है, क्या मतलब? '

'विकास देहरादून में है दून स्कूल मे और विभा शिमला मे। अभी चार-पाँच दिन हुए उन्हें गए हुए। छुट्टियों मे दोनो आये हुए थे आपसे मिलने को बहुत उत्सुक थे लेकिन दीदी अगले महीने उनकी दो हफ्ते की छुट्टियाँ होंगी तब बुलवा लेंगे।

वह कुछ कहने को हुई कि जाने क्या सोचकर चुप लगा गई दिल्ली में अच्छे से अच्छे स्कूल है उन्हे होस्टल में भेजने की क्या जरूरत पड गई ।

हाथ-मुँह देखे हुए वे देखे जा रही थीं। तमाम चीजें विदेशी है वाश-बेसन बाथ टब शावर एक ओर की पूरी दीवार पर शीशा लगा है वह भी यहाँ का नहीं और टावल रॉड साबुनदानी साबुन तौलिया। श्रृंगार का पूरा साज-सामान सभी कुछ कीमती और विदेशी ।

इतना बडा परिवर्तन 'उस भाई मे जो हमेशा खादी पहना करता था और घर में किसी विदेशी चीज को देख नहीं सकता था। माँ के हजार मना करने पर भी उसने अपने घर के

तमाम विदेशी कपडे और चीजे उठा-उठाकर गरीबों में बाँट दी थीं। कहता था- माँ मैने इन कपडो की होली नहीं जलाई भूखे-नगे लोगों मे बाँट दिया है। तुम्हे तो खुश होना चाहिए कि मैने किसी का भला किया है।

स्वतत्रता प्राप्त करने के लिए तन-मन और धन न्योछावर करने वाले भाई का वह प्रण स्वदेशी चीजो के प्रति वह आदर और वह प्रेम कहाँ गया अब? उसे याद आया प्रारम्भ मे अर्जुन ने बहुत सघर्ष किया था। स्वतत्रता के पश्चात कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पडा था। न रहने का ठौर न गुजारा चलाने का सुभीता। जो छूट गया उसके बदले मे भी क्या मिला था। एक छोटा-सा मकान। वह भी कई मुसीबतों के बाद वकालत पास अर्जुन नौकरी पाने के लिए मारा-मारा फिरता रहा था। इस बीच माँ की बीमारी ने तो इस कदर तोडकर रख दिया था कि इलाज के लिए पैसे नही रहे थे। माँ को सतोष था तो बस एक इसी बात का कि लडकी की शादी ठीक समय पर हो गई है वरना इस उखडी-पुखडी हालत मे यह भी कुआँरी रह जाती। तभी अर्जुन की आवाज सुनकर वे चौंक उठी थीं और फिर जल्दी से मुँह पोंछ बाहर आ गई थी। बाहर आते ही अविनाश जी ने बताया था-

'सुना कुछ अर्जुन ने कन्स्ट्रक्शन कम्पनी खोल ली है। बहुत बडा ठेका मिला है इसे ?

'मुझे नहीं जीजा जी कम्पनी को मिला है मालिक मै नही हूँ हिस्सेदार हूँ

कौन-सा ठेका लिया है ? चाय का घूँट पीते हुई वे पूछने लगी थीं।'

'लीबिया में हमारी कम्पनी को एक बहुत बडे प्रोजेक्ट के लिए कान्ट्रेक्ट मिला है बस अगले महीने मै जा रहा हूँ।

क्या तुम जा रहे हो?

हाँ दीदी दो-तीन महीनों के लिए ही आऊँगा।

और वह प्रेक्टिस का क्या हुआ? '

मीता ने जवाब दिया था 'उसमें रखा ही क्या था दीदी मुश्किल से गुजारा ही जो चलता था सो पापा ने कहा इस तरह से रेगने में क्या मिलेगा। यह छोडो और हमारे साथ काम में हाथ बँटा दो पहले तो ये मानते नहीं थे। फिर मेरे बहुत जोर देने पर और बच्चों की पढाई आदि के खर्च की समस्या ने इन्हें मना ही लिया।

और यह कोठी भी नयी बनाई होगी?

"नहीं दीदी बनवाई नहीं बनी-बनाई खरीदी है।" चाय के प्याले में चम्मच हिलाते हुए

अर्जुन ने कहा "पापा ने उस मकान को खरीद लिया था। उसकी जगह पर अब चार मंजिली बिल्डिंग बन रही है उसमें आठ फ्लैट बनेंगे।

"कौन-सा मकान?मै समझी नहीं।

"वही अपने वाला जहाँ हम रहते थे।" वे कुछ और पूछतीं तभी मीता ने बताया पापा ने यह मकान खरीदा। साथ मे लगा कोनेवाला मकान भी खरीद लिया। अब दीदी वहाँ फ्लैट बन रहे है। इन फ्लैटो मे हमारा भी हिस्सा है। पापा कह रहे थे अगर फ्लैट रखना चाहो तो ठीक है। वरना उसके बदले पैसा मिल जायेगा " वे चुपचाप चाय पीती रहीं और उस घर को याद करती रहीं जहाँ माँ थी और माँ के साथ जुडी अनेक बाते थी।

अर्जुन बताने लगा "फ्लैटों की बुकिंग पहले से ही हो गई थी और पैसा भी एडवास मे मिल गया था। फ्लैट खूब अच्छे बनेगे '

'तैयार हो चुके है? अविनाश जी ने पूछा तो अर्जुन ने कहा-

'हाँ, एक तरह से तैयार ही समझो, दो बैडरूम एक ड्राइंग डाइनिंग दो बाथरूम किचन बालकनी सब सुविधाएँ होंगी। जगह भी अच्छी है। सामने खुला पार्क मैने तो अमिता से कहा कि तुम लेना चाहो तो तुम्हारे लिए रख लेते है मगर उसने मना कर दिया था।

मीता हँसते हुए बोली थी, इतनी बडी वसन्त विहार की कोठी मे रहते हुए फ्लैट का सपना सोचना कहाँ की समझदारी होगी। क्यो दीदी, ठीक कह रही हूँ न

'हूँ बात उन्होने पूरी सुनी भी नहीं थी। याद आ रहा था तब जब वसन्त विहार की कोठी खरीदी थी तो उन्हें बार-बार अपने भाई का ख्याल ही आता रहा था कि कितना अच्छा होता अगर अर्जुन के पास भी इतनी बडी कोठी होती। तब उन्हें न अमिता का ख्याल आया था न जतेन्द्र का और आज उसी अर्जुन का घर देख उन्हें जितनी खुशी हुई थी, उस खुशी मे एक कसक एक असन्तोष भी हो रहा था। रह-रहकर एक ही ख्याल आ रहा था।अपने आदर्शो को इसने तिलांजली कैसे दे दी?यह इतना बडा परिवर्तन इसमे आ कैसे गया?विदेशी चीजो की भरमार और स्वदेशी वस्तुओं का अभाव वे सोचती-सी कई प्याले चाय के खत्म कर गई। चाय पीते हुए और बातें करते हुए सुबह हो गई थी। अखबार वाला अखबार फेंक गया था।

एक साथ इतने अखबार उलटते-पलटते हुए उन्होंने पूछा था, "इतने सामाचार पत्र मँगवाते हो लेकिन हिन्दी का एक भी नहीं।"

'दीदी हिन्दी यहाँ पढता ही कौन है

सुनते ही वे अपमानित सी हो उठीं थी। उन्हें लगा था अर्जुन ने उन्हीं का अपमान किया है। फिर भी वे पूछ बैठी थीं 'बच्चे भी हिन्दी जानते है कि नहीं? जबाव दिया था मीता ने 'यहाँ माडर्न स्कूल में थे तो पढते थे। यहाँ कि हिन्दी का स्तर ऊँचा है, मगर अब दून स्कूल मे मालूम नहीं। लेकिन विभा कान्वेन्ट मे है वह ज्यादा अग्रेजी में ही बोलती है इसलिए पेपर हो या मैगजीन ही सब इगलिश के ही मँगवाते है।

मीता की बात को सत्य प्रमाणित करते हुए अर्जुन ने कहा था "हिन्दी के समाचार पत्रों म खबरें भी तो पूरी नहीं होतीं। इतनी कम और सक्षेप मे होती है कि उन्हें पढने के बाद अग्रेजी का समाचार पढना जरूरी हो जाता है।'

सुनते हुए उन्हें अचरज सा हो रहा था। भारत स्वतत्र नहीं था तो घर मे समाचार पत्र हिन्दी का ही आता था। पिताजी अग्रेजी खबरों की जानकारी रखने के लिए अग्रेजी पत्र मँगवाते थे मगर महज एक जानकारी प्राप्त करने के लिए। तब अर्जुन को भी कहते थे अग्रेजी का ज्ञान होना जरूरी है मगर प्रेम अपनी मातृभाषा से ही होना चाहिए। और सुमित्रा तुम भी सुन लो अग्रेजी का ज्ञान एक दूसरी भाषा सीखने तक का है, ताकि जरूरत पडने पर इसका उपयोग किया जा सके। लेकिन अपनी भाषा हिन्दी है इसका आदर करना न भूलना।

और आज आज अर्जुन ही कह रहा है हिन्दी के समाचार पत्रो में होता ही क्या है?

सुनकर वह एकदम निराश और उदास सी हो उठी थीं। उन्होंने कहना चाहा था कि अर्जुन हम तो न्यूयार्क में बैठे भी अपनी भाषा का गुणगान किया करते थे। और जहाँ तक हो सकता था कोशिश यही किया करते थे कि घर पर हिन्दी ही बोली जाये पूछो इनसे हमारे घर कितनी हिन्दी की पत्र-पत्रिकाएँ आया करती थी और कितने चाव से पढी जाती थीं मगर वे कुछ कह न सकी थीं उन्हे यह सब कहना बेकार-सा लगा था। शायद बहुत गहराई तक जब कोई बात अनुभव की जाती है तब उसे जबाँ तक लाना मुश्किल हो जाता है।

"क्या सोच रही हो दीदी?

'कौन ?'वे एकाएक चौंक उठीं।

मै तो कितनी देर से यहाँ बैठी हूँ और देख रही हूँ कि आप किसी गहरी चिन्ता में डूबी

हुई है "

"चिन्ता हाँ नहीं तो लेकिन तुम, तुम कब आई हो?

एक लम्बी थकी-सी साँस लेती हुई मीता बोली "कुछ देर हो गई है। खडी-खडी थक गई थी, सोचा थोडी देर आराम कर लूँ। फिर इन लोगो के जाने के वक्त मुझे फिर से खडा होना पडेगा ' फिर कुछ रूक कर बोली "पार्टी कैसी लगी दीदी?"

'अच्छी रही खूब अच्छी काफी लोग आ गए है।'

'काफी भी और अच्छे भी अच्छे इस ख्याल से कि खूब बडे-बडे महत्वपूर्ण लोग आये है। मुझे तो डर था कि अगर वह लोग नहीं आये तो मेरी बेइज्जती हो जायेगी नुकसान जो होगा सो होगा ही लेकिन सबके आगे शर्मिन्दा भी होना पडता "

"बहुत मेहनत की है तुमने '

मेहनत ? कुछ पूछो मत दीदी पूरा हफ्ता-भर इसी में बीत गया है। सारा-सारा दिन काम करती रहती हूँ। अजन्ता कला केन्द्र वालों ने पूरा का पूरा इतजाम मेरे सुपुर्द कर रखा था '

"वह क्यो ?

"मै वहाँ कि सेक्रेटरी जो हूँ "

"अच्छा मुझे तो मालूम नहीं था लेकिन यह शौक हुआ कैसे?

"शुरू-शुरू मे मै स्टेज की सजावट आदि का काम करती थी फिर धीरे धीरे उन लोगो ने यह सब काम भी मेरे ऊपर छोड दिया अब तो इन आयोजनों के लिए पूरा प्रबन्ध मुझे ही करना पडता है।

'बडी मेहनत करनी पडती होगी। '

"मेहनत? ओफ कुछ पूछिए मत मै भागदौड करते हुए थककर चूर हो गई हूँ ।

"वह तो होगा ही समाज में प्रतिष्ठित होना और प्रसिद्धि पाना कोई आसान काम नहीं है इसके लिए लगन और परिश्रम से काम करना पडता है ' कहने के साथ ही उन्होंने कनखियों से मीता को देखा जिसका चेहरे पर गर्व और सतोष झलक रहा था। कुछ क्षण चुप रहने के पश्चात मीता बोली-

"इस तरह की बडी-बडी पार्टियाँ एरेंज करने के लिए और भी बहुत से लोग मुझ से कहा

करते हैं। उन्हे विश्वास हो गया है कि मै जिस पार्टी का इतजाम करूँगी वह बहुत बहुत बढिया इतजाम होगा और पार्टी सफल भी रहेगी "

"बडी खुशी की बात है अर्जुन और तुम मिलकर अपना होटल क्यो नहीं खोल लेते?"

अमिता हँस पडी। फिर गम्भीर होती हुई बोली

'बात तो दीदी ठीक कही आपने इस पर तो मैने कभी सोचा हा नहीं।'

'मैने सुझाव दे दिया है अर्जुन से बात कर लेना।'

'वह तो मै करूँगी ही मगर एक शर्त है आपको भी अब इस काम में शामिल होना पडेगा।

एक बुझी-सी परन्तु तीखी व्यग भरी मुस्कुराहट उनके होठों तक फैल गई। काम की अति व्यस्तता और भीड-भाड के जिस वातावरण से बचने के लिए वे बरसों से बसा हुआ बसेरा त्याग जिस शान्त और एकान्त की खोज मे यहाँ आ पहुँचे थे वह शान्त वातावरण है कहाँ?

दुनिया किस तेजी से बदल गई है इसका प्रत्यक्ष प्रमाण उनके सामने था। यह शोर, यह जमघट यह बनावटीपन और इसकी तो कभी उन्होने कल्पना भी नही की थी, पैसे और शोहरत के पीछे लोगो की यह दीवानगी। इसका तो कभी विचार ही नहीं आया था। एकाएक उन्हे लगा जैसे वे यहाँ आकर एकदम अकेली पड गई है। इतने बडे जनसमूह में उनकी कोई पहचान नहीं कोई अपना स्थान नहीं। अधीरता से वे एकदम बोल उठीं "उनके आने का कोई विश्वास नहीं मीता मै टैक्सी मे चली जाऊँगी " और वे उठकर खडी हो गई।

मीता ने उनकी बाँह पकडते हुए कहा-

'दीदी आप थोडा और रूक जाइए मै फोन कर लेती हूँ इस समय अकेले कैसे जायेंगी कहने के साथ ही वह जाने को हुई कि देखा अविनाश और अर्जुन उन्हीं की ओर चले आ रहे है।

'लीजिए देखिए दीदी अब तो विश्वास हो गया कि नहीं '

'क्यो क्या हुआ ?" अर्जुन ने हँसते हुए पूछा तो मीता बोली 'दीदी परेशान हो रही थी घर जाने के लिए इस कदर अधीर कि क्या बताऊँ?आप भी जीजी जी कमाल के है इन्हीं के साथ ही आ जाते तो क्या बिगड जाता।'

'क्यो क्या हुआ ।

"अब इन्हीं से पूछिए न आपके बिना तो इनका मन कहीं लगता ही नहीं क्यो दीदी यही बात है न अपनी खाली कुर्सी पर अविनाश जी को बिठलाती हुई मीता अर्जुन से बोली ' कितना अच्छा होता जरा पहले आ जाते तो इतने बडे-बडे लोग से मिलना भी हो जाता और काम की बाते भी हो जातीं। मि देव प्रकाश जी आपके लिए पूछ रहे थे क्यो दीदी आपसे देव प्रकाश जी की मुलाकात हुई की नहीं '

उन्होंने अचकचाते हुए कहा, "देव प्रकाश?कौन देव प्रकाश?

'यहाँ के मेयर है जीजा जी, हमारे यहाँ तो खूब आना जाना है उनका किसी दिन घर पर बुलायेंगे उन्हें।"

सुमित्रा जी उकता उठीं थीं उन्होंने अविनाश की ओर देखते हुए पूछा- "आप यहाँ रुकना चाहेगे? '

'क्यो क्या बात है।

कुछ नहीं, यूँ ही, सिर जरा भारी है मै घर जाना चाहूँगी।'

"मुझे क्या करना है यहाँ चलो।' फिर उन्होंने अर्जुन की ओर देखते हुए कहा, "यह लोग रुकना चाहे तो रुक सकते है क्यो अर्जुन हम, चलते है आप लोग बाद में आ जाना "

' कुछ लोग है अभी यहाँ उनके जाने तक मुझे तो रुकना ही पडेगा क्यो अर्जुन आप तो मेरे साथ चलोगे न

'ठीक है जीजा जी आपको ड्राइवर छोड आता है

इसकी क्या जरूरत है हम दोनो है टैक्सी ले लेगे आप चिन्ता न करो कहने के साथ ही सुमित्रा जी अविनाश के साथ चल पडी।

टैक्सी में बैठते हुए अविनाश जी ने बताया गुडगाँव मे जो फर्म का सौदा तय होना था वह नहीं हुआ। दलाल अपनी जबाँ से फिर गया है।

' अच्छा ही हुआ फर्म ले लेते तो हमेशा के लिए यहीं बँध जाते। फिर रुकते हुए बोलीं आज शनिवार है जतेन्द्र और बच्चे घर पर ही होंगे चलकर फोन करेंगे उन्हें

टैक्सी गेट के बाहर निकल चुकी थी और रेडियो पर गीत लहरा उठा था--'चल उड जा रे पंछी कि अब यह देश हुआ बेगाना'



मिलनी

-पद्मा सचदेव-

निम्मो अपने शहर की सच्ची अफवाह थी। बचपन और जवानी के बीच का रास्ता तंग हो चुका था। इतना तंग कि उसमे से उसकी अपनी साँस का गुजर भी मुश्किल से होता था। एक ऐसी घाटी के किनारे पर खड़ी थी निम्मो जहाँ दोनों तरफ खाई थी। इधर बचपन उधर जवानी लड़खड़ाते पाँव। अब कौन-खाई मे गिरेगी इसका पता न था। हर रात गुजरने के बाद ये खाईयाँ और गहरी हो जाती थी। उनमे ऊपर से कोई ठीक वैसे ही अखबारों की कतरनें फेंकता रहता था जैसे १२० फुट ऊँची सीढ़ी से छलाँग लगानेवाला कागज फेंककर हवाओं का रुख देखता है। अखबारों के ये कागज भरे होते पर उड़ते हुए उन कागजो पर उसे सिर्फ अपना नाम दिखाई देता था। निम्मो निम्मो निम्मो इसके आगे वह पढ़ना भी नहीं चाहती थी क्योकि वो जानती थी उसमे जो भी लिखा होगा वह उसी की जिन्दगी का कोई न कोई वाकया होगा जिसने कभी उसे दगा दी होगी। इस बात का उसे फिर भी यकीन था कि उसकी जिन्दगी का कोई लम्हा दगाबाज नहीं हो सकता। दगाबाज है वक्त जिसने उसे आग की एक ऐसी भट्ठी म फेंक दिया था जिसकी गर्मी की ताब लाना मौत को गले लगाने से ज्यादा मुश्किल था। उस भट्ठी के दहकते अंगारों से उसकी चमड़ी की ऊपरी परत झुलस गई थी तब उसने भट्ठी के बाहर छलाँग लगा दी थी। पता नहीं कहाँ से हिम्मत जुटाई थी। सिर्फ अपनी हिम्मत से भट्ठी के दहकते किनारो को हाथो से पकड़कर वह बाहर आ सकी थी। किसी ने भी उसका हाथ पकड़कर उसे ऊपर नहीं खींचा था। फफोले पड़ा दिल लिए जब वह बाहर आकर खड़ी हुई थी तब कुन्दन-सी दमकती उसकी देह देखनेवालों की आँखें खुली रह गई थीं।

आज भी कितना दहकता हुआ है माजी का ख्याल। फिर भी अपने वकील शौहर की घनी छाँव मे वह सब भूल गई है। पर लोग क्यो नहीं भुला पाते उसका अतीत। तभी बिशनी मौसी की आवाज उसके कानो मे पड़ी-

निम्मो अपनी मौसी की मदद न करोगी बेटी। मौसी के स्वर में याचना थी।

वह धीरे- से बोली—- 'मौसी इस उम्र में मौसा को छोड़ना चाहती हो जब बिल्लू जवान हो गया है। कल इसकी शादी होगी तो बाप की मिलनी कौन करेगा?

"भाड में गई मिलनी और भाड में गया बाप। आज का ये लम्हा मैंने बरसों अपने सपनों मे इसी तरह कददावर जवान सजीला खड़ा देखा है। इसी के इंतजार में मैंने बरसों काटे है। आज सवेरे फिर लालाजी बिल्लूके ब्याह की बात कर रहे थे। मैं तुम्हारे मौसा को इसी समय फारगाती देना चाहती हूँ, जब उसकी सबसे ज्यादा बेइज्जती होगी।" यह कहकर मौसी हाँफने लगीं। वक्त का फायदा उठाकर निम्मो बोली, 'जब उसके कदम तुम्हारी दहलीज के पास आकर रुक गए हैं। जब वह अन्दर आने के लिए तुम्हारे इशारे के इन्तजार मे है, जब—"

"हाँ ठीक, यही वक्त ठीक है उससे असहदगी का यही वक्त है जब वह और कहीं नहीं जा सकता। जब कोई छिनाल बाल खोले उसका इन्तजार नहीं कर रही है।" मौसी नफरत से बोली।

"पर मौसी सारे शहर मे मौसा का नाम जपते है। उनके मरीज उनकी पूजा करते है। तुम पगला गई हो। बिल्लूक्या सोचेगा?क्या वह सह पाएगा यह बेइज्जती?"

"माँ की बेइज्जती तो उसने बचपन से देखी है निम्मो!उसे आदत है इस सबकी। और बाप की कैसी बेइज्जती?जितनी औरते मर्द रखता है, उतनी ही उसकी शान और इज्जत बढ़ती है। सारे शहर मे कौन ऐसा है जो नहीं जानता कि डा सुदरलाल की सत्तो नर्स से घनिष्ठता है।"

'किसी की हिम्मत तो नहीं हुई कहने की और आज तक तो तुम्हें भी न हुई थी। पीठ पीछे तो लोग राजा की भी बात करते है।' निम्मों ने कहा।

"गोली मार राजा को। तुम कुछ नहीं करना चाहती तो साफ-साफ बता दो। ये लारा-लप्पा मुझे अच्छा नहीं लगता। मेरे सामने गली में गिट्टे खेलती थी अब मौसी की बातों पर पत्थर मार रही हो। चुड़ैल कहीं की।

'मौसी, मेरी बात सुनो, ये मामले क्या जल्दबाजी में तय होते है।

"क्या कहा जल्दबाजी ये मै जल्दबाजी कर रही हूँ?

"नहीं पर मौसी आज रात और सोच लो, मौली के बाप आफिस से आ जाएँ तब मै बात करती हूँ।"

मौसी ने सर्पिणी-जैसी फुफकार छोडते हुए कहा "चल छोकरी मुझे बनाती है। जैसे आज की रात मै कुछ नया ही तो सोचूँगी। बाईस सालों में कितनी रातें होती हैं बताओ तो?

हिसाब लगा के देखो? तुम तो पढ़ी-लिखी हो। मैंने यह हर रात तुम्हारे मौसा से छुटकारा पाने की सुबह के इंतजार में बिताई [illegible]। मेरा बस चले तो इसे टोटे-टोटे करके मारूँ, तरसा-तरसाकर मारूँ, जैसे मैंने अपनी जिन्दगी के टोटे-टोटे करके वक्त की झील में डुबो दिए हैं। जैसे मैं सुहाग के लिए बरसों तरसती रही हूँ। इज्जतदार डाक्टर साहेब! अपने घर मे अंधेरा करके दूसरों के दिए मे तेल डालते रहे। चलो, कल ही सही, पर टालना नहीं। अब मैंने इरादा पक्का कर लिया है ये तुम भी सोच लो। अब मैं इसे उजाड़कर ही दम लूँगी। सोचा था तुम्हें सब पता है इसलिए तुम अपने वकील पति से कहकर सब ठीक कर दोगी। '

झिझकते हुए निम्मो ने कहा, "मौसी, नाना से बात कौन करेगा?और फिर मौसा तुम तो जानती हो यह सब सह नहीं पाएंगे।"

'निम्मो, कितनी बार देखा है तुमने मौसा को मेरे घर मे?क्या तुम्हें कुछ भी याद नहीं? चली है मौसा की हिमायत करने!क्या लगता वह तुम्हारा?जो अपनी ब्याहता का नहीं हुआ वह और किसका होगा बेईमान कहीं का। इसकी बेड़ी में पत्थर तो मैंने हर रोज डाला है। अब एक-दो पत्थर ही और पड़ेंगे और इसकी इज्जत की नाव डूब जाएगी। हूँ, बड़ा डाक्टर साहब बना फिरता है---सफेदपोश कहीं का।'

यह कहकर मौसी तेजी से जाते-जाते दरवाजे पर जाकर रुकी। दरवाजे की चौखट पकड़कर उसने अपने तरकस में से आखिरी तीर छोड़ा जो निम्मो के अतीत को चीरता हुआ कलेजे मे आ लगा---

"निम्मो, ये आग आज मेरी है। इसीलिए तुम्हारे दिल में दु:ख का धुँआ नहीं उठता। अपना वक्त था तो कैसे अकेले ही सब किया था तुमने। तब कौन गया था तुम्हारे साथ अदालत मे?बोलो तब किसने तुम्हें सहारा दिया था?उस मुए शकर ने तो तुम्हारे पीछे गुंडे लगा रखे थे। मैंने ही अपनी लकड़ियोंवाली कोठरी में तुम्हें इतने दिन छुपाया नहीं तो क्या आज तुम वकीलन बनकर ठसके से इस कोठी में रहती।उस मुए शकर ने तुम्हारी बोटियाँ भी यवी नदी में बहा दी होतीं। जरा पता है तलाक कैसे लेते है तो एकदम दिमाग ही आसमान पर चढ़ गया है। बड़ी मौसा की सगी बन रही [illegible]'

निम्मो को अपने अतीत की ये छुरी कलेजे में फिरती-सी महसूस हुई। पर मौसी के वर्तमान के आगे का अतीत बड़ा बौना था उसने मुस्करा कर कहा "मौसा तो तुम्हारी वजह से है। तुम्हारी शादी काले चोर से होती तो वही मेरा मौसा होता।"

मौसी भी थोडा नर्म पडी कहने लगी 'काले चोर से होती तो अच्छा था। इस बुरे से तो न होती जिसने मेरी जिदगी का एक-एक लम्हा सालों के विरान जगलो के सूखे दरख्तो के साथ टाँग दिया।

यह कहकर मौसी एक ठडी साँस के साथ ही बाहर निकल गई। निम्मो अपना दरवाजा पकडे उसे जाता देखती रही। आज मौसी की चाल मे वह बात न थी जो बाईस बरस पहले थी। वहीं खडे-खडे निम्मो को वह शाम याद आ गई।

शाम की आमद में आँगन भूरा भूरा सा हो रहा था। आँगन में गुलाबी रग तथा अबरक से चमकते दुपटटे ओढे दो औरतें बैठी थीं। कलफ लगे दुपट्टों पर पडी चुन्नटों मे छिपे उनके मुँह इस धुँधियाले मे भी चमक रहे थे। एक थी निम्मो की चाची और दूसरी उनकी सगी सहेली मासी बिशनी। अपने-अपने दुपटटों के कोने नजाकत के साथ अँगुलियों से थामे दातो मे दबाए शाम के वक्त और उन्नाबी पड गए अपने हाथो के बीच चमकते दाँतो से चिथियाए दुपट्टे की ओट में दबी जबान से कुछ खुसर-पुसर कर रही थीं। निम्मो को देखते ही चाची बोली थी 'लो आ गई निम्मो। आज इसके स्कूल मे मास्टरनियों की पार्टी थी।'

मासी बिशनी को सुनाते हुए चाची बोली ऐसी मुस्टडी मास्टरनियाँ किसी और स्कूल मे न होगी। आए दिन इनकी पार्टियाँ होती रहती है। लडकियो के साथ घरवालो की भी मुसीबत हो जाती है।"

निम्मो ने अपना झोला भीतर चारपाई पर रखा तो उसके पीछे स्कूल का चपरासी हाँफता हुआ आ खडा हुआ था।

चाची ने ही हाथ लगाकर उसका टोकरा नीचे उतरवाया था।

निम्मो ने बाहर आकर एक बार टोकरे मे नजर डाली थी। दरी चद्दर, कोयलो की अँगीठी और बरतन सभी कुछ थे। उसने चौकीदार को चवन्नी दी और टोकरे मे से चीजें उठाकर भीतर रखने लगी। तभी चाची की आवाज कानो में पडी चाचा और भतीजी दोनो हातिमताई है झट से उसे चवन्नी दे दी। निम्मो को पता था चाची जानती थे निम्मो की निजी सम्पत्ति में से दी गई है। पर बिशनी मौसी पर रौब गालिब हो गया था।

उसी दिन दोनों की बातचीत के बाद यह तय पाया था कि निम्मो बिशनी मौसी के पास सोया करेगी। निम्मो वहाँ आराम से पढ भी सकेगी और मौसी को रौनक भी हो जाएगी।

निम्मो को भला क्या आपत्ति होती। सामने गली मे ही तो मौसी का घर था। उसी दिन वह अपनी किताबें मौसी की चारपाई के पीछे बने आले में सजा आई। मौसा का ट्रासफर

पारो की तरह मूर्खता न करेगी। क्या कर लेंगे लोग?और तभी उसके भीतर विद्रोह का बीज पड गया था। किताब लिए- लिए जब थक जाती छत पर चहलकदमी करती रहती। न सूरज डूबने का पता चलता, न चाँद उगने का।

नीचे से जब भुने हुए करेलो की महक ऊपर तक आती तब वह चौंकती। आहा, आज मौसी ने फिर अनारदाने के भरवा करेले बनाए है। उसे कितने अच्छे लगते है करेले। मौसी अपनी इस रौनक का कितना ख्याल रखती है।

और फिर वह शाम भी कैसे बादल को चीर कर बिजली की तरह कौंधी जा रही है। जब वह उगते तारों की रोशनी में भी कुछ-कुछ धुँधलाए अक्षर पढने की कोशिश कर रही थी। तीन चार छतें छोडकर एक बडी-सी छत पर एक साया टहलता-सा नजर आया था। अँधेरे में हाथ उछालता वह साया, किताब को दीवार पर टिकाए बेचैनी से टहल रहा था। आज तक तो निम्मो ने उस छत पर किसी को न देखा था। वहाँ कौओं या कबूतरों के अलावा कोई न होता था। पर उस छत को वह जानती थी।

वही एक छत थी जिस पर पुरानी बाल्टियाँ, ड्रमों मे खुशबूदार मोतिया रात की रानी या तुलसी लगे हुए थे। रात की रानी की सुगंध गर्मियों में छत तक आती थी। कोई हठीली हवा का झोका सुगंध को अपनी आगोश में भरकर कई छतों पर भटकने के लिए छोड जाता था। अचानक वह साया थम गया। निम्मो ने देखा वह उसी की तरफ देख रहा था। डर के मारे निम्मो ने किताब भी न उठाई। हाँफती हुई नीचे आ गई। मौसी ने हाथ में जलती लकडी को पकडकर निम्मो की ओर देखा।

"निम्मो क्या हुआ?

निम्मो ने घबराकर कर कहा छत पर साँप था मौसी'

"साँप और मेरे घर मे?इस बिजली को भी अभी जाना था' लालटेन जला मौसी छत पर आई थी। कहीं भी साँप न था। सामने की छत पर खडी स्तब्ध काया भी सीढियो की तरफ बढ रही थी। निम्मो किताबें समेटकर नीचे आ गई थी।

दूसरे दिन वह चाची के घर से ही खा-पीकर आई थी। मौसी ने पूछा था 'आज छत पर नहीं गई?साँप से डर लग रहा होगा?

निम्मो हँसकर बोली थी 'नहीं मौसी यहाँ कौन डरता है?अगर मै डरकोप होती तो तुम क्या रात को सुलाने मुन्नी को बुलाती?लो मै जा रही हूँ। डूबता सूरज देखूँगी उगता चाँद तभी आऊँगी।'

पुछ हो गया था। और मौसी एकदम अकेली थी। मौसी निम्मो को हाथ में छाले की तरह रखती थी। रोज़ शाम को उसका इंतजार करती रहती थी।

कभी-कभी मौसा जब पुछ से आते तो निम्मो के लिए भुनी हुई मकई के दाने लाते थे। निम्मो को ये दाने बहुत अच्छे लगते थे। अपनी दोनों जेबों में भरकर वह अपने घर आ जाती। उसकी चाची के घर तब कोई बच्चा न था। इसीलिए आगे पढ़ने के लिए चाचा ने गाँव से उसे यहाँ बुला लिया था। शहर में निम्मो के माँ-बाप कभी-कभी उसे मिल जाते थे पर गाँव की याद छुट्टियों में उसे खींचकर गाँव ले जाती। चाचा काश्मीर ले चलने का लालच देते मगर बेसूद। निम्मो को अपने गाँव जाकर एक खट्टी-मिट्ठी खुशबूवाले आम की कच्ची अमियों का स्वाद बेचैन किए रहता।

मौसी बिसनी तब कैसी सुन्दर थी। पके हुए आम की तरह गुलाबी लाल-सा रंग और महक। उस साल बिशनी मौसी भी पुछ चली गई थी। निम्मो अपने गाँव आकर सब भूल गई थी। एक चिट्ठी भी उसने मौसी को न डाली। तब चिट्ठी लिखने में एक शर्म-सी महसूस होती। क्या लिखूँ?और जब निम्मो गाँव से लौटी तब जैसे सब बदल गया था। बिशनी मौसी उदास मैली-मैली-सी हो गई थी। लकड़ियों को भी गंगाजल से धोकर चूल्हे में सुलगाती। कई-कई बार नहाती। सारा दिन बड़बड़ करती रहती।

निम्मो को उनसे डर लगता। पर रात तो उसे वहाँ सोने जाना ही पड़ता था। शाम को वह मौसी की सुन्दर छत के कोने पर बैठकर किताबों का गट्ठर आसपास फैलाए 'देवदास'पढ़ती रहती। फिर कितनी-कितनी बार पारो को कोसती रहती।अरे मुहब्बत में भी कोई हिसाब होता है?हिसाब तो व्यापारी करते है।

शहूकार कर दे शहूकारियाँ

आस्के भानुएँ मगी थो खाना।

शाहूकार शाहूकारी करता है पर आशिक तो माँगकर भी खा लेता है। यह गीत निम्मो अपनी छत पर गाती। उसके स्वर संध्या की उतरती कालिमा में घुल जाते और वह नीचे आ जाती। जब देवदास को अहसास हो गया कि वह पारो के बिना जी नहीं सकता तब माँ-बाप का डर उसने आड़े क्यों आने दिया?क्यों नहीं जिद की?माँ-बाप की इकलौती थी क्या वह नहीं मानते?अहंकार लेकर ही जी पाई क्या पारो?

बिस्तर की गहरी खामोशी और रजाई की मीठी-मीठी गर्मी में निम्मो ये सवाल दोहराते हुए सो जाती। कभी उसे लगता वही पारो है पर देवदास कहीं नहीं है। अगर होगा तो वह

पारो की तरह मूर्खता न करेगी। क्या कर लेंगे लोग?और तभी उसके भीतर विद्रोह का बीज पड़ गया था। किताब लिए- लिए जब थक जाती, छत पर चहलकदमी करती रहती। न सूरज डूबने का पता चलता, न चाँद उगने का।

नीचे से जब भुने हुए करेलो की महक ऊपर तक आती तब वह चौंकती। आहा, आज मौसी ने फिर अनारदाने के भरवा करेले बनाए हैं। उसे कितने अच्छे लगते है करेले। मौसी अपनी इस रौनक का कितना ख्याल रखती है।

और फिर वह शाम भी कैसे बादर । ो चीर कर बिजली की तरह कौंधी जा रही है। जब वह उगते तारों की रोशनी मे भी कुछ-कुछ धुँधलाए अक्षर पढ़ने की कोशिश कर रही थी। तीन-चार छते छोड़कर एक बड़ी-सी छत पर एक साया टहलता-सा नजर आया था। अँधेरे में हाथ उछालता वह साया, किताब को दीवार पर टिकाए बेचैनी से टहल रहा था। आज तक तो निम्मो ने उस छत पर किसी को न देखा था। वहाँ कौओं या कबूतरों के अलावा कोई न होता था। पर उस छत को वह जानती थी।

वही एक छत थी, जिस पर पुरानी बाल्टियाँ ड्रमों में खुशबूदार मोतिया, रात की रानी या तुलसी लगे हुए थे। रात की रानी की सुगंध गर्मियों मे छत तक आती थी। कोई हठीली हवा का झोंका सुगंध को अपनी आगोश में भरकर कई छतों पर भटकने के लिए छोड़ जाता था। अचानक वह साया थम गया। निम्मो ने देखा, वह उसी की तरफ देख रहा था। डर के मारे निम्मो ने किताब भी न उठाई। हाँफती हुई नीचे आ गई। मौसी ने हाथ में जलती लकड़ी को पकड़कर निम्मो की ओर दौड़ा।

"निम्मो क्या हुआ?

निम्मो ने घबराकर कर कहा,' छत पर साँप था मौसी!

"साँप और मेरे घर मे?इस बिजली को भी अभी जाना था! लालटेन जला मौसी छत पर आई थी। कहीं भी साँप न था। सामने की छत पर खड़ी स्तब्ध काया भी सीढ़ियो की तरफ बढ़ रही थी। निम्मो किताबें समेटकर नीचे आ गई थी।

दूसरे दिन वह चाची के घर से ही खा-पीकर आई थी। मौसी ने पूछा था 'आज छत पर नहीं गई?साँप से डर लग रहा होगा?

निम्मो हँसकर बोली थी, "नहीं मौसी यहाँ कौन डरता है?अगर मै डरकोप होती तो तुम क्या रात को सुलाने मुझी को बुलाती?लो मै जा रही हूँ। डूबता सूरज देखूँगी उगता चाँद तभी आऊँगी।'

'तो ठीक है मैं शिव मंदिर मे दिया जला आऊँ। मौसी ने नहाकर कपडे पहने और बाहर से ताला लगाकर चली गई।

निम्मो छत पर कच्ची मिट्टी मे उगते घास के अकुर देखती रही। न जाने कितना वक्त हुआ। किसी छत पर कोई न था। ताला खुलने की आवाज से अपने ख्यालों से बाहर आ गई थी। मौसी ने कहा था, 'आ नीचे आकर प्रसाद ले लो।"

चाची ने ही एक दिन बताया था मौसी के घर बेटा होनेवाला है। उसे शर्म आती है तुम्हें कहते हुए। पर उसका कहना है निम्मो का कदम बडा शुभ है। इसके घर में आते ही मुझे उम्मीद हो गई।

निम्मो ने चाची से कहा था 'गाँव से पाँचवी के बाद तुम्हारे पास ही तो हूँ चाची!तुम्हारे घर क्यो नही आता मेरा भाई?

चाची ने लम्बी उसाँस भर कहा था अपने कर्म भी तो होते है।'

निम्मो ने बात पलटकर कहा था 'आज मौसा पुछ से आ गए होंगे।कल ही तो मौसी ने मुझसे चिट्ठी पढवाई थी।'

चाची ने कहा था 'जा जाकर मौसा से मिल आ फिर घर पर ही रहना।

निम्मो को मौसा अच्छे भी लगते थे। उसे देखते ही कहते, 'निर्मलाजी कैसी है?

निम्मो को याद आ जाता उसका नाम कितना सुन्दर है।

तभी एक दिन गाज गिरी थी-मौसा की डायरी मे से एक नर्स की फोटो के रूप मे। उस पर कुछ लिखा था। मौसी निम्मो का पढने के लिए कह रही थी।

निम्मो ने कहा 'यह ता किसी नर्स का शिनाख्ती कार्ड है।'

मौसी ने पूछा,"वह क्या होता है?

निम्मो ने उत्तर दिया, जिस डाक्टर के पास जो नर्स काम करती है, उसका फोटो डाक्टर के पास रहता है।

मौसी को यकीनन यकीन न आया था। तभी उसने उसी दिन घर आए लालाजी को वह फोटो दिखलाया था।

लालाजी मौसी के बाप थे-दबग इज्जतदार और फौज में रिटायर्ड सूबेदार। सारा शहर उन्हें सूबेदार साहब कहता था और मौसी लालाजी।

लालाजी ने फोटो को मरोडकर गोली-सी बना ली थी और वह गोली मौसा के माथे मे जा लगी थी। निरीह-से मौसा दहाडते लालाजी, फुँकारती मौसी, और कोने मे सिमटी-काँपती निम्मो।

लालाजी ने कहा था मै अभी गाँव मे तुम्हारे पिता के पास जाता हूँ। ऐसे भ्रष्ट लोगो के घर बेटी दे रहा हूँ, यह क्या जानता था?तुमने क्या समझा सूबेदार अमरनाथ मर गया है जो उसकी बेटी शहर मे छोड खुद पुछ मे तब्दीली करवा ली!

मौसी की बाँह पकडकर लालाजी कहने लगे चल बेटा घर। तेरे लिए मेरे घर मे दो जून की रोटी बहुत है।

मौसी रोते हुए बोली थी 'नहीं लालाजी मै यहीं अपने ससुर के घर मे ही रहूँगी। यहाँ पर ही आप मेरी मदद करते रहिए। इसका कोई पैसा अब न छुऊँगी।'

यह कहते मौसी ने कोठरी मे जाकर अन्दर से दरवाजा बन्द कर लिया था। लालाजी ने बाहर से ही कहा था "बिम्नो, जब तक तेरा बाप जिन्दा है तेरा सर झुकने न देगा।'

लालाजी के जाते ही मौसा अपने ही घर मे अजनबी-सा महसूस करते धीरे धीरे अपने कपडे समेटकर चले गए थे। डरते-डरते निम्मो ने पूछा भी था 'मौसा इतनी रात को?

उन्होने अपना हाथ उसके सर पर रखकर कहा था रात स्टेशन पर ही रहूँगा। सुबह पाँच बजे की बस से चला जाऊँगा।'

मौसा की बैठक सूनी हो गई थी। अन्दर से कुण्डी बन्द करके मौसी की कोठरी के सामने खडी रही थी। फिर बिना खाए पिए सो गई थी। उस रात के बाद जैसे मौसी का सबसे सगा कोई था तो निम्मो। दुख आदमी को कितना करीब ला देता है।

चाची को निम्मो ने कभी कुछ न बताया। पर मौसी का नहाना सारी-सारी रात दिन रोते रहना उसे बेचैन किए रहता। चाची दिन मे रोज ही बिशनी के पास आती। लालाजी भी आते। पर सब अपनी-अपनी जगह अपराधी महसूस करते। एक दिन निम्मो ने हिम्मत करके चाची से पूछा था 'चाची मौसी सारा दिन नहाती क्यो रहती है?

चाची ने मोटी-सी गाली देकर कहा था 'करमजली है मक्ती। आदमी पास आने पर भी कोई नहाता है।

'पर चाची वहाँ तो कोई आदमी नहीं आता।"

इस पर चाची ने डाँटा था "तुझे क्या पडी है।जा अपना पढने-लिखने का काम कर।

काम तो निम्मो को कुछ होता न था। आज स्कूल भी न था। इसलिए निम्मो आदमी के आने-जाने का हिसाब लगाती रही। हो-न-हो मौसा कभी आए होंपर उसे कैसे पता नहीं चला! निम्मो को मौसा कभी-कभी छेड़ते थे निम्मो तुम्हारी मौसी चण्डी का अवतार है। तभी हाथ मे फूलों का खाली डलिया लिए मौसी ने आंगन में से चाची को इशारा किया था। आटे मे सने हाथों को पानी से धोकर चाची ने उसे डाँटते हुए पूछा था क्या है सुबह-सुबह क्या मौत आ गई तुझे?

मौसी ने कहा था मेरे पेट में मुआ लातें मारता है।'

चाची बोली थी तभी तू रोज तवी की दो मील डक्की चढ-उतरकर नहाने जाती है! तू चाहती है ये बच्चा न रहे।बदकिस्मत इसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?

आजकल निम्मो की चाची का रौब ज्यादा था। आखिर उसी ने अपनी जिठानी की बेटी को रोज सुलाने भेजा था। पर मौसी जो अब तक भीगी बिल्ली बनी हुई थी शेरनी की तरह गरज कर बोली हाँ मै इस बच्चे से निजात चाहती हूँ। मुझे लगता है जैसे यह हराम की औलाद है। जब से उस नर्स का फोटो देखा, मेरे पेट मे साँप घूमता है। जी चाहता है उसी नर्स से कहकर इसे खतम करवा दूँ। कल जैन बाजार में फुन्दनियोंवाले परादे खरीद रही थी। मुझे देखा तो जले मुँह के आगे दुपट्टा कर लिया। सारी दुनिया थू-थू कर रही है। मनियारी वाला भी उए देखकर आँखें दबा रहा था।

यह सुनकर निम्मो की हँसी छूट गई थी। उसे यह बड़ा अजीब-सा मजाक लगा करता था। तभी चाची ने उसे डाँटकर कहा था, 'जा बाजार से दही ले आ। इसे कानरस है। जहाँ दो बडी औरते बाते करती है सुनने बैठ जाती है।

दही लाना निम्मो को अच्छा लगता था। पहले काट पर चढी मलाई वह रास्ते मे आधी खा जाती। चाची के फरिश्तों को भी पता न चलता। आँगन से मुड़ते ही वह खड़ी हो गई। तभी चाची की मनुहार भरी आवाज और मौसी की सिसकियाँ उसके कानों में पडीं।

चाची कह रही थी "बिशनी भगवान का शुकर कर उसने तेरी सुन ली। नहीं तो मेरी तरह दुनिया में रहकर भी दुनिया से दूर हो जाती। आज १२ वर्ष से शिवजी को जल चढा रही हूँ। तेरा भइया भी दूसरा भोलानाथ है। पर जब उसकी नजर सवल्ली न हो, तब कुछ नहीं होता। तेरे ससुर की सारी जायदाद का वारिस तेरे पेट मे है। देख लेना कल सुन्दर भी तेरी ड्योढी पर इसकी खातिर आएगा। जा पगली कहीं की।आज के बाद इसे कभी ऐसे अपशब्द न कहना। जिसके साथ सात फेरे लिए हों उसकी औलाद को कहीं ऐसा कहते है।

जा अपना काम कर। निम्मो अभी दही लेकर आती ही होगी। निम्मो ने यह सुनकर दौड लगा दी थी।

फिर जब बिल्लू हुआ था मौसा बाजेवालों को लाकर छत पर चढ गए थे। वहीं बाजेवाले के साथ खमीरे मददरो से भरी थाली(मददरा जम्मू मे एक किस्म की सब्जी को कहते है)नानाजी ने ऊपर अपने बेटे के हाथ भिजवा दी थीं-

उट्ठ सिर गुन्दिए क्वो

कैन्ते दिए लाडलिए।

बिशनी मौसी का सिर गूँथती नाइन कन्त के नाम पर अपनी नथ वाली नाक चढा रही थी। कन्त की लाडली बिशनी मौसी अपनी गोदी में पडे बिल्लू को ऐसे देख रही थी जैसे वही उसका कन्त हो। २१ दिन का पट्ठा अपनी कजरारी आँखों से अपनी मैया को घूर रहा था।

तभी निम्मो को याद आया---उस दिन बहन की सारी रस्में उसी ने की थीं। निम्मो के हाथ पर मौसी के पिता ने पाँच का नोट रखकर कहा था, एक दुपट्टा खरीद लेना।"

मौसा के पिता बरसो से विधुर थे और पहाड पर एक-एक गददन से लोग उनका नाम जोडते थे। तभी शायद वे मौसा के प्रति ज्यादा कठोर न थे। जो कपडे मौसा के लिए उनके घर से आए थे वे उन्होंने मौसी को दे दिए थे।

उसी दिन मौसी की ननद को उसने पहली बार मौसी के घर देखा था। उसके किस्से जब बिशनी मौसी चाची को सुनाती थी तब निम्मो को लगता ननद कोई बला होती है जो आमों के पकते ही उनपर बैठकर सारा रस चूस लेती है।

मौसा ऊपर से जब सीढियाँ उतरकर जा रहे थे तब उन्होंने निम्मो को इशारे से बुलाकर पूछ था, 'तुम्हारा भाई कैसा है?

निम्मो ने सूचना दी थी 'बिल्कुल आपके जैसा। सभी औरते कह रही है।

मौसा ने दस रूपये का बडा-सा नोट उसकी दुपट्टी के कोने में उडस दिया था।

मौसा को अपने हमशक्ल शरीक रकीब और न जाने क्या-क्या, पर मोहब्बत हो आई थी। तब के बाद उन्हीं सीढियों के साथ लगी बैठक में मौसा कभी-कभी आते, कोई किताब या दवाई उलटते-पुलटते रहते।

पुछ से उनका तबादला नाना ने जम्मू करवा दिया था। पर मौसी ने उन्हें अपने आँगन में

कभी न आने दिया। आँगन में बड़े होते बिल्लू को मौसा अपनी बाहरी बैठक की खिड़की की दरार में से देखते। वहीं बैठक मे उनके बाप की तस्वीर लगी थी। उन्होंने अपनी वसीयत में सारी जायदाद अपने पोते को लिख दी थी——जब बड़ा होगा तब पाएगा।

पर बेटा तो मौसी का था, अकेली मौसी का। बेहद बदमाश। बड़ा होने पर निम्मो की चोटी खींचा करता था। एक बार तो उसने निम्मो के बालों की एक मोटी लट जो अदवायन मे से झाँक रही थी काट डाली थी।

निम्मो को अपने घने बाल याद आ गए। उसका आँचल खिसका, तो उसने देखा——उसकी बेटी उसे अपनी उनींदी आँखों से देखकर मुस्करा रही थी। निम्मो अतीत के दालान मे से उठकर वर्तमान के आँगन मे आ खड़ी हुई——जहाँ उजाला था वासन्ती धूप थी बर्फीली चाँदनी।

उसने मौली को उठाकर अक में भर लिया। उसने ऐसे उसे चिपटा लिया जैसे बरसो बाद बेटी से मिली हो। उसे लगा, कश्मीर की सर्दी में एक गर्म-गर्म काँगड़ी उसके सीने से आ लिपटी है।

तभी घण्टी बजी और उसके पति दफ्तर से आ गए।

दूसरे दिन सवेरे उन्होंने नाश्ते की मेज पर निम्मो से पूछा, "कल से तुम इतनी अनमनी क्यो हो?क्या मौसी फिर आई थी?

"हाँ और अब मौसा को तलाक देने पर बजिद है।'

अरे अभी पिछले हफ्ते तो तुम कह रही थीं उनके बेटे——क्या नाम है उसका-की शादी की बात कहीं चल रही है।"

"हाँ मौसी कहती है यही वक्त है बदला लेने का। भरी बिरादरी में वह मौसा को इज्जत न लेने देगी। सारी उम्र अकेले पहरेदार की तरह उसने यह ससार खड़ा किया है। इसमें यश का हक उसका ही है।

निम्मो के वकील पति ने पूछा 'क्या नानाजी की सम्मति है?

'नहीं वे तो जानते भी नहीं। मौसी सिर्फ उन्हीं से डरती है।

वकील साहब ने जरा शरारत से पूछा जवानी में तो तुम्हारी मौसी ने पुट्ठे पर किसी को हाथ न धरने दिया अब इस उम्र में क्या कोई नया गुल खिलने वाला है?

निम्मो बोली 'छी-छी कैसी बातें करते हो।

वकील साहब बोले 'फिर तलाक किसलिए?डाक्टर साहब तो अपनी डिसेंसरी के फ्लैट में ही रहते है। रिटायर होने पर भी वहीं रहेंगे।'

निम्मो बोली मौसा ने नानाजी से कहा है वह घर आना चाहते है। बिल्लू भी कभी-कभी डिसेंसरी मे उनके पास बैठता है। इसी बात ने तो मौसी को भडकाया है। सत्तो नर्स का जब से स्वर्गवास हुआ है मौसा एकदम निरीह-से हो गए है।

निम्मो के पति आज खासे मूड मे थे। हँसकर बोले तुम्हारी मौसी अगर तलाक ले ले तो हम अपने पीपलवाले चाचा का उद्धार कर सकते है। जवानी मे इसी के इश्क मे तो पहलवान बने थे। क्या हसीन औरत थी तुम्हारी मौसी!अब तो फ्रेम रह गया है। पर हमारे चाचा कम से- कम भूत बनने से तो बच जाएँगे।

निम्मो ने चिढकर कहा 'जाइए पौने दस हो रहे है।

और तलाक?

वह आपके बिना भी हो जाएगा।

उसमे तो तुम एक्सपर्ट हो पर बाद मे हमारी जरूरत पडेगी। बाय-बाय।

उनके जाने के बाद निम्मो मौली को नहलाकर सुला और खुद मौसी का इन्तजार करने लगी।

उसने सुना था मौसी से वकील साहब के चाचा ब्याह करना चाहते थे पर मौसी थी खत्री की बेटी और चाचा थे ब्राह्मण सो बात बनी नहीं। मौसी ने एक रोज उन्हें गुलेल से कंकर मारा था। उसके बाद चाचाजी ने उसे छेडना बन्द कर दिया और हनुमान व्यायाम शाला मे जाकर रहने लग गए थे। आज वे मशहूर पहलवान है। गाँव-गाँव मे बैसाखी के मेले में उनके पट्ठे माली जीत कर लाते है। और मौसी तब कितनी सुन्दर थी पर उतनी ही लडाका भी। कभी-कभी मौसा निम्मो से कहते थे कि तुम्हारी मौसी चण्डी का अवतार है। एक दिन जब मौसी ने सुना तो जलती लकडी चूल्हे मे से निकालकर पीछे भागी थी। निम्मो की चाची ने उसे डाँटकर कहा था 'पति क्या एसे ही बस मे होता है।जैसे नाग नथते है वैसे ही नथना पडता है। यह तो साँड से भी ज्यादा तेज भागने वाली चीज है। पाँव की बेडी बडी मजबूत होनी चाहिए।

मौसी बोली थी 'उँह जाने दो। मेरे लालाजी डाक्टर को सीधा कर देंगे। अत बाप के जोर पर नाचने वाली मौसी के डाक्टर को सत्तो नर्स ले उडी थी। बगैर शादी के भी उसने

ऐसे निभाया जैसे सगी पत्नी निबाहती है। निम्मो को फिर मौसा पर तरस आने लगा। औलाद का प्यार ही शायद उन्हे खीचकर ला ा चाहता था।

तभी उसने देखा सामने मौसी हाथ मे सफेद कागज फहराते हुए यो अन्दर दाखिल हुई जैसे कागज न हो जीत का झण्डा हो।

निम्मो उठ खडी हुई। मौसी को पकडकर दीवान पर बिठाया।

'दफ्तर वाले चले गए? मौसी बोली।

'हाँ मौसी अच्छी तरह बैठो ना।

मौसी तनकर दीवान पर बैठ गई।

निम्मो ने पूछा फिर क्या सोचा मौसी?

'तलाक-तलाक तलाक।

'वाह तुम मुसलमान होती तो हो गया था। पर वहाँ भी पति ही ती ा बार तलाक कहे तो होता है।

मौसी ने उसकी बाते नजरअन्दाज करके पूछा हाँ तो वकील के पास कब चलती हो?

बिल्लू से पूछा है?

वह क्या मेरा बाप है?उससे क्या, पूछूँगी?जब सत्तो नर्स के साथ तुम्हारे मौसा ने बाईस बरस काट लिए तब क्या उसने बिल्लू से पूछा था?

पर मौसी बिल्लू जवा ा है। पढा-लिखा जिम्मेदार।

मौसी को ताव आ गया। बोली यह क्यो नही कहती कि चलने की मर्जी नहीं है?बुझारते क्यो बुझाती हो?

मै तो तैयार बैठी हूँ मौसी! हाँ वह वकील मर गया है जिसने मेरा काम किया था।

"सभी तो नहीं मर गए न!

'नहीं भगवान की दया से शेष सब जिन्दा है---तुम्हारा तलाक करवाने के लिए।

"अब ये चोचले रहने दे। मौसी हाथ नचाकर बोली तलाकतोतो मै तुम्हारे मौसा को दूँगी ही--- तुम चलो या न च में रहोगी तो मुझे दिक्कत ा होगी। पर आज तो मण्डी में भिखमगों की तरह वकील घूम रहे है जिसे पैसा दूँगी काम कर देगा।

"मौसी ,तुम मौसा की जान लेना चाहती हो?

"नहीं वह मर गया तो मै गुलाबी दुपट्टा न ओढ सकूँगी। मै उसे मारना नहीं चाहती । मै उसकी बेइज्जती करना चाहती हूँ। डाक्टर सुन्दरलाल सतपूछा, वाह, क्या नाम है?

निम्मो ने मौसी को शरबत थमाते हुए कहा, 'तुम तो माडर्न हो गई हो मौसी!

मौसी ने शरबत लेकर अठन्नी निम्मो की हथेली पर रखी। वह निम्मो के घर का पानी मुफ्त में नहीं पीती थी। बोली, 'बिल्लू की शादी होगी। भरी बिरादरी मे मै उस कीडे को बाप की मिलनी न करने दूँगी। मै अपनी तपिश के उन बरसों की एक-एक बूँद तुम्हारे मौसा के दिन-रात पर पिघली मोमबत्ती की बूँदों की तरह टपकाना चाहती हूँ। मै समाज में उसे सिर ऊँचा करके न चलने दूँगी। तुम देखना, कैसे उससे ब्याज सहित अपनी यत्रणा के क्षण वसूल करती हूँ।

तभी बाहर घण्टी बजी और सामने लालाजी को देखकर मौसी जडवत खडी रह गईं। उनके पीछे बिल्लू भी था।

लालाजी ने कडककर पूछा तुम मण्डी गई थी तलाक की दरख्वास्त लिखवाने?मेरे बुढापे का कितना ध्यान है तुम्हे? सिर्फ तुम्हारी और मोहन की मासूम सूरतों को देखकर मैने दूसरी शादी न की। और तुम आज सूबेदार बाप की सूबेदारी को मिट्टी में मिलाने चा रही हो?यह लो, तुम्हारा बेटा भी आया है। इसे भी ले जाओ वकील के पास। बडा नाम होगा सारे शहर मे!बिल्लू की शादी भी बडी धूमधाम से होगी। ' इतना कहकर लालाजी उसी तरह लौट गए।

उनके जाते ही मौसी ने रो रो के गगा-जमना बहा दी। बिल्लू चुपके से मौली के पास उसके बालों को मुट्ठी में बन्द किए बैठा रहा। मौली के जागते ही मौसी ने उसे गोद में भरकर चूमा और तलाक की दरख्वास्त चिन्दी चिन्दी करके हवा मे उडा दी। उस वक्त जितनी गालियाँ हो सकती थीं उसने मौसा को दीं। उसके शान्त होते ही बिल्लू माँ को लेकर घर चला गया।

सबने सोचा बात आ-गई हो गई। लेकिन निम्मो जब भी मौसी को शादी का सामान खरीदते या घर मे आई औरतो के साथ बातें करते देखती तब उसे लगता किसी बन्द पतीले के अन्दरकोई खिचडी बडी बुरी तरह उबल रही है-बाहर आने के लिए बेताब। मौसी की बदली निगाहे खौफजदा थी।उनमें पागलों की हरकतो जैसे लाल डोरे काँपा करते थे। मौसी को चुप देखकर कोई भी उसे ज्यादा न छेडता था। जैसे धधकती आग मे कोई लकडी

डाल कर नहीं छेडतापर यह ज्वाला मुखी उस रात कैसे बह गया था निम्मो को याद आया——

रात के सन्नाटे को चीरती बरात धीरे-धीरे आगे बढ रही थी। शहर की बिजली गुल थी। बराती धराती सभी मशालवालों के साथ चिपक कर चल रहे थे। मौसी को चाची ने सेंत सेतकर रखे जोडो मे से एक पहनाया हुआ था। गुलबदन की कसी हुई सुत्थन उसकी कमजोर पिण्डलियों पर अपनी चुन्नटो सहित हिल रही थी। बडा-सा किनारी जडा दुपट्टा और मखमल का कुर्ता। सभी औरतों मे मौसी अलग लग रही थी। आगे-आगे मर्दों मे घोडे के पीछे लालाजी थे और लालाजी के पीछे अपने दोस्तो के साथ मौसा। खूब बारिश हुई थी। साडीमें लिपटी महिलाएँ अपनी-अपनी साडी ऊँची उठाकर धीरे-धीरे पाँव टिका रही थीं। आज बिल्लू के घोडी पर बैठते ही निम्मो की चाची ने घोडी की लाइन उठाई-

चढदी जजा बदद्ल छाया मराजा

चढैया ई रूप सोआया।

लालाजी ने फौरन टोका अब और बादल मत बरसाओ। कल काफी हो चुका है।

तब हँसकर चाची ने जोडा-

सज्जन सूए नी कप्पडे

तेरे दुशमने मैलडा बेस वे।

चाची ने मौसा को टहोका दिया। मौसी की निगाह भीड को चीरकर मौसा की तरफ थी। जैसे सबसे मैले कपडे मौसा के ही हों। निम्मो को जब मौसी ने अपनी तरफ देखते पाया तब मुँह घुमा लिया। तलाक न हो पाने की सारी जिम्मेदोरी मौसी ने निम्मो के पल्लू में बाँध दी थी।

तभी समधियाने के घर की गली मुडते ही बिजली आ गई। चारो ओर उजाला फैल गया——साथ ही खुशियो से भरी लोगो की आवाजें। बाजेवालों की खनकती धुनें।

लालाजी ने आकर बाजेवालों को बन्द करवाया और फिर तुरही की आवाज गूँज उठी। सब एक गोल बाँधकर खडे गए थे ——मिलनी के लिए।

आखिर मिलनी का समय आ पहुँचा था।

लडकी के नाना लालाजी के बगलगीर होकर खडे थे।

फिर बाप की मिलनी थी। गुहार मची। डाक्टर मौसा तनी हुई गर्दनवाले लडकी के बाप

के आगे जाकर खड़े होने लगे। तभी नाई बोला 'डाक्टर साहेब आप दुल्हा बेटे के बाप है इधर आइए।

उसने मौसा के हाथ में हार पकड़ाया। निम्मो का दिल धड़क रहा था। बेटे का बाप खड़ा था। बेटी का बाप खड़ा था। मिलनी होने वाली थी। तभी एक कड़कदार आवाज गूँजी——

'कौन बाप?कैसा बाप?मेरे बेटे का बाप यह नहीं है।

सन्नाटा छा गया। जैसे जादू की छड़ी से सब सिल-पत्थर हो गए हों।

मौसी की यह आवाज फिर गूँजी। उसमें कड़क के साथ कंपन था। रूलाई थी और अपमान की धधकती चिंगारियाँ थी।

यह आज बाप की मिलनी करने चला है!तब यह कहाँ था जब मैंने अपने चिड़िया के बोट-जैसे बच्चे की हारी-बीमारी में इसे सीने से लगाकर सारी-सारी रात आँखो में अकेले बिता दी। तब यह डाक्टर बाप कहाँ था जब मेरे बच्चे को छाटी माता निकली थी?जब स्कूल मे इसका नाम पूछा गया तब कहाँ था?जब'कालेज की ढेर सारी किताबो और फीस के पैसे अपने गहने बेचकर चुकाए तब यह किसकी बगल मे था?तब यह कहाँ था जब सर्दियो मे लोई ओढे रात को मै अपने इस बेटे को मास्टरो के घर ले जाती थी। इसकी नौकरी मेरे लालाजी ने लगवाई तब क्या उन्होंने कहा कि यह फलाँ डाक्टर का बेटा है? मुझे कसम है अपने इकलौते की जो मैने कभी किसी से कहा हो यह डाक्टर का बेटा है। अपनी जवानी की लौ जिसकी माँ गूदड़ों में काटती है ताकि किसी की नजर उस पर न पड़े उस बेटे का कोई बाप नहीं होता। मेरे बेटे का कोई बाप नही। मैने अपने बेटे को तिल तिल गलकर खुद गबरू-जवान किया है——अकेले।

मौसी हाँफने लगी। उसकी नजर घोड़ी पर पड़ी । उसका बेटा बिल्लू शर्म से अपनी गर्दन झुकाए बाप को पूरी बिरादरी के सन्नाटे मे घृणा से देख रहा था। मौसी से शायद बिल्लू की निगाह न सँभाली गई।

उसने फिर कहा 'पर जाओ डाक्टर साहब कर लो मिलनी। आज बिशनी आपके झुके हुए सर पर अपनी जिन्दगी के सारे बरस कुरबान करती है- बेटे की खातिर। अपने बेटे की खातिर कहते-कहते मौसी बेहोश हो गई थी।



उठा कर खडी की गई लडकी

- शशिप्रभा शास्त्री -

आंटी मीना भाभी का संदेश फिर आ गया है।

मीना भाभी ?

'अपने किरायेदार को आप इतनी जल्दी भूल गयीं?

ओह अच्छा वह 'हाँ तो फिर संदेश आया है तो मै क्या करूँ?

यह भी नही पूछोगी कि संदेश क्या है ?

क्या है बताना चाहती है तो बता दे जल्दी से मै फिर पीछे बागीची में जा रही हूँ।

भागो का चेहरा थोडा बुझ-सा गया था। साफ झलक रहा था कि वह बिना कुछ कहे ही लौट जाना चाहती है पर वैसा करना उसकेलिए सम्भव नहीं हुआ तो बोली मीना भाभी ने अपने बेटे के काजल लगाने के लिए बुलाया है मुझे।'

तो चली जा मना किसने किया है।

मन नहीं करता आंटी। सिर्फ इतना ही कहकर भागो लौट गयी।

मन नहीं कर रहा — मै मन ही मन बुदबुदायी

'जिनका इतना आदर-मान दिया जा रहा है उनका मन नहीं कर रहा है और यहाँ जिसने इतना किया उसको पूछा तक नही जा रहा 'पीछे की बागीची मे पूजा के लिए फूल तोडते हुए मन मे कुछ-कुछ कसकता रहा। डेढ साल पहले की बाते मन को सालने लगीं भागो का मीना से परिचय ही क्या था। अगर वह मध्यस्थ न होती तो क्या भागो को आज कोई खड़ा था —

लडके की बहन को बुलाओ। पंडितजी ने निर्देश दिया था।

लडके (दूल्हे) का सिर कुछ लटक आया था चेहरे पर हल्की कालिमा घिर आयी थी। मीना के पिता जो कन्यादान के लिए उस समय पास ही बैठे थे उन्होंने सकपकाते हुए इधर-उधर यों ही ताका था मन में जान रहे थे वह ताकना व्यर्थ है। तभी मैने पास बैठी भागो से कहा था भागो उठ तू ही खडी हो जा। और दूसरे ही क्षण भागो मेरे आदेश

मे बँधी खडी थी। "पंडितजी यह है लडके की बहन ! मेरी आवाज़ ने मीना के पिता और खुद दूल्हे को जैसे भँवर से निकाल कर किनारे पर खडा कर दिया हो।

'बहन भाई का चेहरा कितना मिलता है!' आस-पास बैठे लोग फुसफुसाते थे। लोगों की आँखों ने दोनों के बीच यों ही साम्य स्थापित कर लिया था। मुझे खुशी हुई थी। भागो ने उस दिन बहन की सब था।

विवाह के पहले मीना के पिता ने मुझसे मीना और मोहन के रहने के लिए कोई जगह ढूँढ देने की प्रार्थना की थी।

'मोहन का इस दुनिया में कोई नहीं है बहनजी। अब हमारी बेटी ने इसे पसन्द कर लिया है तो विवाह तो करना ही था। पर अब तो ठिकाना ढूँढने की जरूरत भी आन पडी है।"

मोहन पहले कही तो रहता ही होगा ? मैने पूछा था।

"रहता था अपने एक दोस्त के साथ साझे में, अब अलग कमरा लेना जरूरी हो गया है और आप तो जानती ही है, आजकल मकानो की हालत।' मीना के पिता बहुत विनम्र थे। अपनी बात कहते-कहते उन्होंने हाथ जोड दिए थे।

कुछ देर मै सोचती रही थी। मीना के पिता को मै ही कितना जानती थी वह तो किसी परिचिता ने परिचय करा दिया था। मै सोचती रही और फिर न जाने क्या सोचकर कह दिया था मिश्राजी फिलहाल और तो मै कोई दूसरा इन्तजाम नहीं कर सकती। मेरी कोठी मे ही यह कमरा खाली है इसी कमरे मे एक-दो महीने रह लें, इस बीच आप कोई इन्तजाम कर लें।

'धन्यवाद बहनजी, मै बहुत-बहुत आभारी हूँ आपका। आपने तो मुझे उबार लिया। नहीं तो मै कहाँ-कहाँ भटकता फिरता मेरा घर भी छोटा है। वहाँ भी मुश्किल था। अब किसी बडे मकान की तलाश करेगे जिसमे हम सब रह सके। मिश्राजी पेशगी पकडाकर चले गये थे। बाद मे पता चला कि मिश्राजी भी कोई धन्ना सेठ नहीं थे मात्र क्लर्की करते थे। बेटी की खातिर न जाने कहाँ से जुटाया होगा। इतने ही परिचय से मै उन दोनों के विवाह में शामिल होने की हकदार बन गयी थी।

भागो मकान के पीछे आउट हाउस मे रहती थी।उसका पिता कोठी का माली था। इसी अधिकार से मै भागो से अपना छोटा-मोटा काम करवा लिया करती थी। पति की मृत्यु के बाद तो भागो का पिता और उसका परिवार (पत्नी और दोनो बेटियाँ) मेरे लिए और आवश्यक हो गया था। इसी हक से भागो ने भी उस दिन मुझसे शादी मे ले चलने का

आग्रह किया था 'आंटी हमे भी अपने साथ ले चलिए।" और मै उसे बच्ची समक्ष अपने साथ ले गई थी और तभी वहाँ उस विवाह मे वह काण्ड घटित हुआ था। भागो की बस इतनी ही साझेदारी थी।

कोठी के कोने वाले कमरे में नवदम्पती के आ जाने पर मीना की मुझसे ज्यादा ही पटती थी। वह प्राय मुझसे परामर्श माँगती रहती थी, कभी बच्चे के आगमन के सम्बन्ध मे और कभी पति के साथ व्यवहारिक तालमेल बैठाने के बारे मे। उसकी समस्याएँ और प्रश्न कभी-कभी काफी हद तक निरर्थक और सकोच मे डालने वाले होते पर उनका कुछ न कुछ जबाब मै दे ही देती थी। कभी सोचती आजकल की लडकियों को शर्म-हया तो छू मारा भी यही है 'पहला बच्चा अभी नहीं तीन के बाद कभी नहीं। तब ?पर उससे मै उस सम्बध मे प्राय कुछ न कहती।

मीना और उसके पति मोहन ने दो महीने मेरी कोठी के उस कमरे में किसी प्रकार निकाले ही थे उसके बाद मेरे कहे अनुसार उन्होंने एक अलग मकान देख लिया था और मीना के पिता का परिवार और वे दोनो एक साथ रहने लगे थे। किराये की दृष्टि से इसलिए वह नया मकान उनके लिए काफी सुविधाजनक सिद्ध हुआ था।

उसके बाद छह महीने तक मीना की ओर से कुछ सुनाई नहीं पड़ा अचानक एक दिन मीना आकर खडी हो गई थी पेट के हल्के उभार से ही मै समझ गई थी कि मीना की मनोकामना हरी हो गई है लाठी को लष्टम-पष्टम सँभाले हुए वह किसी प्रकार पँहुची थी। उसके हाथ मे एक छोटी-सी रकाबीनुमा थाली थी भागो के लिए ये चीजें है। उसने कहा था।

भागो के लिए !! मै चौंकी थी। मै कुछ और ही समझी थी। हाँ यही कि शायद वह उसी उपलक्ष्य में मेरे लिए ही मिठाई लायी हो।

हाँ भागो के लिए। मीना कह रही थी आज भाईदूज है न !

ओह ! मै समझ गयी थी।

"मोहन पीछे आ रहे है बीच में चढाई थी तो उन्होंने पहले ही उतार दिया था। मीना बताने लगी थी।

"हाँ। मैने समझ लिया। मोहन के पास उसकी छकड़ा साइकिल थी उसी पर बैठाकर लाया होगा वह उसे।

'पर इस हालत मे तुझे आने की क्या पडी थी ' मैने मीना को डपटा या ।

'आटी मोहन को तो जानती है' वे कितने सकोची है । सकोच के कारण ही वे टीका करवाने अकेले नहीं आ पा रहे थे ।" गोया वह धकापेल सिर्फ मीना की ओर से ही नहीं थी ।मोहन ने तो आटी, भागो को उसी दिन से बहन मान लिया था है, जिस दिन वह हमारे ब्याह मे बहन के नाम से उठकर खडी हुई थी । '

'चलो ठीक है ।' मैने चुपके से मुँह बिचका दिया था । मन मे उस दिन भी कुछ छिदा था । फूल लेकर मै लोटी तो भागो तैयार खडी थी

'आटी मै जा रही हूँ।' मेरे सोच में बाधा देती हुई वह बोली थी ।

कैसे, अकेली ही ।

नहीं मोहन भईया आये है थ्री व्हीलर लाये है, मै ऑटोरिक्शे मे जाऊँगी तो वे अपनी साइकिल पर ।"

"तू भी साइकिल पर क्यो नही चली गयी ?

मुझे साइकिल पर बैठते डर जो लगता है आटी । ' भागो ने कारण बताया था ।

'बडी आयी चल के भईया के इतने पैसे खर्च करवा ने वाली । मैने उसे झटका था ।

आटी ऐसा मत कहिए मै भी तो दूँगी कुछ माँ ने कहा है—— ।

उसके मुटठी मे एक हरा नोट दबा था ।

'पाँच रुपये ! चल, आटोरिक्शे का खर्च तो निकल ही जाएगा । मैने यो ही सन्तोष प्रगट किया था ।

भागो लौटी तो बहुत खुश थी। खुश और बहुत कुछ विस्मित स्वर मे उसने बताया- ' आटी मोहन भइया ने तो गजब कर दिया ।

"क्यो क्या हुआ?

"काजल लगाई उन्होने मुझे इक्यावन रुपये दिये है और एक सूट का कपडा भी ।"

'सच मै सुनकर चकित थी । मोहन इतना लायक कब से बन गया । वह तो खुद एक स्कूल मे मामूली सर्विस पर है—। ऊपर से कहा चलो ठीक है भतीजा होने के इतने तो मिलने ही चाहिये थे ।

नहीं आटी अब मै सोच रही हूँ उसके लिये दो एक ड्रेसे खरीद कर ले जाऊँगी । अच्छा

नहीं लगता, वे लोग इतना करें और हम कुछ न करें सिर्फ लेकर बैठ जाएँ।"

" चल ठीक है । पहले भी तो मोहन तुझे भाईदूज के टीके के इक्कीस रूपये दे गया था।

' और आप जानती हैं मीना भाभी थाली में क्या लायी थी ?पूरियाँ और सब्जी माँ ने भी तब मिठाई खरीदकर थाली में रखवायी थी । खाली थाली लौटाते भी अच्छा नहीं लगता था और पूरियो का ही वापिस क्या रखना था ।'

हूँ ! भागो के चले जाने के बाद मैं सोचती रही इनका अजीब चरखा चल गया है । हम तो बीच के कुल्फे की तरह अलग हो गये है और ये दोनों ही चीनी बन गये है। चलो चलने दो मुझे लेना भी क्या है । भई मेरे मकान में रहती थी, मैंने मकान दिया था, उसने किराया दिया था । बस इतना ही-सा तो रिश्ता था हम दोनों के बीच । पर फिर इस भागो का भी क्या रिश्ता था । उस वक्त सिर्फ छुट्टी कर दी गयी थी नाम मात्र की बहन। यह थोडी था कि एक जजाल ही पुर जाता । और फिर मिश्रा परिवार और माली की लडकी के बीच का रिश्ता भी विचित्र लगता है। मोहन अलबत्ता मिश्रा नहीं है, पर माली की लडकी से तो बेहतर ही है ——। मैं उस दिन देर तक गुपती रही थी। बाद मे यह सोच कर पटाक्षेप कर दिया था, यह मान कर कि कौन सा जन्म-जिन्दगी चलना है यह। यहाँ तो सगे भाई-बहन के बीच अक्सर रस्म अदायगी ही होती है। खुद मेरे चार भाई है, चारों शहर के शहर में पर मजाल है, जो चारो में से एक भी चलकर राखी बँधवाने आ जाए मुझे ही घर-घर भटकना पडता है—

सब करमों का फेर——।

दिन बीतते चले थे, भागो और मोहन का सूत्र बराबर बँधा चला था । हर रक्षाबधन और भाईदूज को मोहन अपनी छकडा साइकिल पर आता और भागो से राखी बँधवाकर उसे इक्कीस रूपये थमा जाता ।

मोहन-मीना का तबादला हल्द्वानी से हटकर बदायूँ हो गया तो भी भागो की ओर से टीका राखी जाती रही । उससे भी पहले हर वर्ष मीना का खत आ जाता भागो राखी भेजना मत भूलना। " भागो भी अब दोनो त्यौहार पर राखी-टीका भेजने के लिए तत्पर रहती। भागो की शादी हुई तो मोहन मीना दोनों जन चार बरस के बिट्टू के साथ आये और बहुत कुछ करके लौटे।

भाई की रस्मे मोहन ने भी पूरी की।

एक दूसरे ने एक-दूसरे को काफी दूर तक निभा दिया। मै सोचती, पर ऐसे सम्बन्ध कितनी दूर तक जाएँगे। आखिर एक दिन सब खतम हो जाएगा। मै बुदबुदायी। पर भागो जब ससुराल से कभी-कभार आती तो पता चलता मोहन रक्षाबधन पर राखी बँधवाने और भाईदूज पर टीका करवाने उसकी ससुराल भी पहुँच जाता है। बदायूँ से उसकी ससुराल का रास्ता दो घटे का जो ठहरा।

"देख, तू ही एक दिन बिटटू के का--- डालने के लिए जाते अनखा रही थी।' मैने भागो को याद दिलाया था," और अब देख ~ कितनी- कितनी दूर से कैसे आता है।" साथ ही जोडा था, 'तेरे ससुराल वाले तो कुछ नहीं कहते ?

"कहेगे क्या उन्हे क्या मालूम कि मोहन भइया मेरे सगे भाई नहीं है।"

'सच!!'

"और क्या आटी, कभी ऐसी बात ही नहीं उठी। इधर बापू-माँ ने भी कुछ नहीं कहा था।"

"ओह तब ठीक है। मै फिर सोचने लगी थी—।

फिर एक लम्बा अन्तराल। लम्बे अन्तराल मे भागो का ससुराल से आना भी लगभग खत्म-सा हो गया था। माँ और अपने बापू के देहान्त और एक मात्र छोटी बहन की शादी के बाद तो आने जाने का सूत्र एकदम ही टूट गया। मेरी गुड्डी की शादी ठहरी तो मैने यो ही भागो को शादी की तारीख की सूचना देते हुए लिख दिया की तेरी गुडडी तुमसे लम्बी हो गई और उसके घर जा रही है। उत्तर में भागो की कोई चिटठी नहीं आयी तो मैने समझ लिया कि ये सम्बन्ध तो ऐसे ही होते है इनसे किसी प्रकार की उम्मीद रखना व्यर्थ है। पर गुडडी की बारात आने से तीन दिन पहले आकर जब भागो और उसके पति ने सब काम सँभाल लिया तो मै हैरान रह गयी। भागो के प्रति मन मे एक मोह-सा उमडा। आखिर मेरे ही घर के पिछवाडे पली-बढी है, इतने दिन नमक खाया है, तो कुछ तो ममता है ही मन मे — भागो गुड्डी के लिए पायजेबे लायी थी। मैने भी उसे साडी दी और उसके पति का टीका किया। साथ ही जोडा ' रमेश को तो भेज दे, वे अगर चाहें तो पर तुझे मै अभी नहीं जाने दूँगी। तुझे पता है अगाडी से पिछाडी भारी होती है तो मुझे तेरी मदद की जरूरत है।

भागो हाथ जोड कर खडी हो गई थी " आटी, मे इस समय तो माफी माँगती हूँ। घर में

बेटा बहुत बीमार है उसे वैसी हालत मे छोड़कर आयी हूँ। दो दिन बाद ही उसका ऑप्रेशन होने वाला है, इसी लिए जाना जरूरी है।"

" तेरे बेटा कब हो गया और उसे क्या बीमारी है ?तेरी माँ तो तेरे बेटा- बेटी का मुँह देखने के लिए तरसती ही चली गयी।"

'भइया का बेटा मेरा ही है आटी मीना भाभी के दो बरस पहले जुड़वाँ बच्चे हुए थे तो उनमे बिटटू की गौर करने की ताकत नहीं थी तब बिटटू को मै ही ले आयी थी, उस वक्त से वह मेरे पास ऐसा हिल गया कि फिर उसके घर गया ही नहीं।"

और मीना भाभी और मोहन ने कुछ भी नहीं कहा?तेरे पास रहने दिया ?

'मेरी खाली गोद देख कर मोहन भइया ने यही निश्चय किया कि---- । "

' सच !! '

'और अब तो मोहन भइया भी मेरे पास ही है।" भागो की आँखें भर आयी थीं।

"क्यो कैसे ?'

'मीना भाभी और दोनों छोटे बच्चे अब नही है बरस-भर पहले भइया की बदली कानपुर हो गई थी तो वहीं एकाएकी मकान की छत गिर जाने से मीना भाभी सहित दोनो बच्चे--- । भइया तो तबसे अपना पूरा चेत ही खो बैठे है। कितने दिन उनका इलाज किया। कुछ थोड़ा-बहुत फायदा हुआ भी, पर बात कुछ ज्यादा नहीं बनी। अब तो मै उन्हें घर पर ही रखती हूँ। उनकी और बिट्टू दोनों की देखभाल का जिम्मा तो अब मेरा ही है न अब मेरा ही फर्ज बनता है कि---- । ' भागो का गला रूँध गया था और मै फिर पूछ ही नहीं सकी थी कि बिटटु का किस बात के लिए ऑप्रेशन होना है।

राखी तो भागो बाँधती थी इसकी रक्षा का भार मोहन ने लिया था न कि --- । मै सोच रही थी और सोच रही थी कि सम्बन्ध क्या इतनी दूर और इतनी देर तक भी चलते है---?



अपनी कैद मे

- मणिका मोहिनी -

उस समय वह बहुत छोटा था। लगभग पाँच साल का रहा होगा। इसलिए माँ की धुँधली सी स्मृति ही उसकी आँखो मे रह-रहकर झिलमिला उठती थी। सूना उदास सा चेहरा, लेकिन माथे पर दिप-दिप करती लाल बडी बिन्दी और बालों के बीच मे लाल रग की लम्बी सी लकीर। सूजी की खीर की कटोरी हाथ में, चेहरे पर छलछलाती हँसी और होंठो पर मधुर स्वरो मे एक लय'राजा बेटा राजा मुन्ना खीर खाएगा—चिडिया आजा खा ले—तोते आजा खा ले—नहीं, नही मेरा राजा बेटा खाएगा—राजा बेटा राजा मुन्ना खीर खाएगा'—बस इतनी सी हँसी और चरचाहट उसके इर्द गिर्द बाकी सब शान्त।

पिता के सामने माँ कभी हँसी हो उसे याद नही। कभी रोई हो, इसका भी उसे कोई ख्याल नहीं। केवल एक हल्की-सी छवि, जो ज्यादा सोचने पर टूट जाती थी। भीड मे माँ को पहचान ले माँ को ऐसा कोई चित्र उसके दिमाग में नहीं बनता था। सिर्फ एक अहसास था कि माँ थी, माँ ऐसी थी, कैसी माँ-जैसी बस। इसी अहसास को स्मृति मे सँजोए-सँजोए उसने हॉस्टल मे सोलह वर्ष गुजार दिए थे। बच्चे से किशोर और किशोर से युवक बनने की सक्रामक अवधि मे वह एक दिन के लिए भी माँ की उस धुँधली छवि को नही भूल पाया था। छुट्टियों मे घर जाने पर एलबमों में लगी ढेरो फोटों में वह माँ का फोटो चुपचाप ढूँढा करता। पिता को फोटो खींचने और खिचवाने दोनो का शौक था। अनेक व्यक्तियों अनेक स्थानों और अनेक प्रकार के छायाचित्र एलबम में सुरक्षित थे, लेकिन माँ का फोटो—यह उसने धीरे-धीरे बडा होने पर जाना था कि माँ से अलग होने पर पिता ने माँ के समस्त फोटो जला डाले थे। अतीत की कोई निशानी बचने न पाए। पिता पुरानी जिन्दगी का कोई चिन्ह अपने पास रहने देना नहीं चाहते थे नफरत के कारण या पीडा के कारण यह उस समय वह नहीं जानता था, लेकिन धीरे-धीरे उसके सामने यह सचाई खुलती गई थी कि पिता को माँ के ख्याल मात्र से नफरत थी आज भी है इसीलिए उन्होंने हर सबूत खत्म कर दिया था, जिससे माँ का कभी उनके साथ होना भी जाहिर हो। लेकिन वह—माँ की कोख से जन्मा था—कितने बडे, जीते-जागते सबूत के रूप मे उनके साथ था इसका पिता को मलाल नहीं बल्कि तसल्ली थी कि उन्होने भी अपनी कोई निशानी माँ के पास नहीं छोडी है। वही एक ऐसा बीच मे झूलता हुआ बच रहा था जिसे दोनो तरफ की निशानियाँ

मजूर थीं। पिता के साथ वह था ही और माँ के स्मृति-चिन्ह के उसके मा[illegible]-पटल पर गहराई से खुदे हुए थे। वह खुदाव दिन-पर-दिन और गहरा होता गया। उ[illegible] प्रति कोमल भावना धीरे-धीरे एक निश्चय में बदलती जा रही थी कि [illegible] वह माँ के पास जरूर जाएगा। जैसे-जैसे वह और बड़ा होता गया माँ के पास जा[illegible] निश्चय माँ को अपने पास लाने के निश्चय में बदलता गया। वह जैसे खुद को माँ की जिम्मेदारी उठाने लायक जिम्मेदार व्यक्ति समझने लगा हो। इसीलिए जब वह सचमुच [illegible] हुआ, [illegible]ज की पढ़ाई समाप्त कर आत्मनिर्भर बनने योग्य हुआ उसने सबसे पहले माँ को अपने साथ रखने का एक ऐसा फैसला किया, जिसकी खबर उसके सिवा किसी को नहीं थी। पिता के मुँह से माँ के बारे में उसने कोई अच्छी बात नहीं सुनी थी। माँ एक बुरी औरत है-इस अर्थ को ध्वनित करने वाली बातें ही, छुट्टियों में घर आने पर, उसके कानों में पड़ा करती थी। 'बुरी औरत' क्या होती है इसका उसे पता नहीं था। उसके बड़ा होते-होते तो घर में माँ की चर्चा ही एकदम बंद हो गई थी, क्योंकि अब घर में एक नई माँ आ गई थी और जो भी चर्चाएँ थी सब नई माँ से सबंधित थीं। उसकी अपनी माँ की छाया उस घर से धीरे-धीरे धूमिल होती गई थी और जब वह अपनी माँ को अपने पास रखने का फैसला करने जितनी उम्र को पहुँचा तब घर के लोग, पिता तक, माँ को जैसे भूल चुके थे। यही वजह थी कि मन में पलने वाले अहसासों को बाहर आने के लिए कोई रास्ता नजर नहीं आया। एक तरह से यह उसके लिए अच्छा ही हुआ, अन्यथा उसके निर्णय को कमजोर करने वाले विरोधी तत्वों का उसे सामना करना पड़ सकता था। अब वह निर्द्वन्द्व था और उसके सामने का रास्ता एकदम निष्कंटक।

एक और सुविधाजनक स्थिति जो उसे मात्र संयोग नहीं अपना सौभाग्य लगी थी कि उसकी नियुक्ति उस शहर में हुई थी जो उसके पिता का शहर नहीं था। पिता से वह दूर भागना नहीं चाहता था पिता से वह बेहद प्यार करता था। प्यार उसे नई माँ से भी था क्योंकि नई माँ ने कभी उसे दुःख पहुँचाने वाली कोई बात नहीं की थी बल्कि उसे अपने बच्चे-सामान ही आराम सुविधाएँ देने का हमेशा प्रयास किया था लेकिन-उसकी अपनी माँ-वह इस वर्तमान ढाँचे में कहाँ समा सकती थी? यही कारण था कि उसे एक अन्य शहर में नौकरी मिल जाना अत्यंत सुविधाजनक लगा था।

पहला वेतन मिलने के बाद उसने सबसे पहला काम अपने नाना के घर पत्र लिखने का किया था कि वह आ रहा है माँ से मिलने।

उसके दिमाग में नाना के घर की छवि माँ की छवि से भी धुँधली थी लेकिन जब वह

कैसे न कैसे पता लगाकर ढूँढता-ढूँढता उस घर के दरवाजे पर पहुँचा तो सुदूर बचपन की यादें एक-एक कर ताजी होने लगी लेकिन फिर भी वह मामा-मासियों के नाम सिलसिलेवार याद नहीं कर पाया। एक बडे से कमरे में बहुत से लोग उसके इर्द-गिर्द इकट्ठे थे।

'हम कहते थे ना, बेटा बडा होकर एक न एक दिन जरूर आयेगा' कोने मे खडी खामोशी से उसे निहारती जिस स्त्री को सम्बोधित करके यह कहा गया था तो वही उसकी माँ है? साधारण सूती धोती, बालों से झाँकती सफेदी बुझे-बुझे चेहरे पर जहाँ नहीं झुर्रियाँ सूनी आँखो मे असुरक्षा की भावना भविष्य का डर, भीचे हुए होंठ जैसे ब... पहले सिल दिए हों और इस सबके ऊपर बिछलता हुआ एक अविश्वसनीय सुख-दुख ... आने का, आँखो मे हल्की-सी चमक-डर-डर कर उठती हुई उम्मीद की जिसके ना... होने का यकीनी भाव भी पास ही कहीं ठहरा हुआ। तो यह है उसकी माँ!वह उठा।

यहाँ आने से पूर्व अनेक बार उसने सोचा था कि माँ से मिलने पर सबसे पहले उसके पाँव छुएगा। केवल संस्कारवश नहीं, बल्कि उसके मन में वैसा भाव था—श्रद्धामया माँ होने से अधिक इतने वर्षों का पुत्र-बिछोह सह रही स्त्री का तप पति-वियोग सह रही एकाकिनी होने का श्राप, पिता के घर में लौटकर कलंकिनी कहलाकर मिलने वाली सामाजिक प्रताडनाएँ और ऐसा ही सब कुछ जिसे वह अपनी बहुत कच्ची उम्र से दुनिया को कण-कण पहचानता हुआ माँ के व्यक्तित्व को साथ जोडकर मन ही मन उस पर अपनी श्रद्धा लुटाता आया था और सबसे पहले दर्शन पर एकमात्र पाँव छूने की बात के अतिरिक्त और कुछ नहीं सोच पाता था। लेकिन वह उठा और सबंधियों के बीच से निकलकर उसने माँ को गले से लगा लिया। सबके बीच कुछ इतनी बेचारी लगी थी माँ उसे कि उसने क्षणांश में मन में निर्णय लिया था कि नाना के घर एक दिन भी नहीं गँवाना है, वह आज ही माँ को अपने साथ ले जाएगा। उसने हल्के-हल्के सुबकियों की आवाज सुनी, तो चौंका था। माँ उसके गले से लगे लगातार रो रही थी लेकिन बेआवाज। क्या यह उसके आने की खुशी का रोना था या माँ के अतीत और वर्तमान का मिला-जुला गम?पर माँ का रोना इतना चुप हुआ क्यों है?उसका मन हुआ माँ से कहे'माँ खुल कर रो लो'पर कह न सका। उसने महसूस किया कि उसका गला भरा हुआ है। एक शब्द भी वह बोला कि खुद रो पड़ेगा और खुद रोएगा तो माँ को सँभालेगा कौन?उसे अपने को बाँधना है माँ को सँभालने के लिए। यही उसका धर्म है। धर्म'शब्द कैसे खुद-ब-खुद उसके ध्यान में आया उसे हैरानी हुई क्योंकि अब तक तो वह दोस्तों के साथ मिलकर धर्म'शब्द पर हँसता आया था मजाक लेकिन आज—उसे लगा उसके जीवन में माँ के प्रवेश के साथ धर्म ने

किया है। वह अचानक मन-ही-मन अभिभूत हो उठा था माँ को रिश्ते की महिमा को महसूस कर।

सब तितर-बितर हुए माँ ने कुछ पलो मे ही उसके सम्मुख सारा इतिहास खोलकर रख दिया था। माँ जैसे बरसों की भरी बैठी थी, अपने आप मे एकदम बद एक अजीब-सी कैद मे छटपटाती हुई। वह सभवत पहला इसान था जिसके सम्मुख बरसों से सिले हुए होठ खुले थे और उन होठो से सबसे पहली बात यह निकली थी-"पता नहीं, मेरा क्या होगा? फिर विस्तार से उसे बताया था, 'तेरे नाना बहुत बूढे है हर वक्त बीमार रहते है कुछ भरोसा नहीं कब क्या हो जाए सारी जायदाद तेरे मामाओं के नाम कर दी है, मेरा जरा भी नहीं सोचा कि क्या होगा? उनके बाद कहाँ रहूँगी। तेरे मामा यूँ अच्छे थे लेकिन मामियों के आने के बाद—। मैने कहा, एक कमरा मेरे नाम भी लिख दो ताकि बुढ़ापे के लिए निश्चिन्त हो सकूँ तो सब बोले—आगे-पीछे कोई नहीं और हिस्सो की पडी है। एक मामी तो यह भी बोली कि इस मकान पर हक जमाने के लिए ही अपना घर छोड़ा है। अब तो जायदाद में बेटियों का भी हिस्सा होता है और फिर मुझ जैसी अनाथ बेटी का—क्या तेरे नाना को ख्याल नहीं रखना चाहिए था? कहते है-अकेली जान का क्या है कही भी रह लेगी। भाई कहते है तुम ऐसा क्यो सोचती हो कि हम तुम्हे रोटी नहीं खिलाएँगे। बस भाई भाभियों की गुलामी करते हुए कैसे न कैसे रह रही हूँ, अपना कहने को कुछ नहीं एकदम आश्रित जैसे "माँ के पास बताने के लिए बहुत कुछ था। वह बोलती गई मैने बहुत चाहा कि कुछ काम करूँ लेकिन किसी ने करने नहीं दिया। कहा-छोटा-मोटा काम करने से हमारी बदनामी होगी। और मै कौन-सी पढी-लिखी थी कि कोई दफ्तरों में नौकरियाँ मिलती। पढने का भी कई बार सोचा सोचा लेकिन सिर्फ मेरे चाहे क्या हो सकता था। बस घर में रहो जिसके घर में रोटी बनाओ उसके घर रोटी खा लो। कभी-कभार भाई बाप हाथ पर पचास सौ रूपये रख देते है और——

तो इसीलिए झाँक रहा था माँ की आँखो मे असुरक्षित भविष्य का डर।

"बस माँ बस अब समझो तुम्हारे दु खों का अन्त हो गया है।

'कैसे? माँ ने ऐसे पूछा जैसे उसने कोई अनहोनी बात कह दी हो।

"मैं तुम्हें अपने साथ ले जाने आया हूँ, माँ।"

"क्या? माँ ऐसे चौंकी जैसे इतने दुःख सहे हों कि किसी सुख का विश्वास ही नहीं।

'हाँ अब तुम मेरे साथ रहोगी।"

"क्या तू सच कह रहा है?भरोसा कैसे करे माँ?अब तक विश्वास टूटता जो रहा है।

"हाँ, हम आज ही यहाँ से चले जाएँगे।"

"लेकिन—लेकिन—तेरे पिता—"

उसने जब माँ को पूरी स्थिति और अपनी योजना से परिचित कराया तो भी नाना के घर से विदा होने तक माँ की आँखो में अविश्वास ही झाँकता रहा था जैसे मन ही मन स्वय से पूछ रही हो-ऐसा कैसे हो सकता है।

अपने घर ले आने के बाद उसने सबसे पहले माँ का बाहरी हुलिया सुधारा। नए कपडे लाकर दिए और एक बडी रकम माँ के हाथों मे थमा दी, इस आश्वासन के साथ कि अब तुम राज करो माँ, यह तुम्हारा अपना घर है जैसे चाहो रहो जो मर्जी बनाओ खाओ।

माँ धीरे-धीरे सहज होने लगी थी। वह माँ को जैसे नए सिरे से गढना चाहता था। उसके मन पर माँ के दु खो-अभावों का अहसास था और वह सोचा करता था कि जो माँ ने अब तक उम्र दूसरों के सहारे गुजार दी है अब धीरे-धीरे उस पराश्रित रहने की भावना से वह मुक्त हो। आम चलताऊ कथन को चरितार्थ करती हुई माँ कभी पति के आसरे थी। पति ने दुत्कारा तो वापस पिता की शरण मे चली गई। और अब बेटे को सहारे है लेकिन बेटा चाहता था कि माँ स्वय अपना व्यक्ति होना महसूस करके जिए किसी के आश्रित होने की भावना के साथ नहीं बल्कि अपने भीतर की वह सभावनाएँ खोजे, जिनके जरिए उसे यह महसूस हो कि वह भी कुछ है मात्र एक स्त्री होने के अभिशाप से ग्रस्त नहीं। माँ ने अपने ही ढग से इस बात को समझा था और एक दिन उससे बोली थी 'लोग कहते है, औरत का जीवन सारी उम्र पुरुष की कैद में ही गुजरता है। पहले पिता की गुलामी सही अब में पुत्र का रौब लेकिन मै इस बात को यूँ कहती हूँ कि औरत हो या आदमी हरेक की जिन्दगी में तीन पडाव आते है। पहला माता-पिता के घर, दूसरा पति या पत्नी को सग। तो मेरा पिता और पति वाला पडाव जितना बुरा बीता है उतना ही अच्छा मेरे पुत्र वाला पडाव है। जितने दु:ख मैने पिता और पति के राज में पाए, उस सबकी कमी मेरे बेटे ने पूरी कर दी। मेरा बचपन और यौवन भले ही रोते बीते है पर बेटे, तूने मेरा बुढ़ापा सुधार दिया।"

माँ में आत्मविश्वास जगाने के लिए उसने उसे एक सिलाई के स्कूल में दाखिल होने के लिए मना लिया था। उसने सोचा था माँ एकमात्र यही काम बखूबी निभा सकती है। माँ पहले तो हँसी थी कि उसे सिलाई सीखकर क्या करना है, लेकिन उसने समझा दिया था "तुम समझ सकती हो माँ, सिलाई सीखना तुम्हारे लिए कतई जरूरी नहीं है सीखकर

शायद कभी तुम्हारे काम भी न आए लेकिन जरा सोचो इस बहाने तुम घर से निकलोगी रोज अच्छी तरह से तैयार हुआ करोगी, स्कूल मे तरह-तरह की औरतों-लडकियों से मिलोगी, इस तरह तुम्हे कुछ नयापन महसूस होगा, जिन्दादिली महसूस होगी। सिलाई तो सिर्फ बहाना है माँ ताकि तुम जिन्दगी मे रवानगी महसूस कर सको, अपने आत्म को पहचान सको।'

माँ ने सिलाई के स्कूल में जाना शुरू कर दिया था। पहले कुछ दिन उसे सकोच हुआ शर्म भी आई। उसकी उम्र की कोई हमजोली वहाँ नहीं थी, लेकिन शनै शनै नए डिजाइन वह अपनी कल्पना से बनाने लगी। एकाएक माँ व्यस्त हो उठी थी।

नाना के घर जब उसने पहली बार माँ को देखा था और आज की माँ-इन दोनों के रूप में जमान आसमान का अन्तर आ गया था। रहन सहन में तो परिवर्तन आया ही था उसकी आँखो में भी धीरे-धीरे चमक भरने लगी थी लेकिन अभी भी वह एक छोटा-सा प्रश्न रोज किसी न किसी बहाने धीमे उसकी ओर सरका देती थी कि बेटा तू मुझे छोड तो नहीं जाएगा? या 'बेटा तू मुझे कभी अपने घर से निकाल तो नहीं देगा? वह हँसकर माँ को जैसे सात्वना दिया करता, मेरा घर कैसा है माँ यह घर तो तुम्हारा ही है। तुम तो मुझे अपने घर से निकाल नहीं दोगी?'

माँ रोज ही उसके पास बैठकर अपने अतीत की कोई न कोई कहानी सुनाया करती और वह भी रस ले-लेकर सुना करता। एक दिन माँ ने उसे अपने अतरग के बहुत ही कोमल हिस्से का परिचय दिया तो वह दग रह गया कि माँ इतनी सच्ची इतनी देवी भी हो सकती है।

माँ को पिता से बेइन्तजा प्यार था और पिता को माँ से बेइन्तजा नफरत। न माँ के प्यार का कोई प्रत्यक्ष तार्किक कारण था न पिता की नफरत का । बस जैसे अलग-अलग दो समानान्तर रेखाएँ हों कभी न मिलने की नियति के श्राप से ग्रस्त। माँ के मन में प्यार का लहराता सागर था और पिता प्यार जैसे कोमल भाव से शून्य। माँ छलछल बह पर न कभी प्यार का कोई फूल खिला न जिससे कभी कोई छाया मिली। और माँ धीरे-धीरे सूखती चली गई फूल-पत्ते मुरझाने लगे बहाव रूक गया लेकिन पिता की नफरत बाढ की भाँति उसके इर्द-गिर्द बढती गई। जैसे माँ के लबालब प्यार को वह भी अपनी नफरत से तोलना चाहते हों या खारिज करना चाहते हों। माँ का यही प्यार से लबरेज व्यक्तित्व पिता के मन में अनेक प्रकार की शकाएँ उत्पन्न करने का कारण बना, लेकिन माँ की दृष्टि में बहुत प्रमाणिक रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि पिता सचमुच की शकाएँ पाले थे या मात्र

अपनी हीन-ग्रंथि को छुपाने के लिए उन्होंने यह आवरण ओढा था क्या माँ को 'बुरी औरत' कहना भी पिता के लिए ऐसा ही कोई आवरण था? उसके मन में प्रश्न उभरा था जो भी हो, माँ और पिता दो ऐसी धूरियाँ थे जो अलग-अलग ही पनप सकतीं थी उसने मन में यही निष्कर्ष निकाला था और दोनो को प्रति संवेदनशील होता हुआ प्यार और आदर से भर उठा था। वह उन दोनों ईकाइयों के मेल से बनी एक तीसरी ईकाई था, इसीलिए चीजो को इतने मुक्त भाव से ग्रहण करन का भाव उसका एकदम अपना था, जिसकी मिसाल, माँ भी कहा करती थी, अब तक कहीं नहीं देखी।

लेकिन माँ पनपीं कहाँ? पिता फिर पनपने का कम से कम भ्रम तो पैदा कर सके नए सिरे से दूसरी जिन्दगी शुरू करके। लेकिन माँ—?नाना के खानदान को एक मुफ्त की नौकरानी मिल रही हो फिर वहाँ सोच के धरातल पर भी सस्कारों और पुरातनपन की जडता हो ऊपर से माँ का आत्म-निर्भर न होने के साथ-साथ आत्मबल रहित भी होना-माँ का यही भाग्य था, जिस पर अब पछताना व्यर्थ है। लेकिन आगे के रास्ते के सारे ककड-काँटे वह अपनी पलको से बुहार देगा यह उसका सकल्प है। पिता स्वय समर्थ है माँ को सामर्थ्य वह देगा। पिता ने अपनी राह अलग कर ली [redacted] माँ के लिए एक पुख्ता जमीन वह तैयार करेगा। मानों जीने का एक मकसद उसके सामने खुद-ब-खुद पैदा हो गया हो। बिना मकसद के जीना क्या ?उसने सोचा था।

एक दिन वह शाम को घर लौटा तो माँ उसे अचम्भे से भरकर देखती रह गई। अपलक।

'ऐसे क्या देख रही हो माँ?

तू बिल्कुल उनके जैसा लगता है। तेरी उम्र मे वह बिलकुल तेरे जैसे लगा करते थे।"

"वह कौन माँ?किनके जैसा? उसने माँ को तग करना चाहा।

"शैतान कहीं का "माँ हँसी लेकिन एक झटके से उदास हो गई 'वही—वही—"

"छोडो भी माँ!क्यो हर वक्त पुरानी कोई न कोई बात याद करने बैठ जाती हो?

'पहले वादा कर—

क्या ?'

तू कभी मुझसे दूर तो नहीं जाएगा?उसकी तरह मुझे छोड तो नहीं जाएगा?

"कैसी बच्चों जैसी बातें करती हो माँ?ऐसा क्यो सोचती हो?

"उसने छोड़ दिया ना–और तू–तू बिलकुल वैसा लगता है।'

'मेरी अच्छी माँ,' उसने माँ को शब्दों और हाथों, दोनों से सहारा देते हुए उठाया,"चलो, अब फालतू बातों को दिमाग से निकालो और खुश रहना सीखो–"

माँ को रोज उसमे पिता की कोई न कोई छवि नजर आ ही जाती और फिर रोज उससे वादे करवाने का क्रम शुरू हो जाता। लगातार दिनों और महीनों वह मा के सामने एक ही वायदा दोहराता रहा और एक दिन अनचाहे अनजाने माँ पर खीज उठा। माँ सहम गई। सुबह का वक्त था। वह काम पर जाने की जल्दी में था इसलिए बात को जहाँ का तहाँ छोड़कर वह घर से निकल गया।

शाम तक उसके मन से बात निकल चुकी थी। उसकी नजरों में बात कुछ ऐसी थी भी नहीं जिसे वह मन में रखता। शाम को अपनी ही धुन में डुप्लीकेट चाबी से ताला खोलकर जब वह फ्लैट मे घुसा तो माँ नजर न आई। पिछले कमरे का दरवाजा भीतर से बद था। तो क्या माँ भीतर है?उसने दरवाजा खटकाया 'अन्दर क्या कर रही हो माँ?दरवाजा खोलो।

कोई उत्तर न पाकर वह दूसरी ओर खिड़की के पास गया। खिड़की से उसने देखा माँ दरवाजे के पास सहमी-सहमी खड़ी है। उसने प्यार से पुकारा "माँ, दरवाजा खोलो।'

माँ उसे देखकर काँपने लगी। उसकी कमर झुक गई। एक दहशत उसके चेहरे पर उभर आई। माँ का यह डरा-डरा रूप देखकर छन्न से उसके दिमाग में कुछ बजा।

खोलो न माँ। क्या हुआ है तुम्हें? उसकी आवाज मे जरूरत से ज्यादा नरमी थी।

'खोलती हूँ,' हल्की सी आवाज माँ के होंठो से निकली "पर–पर–'

'पर वया मुझे मारेगा तो नहीं?सुबह गुस्सा होकर गया था।

क्या कह रही हो माँ? पागल हो गई हो क्या ?मै–मै तुम्हारा बेटा हूँ मै–कहते-कहते वह कुछ पलो के लिए सुदूर अतीत में पहुँच गया–बहुत-बहुत छोटा वह। एक कमरे मे माँ के आँचल से चिपका हुआ। माँ का यही काँपता दहशत भरा रूप और बद कमरे के बाहर खिड़की से दिखते हुमहुमी में पैर पटकते खूँखार पिता। काँपती हुई माँ के होंठों से निकलते उसे समझ मे न आनेवाले लरजते हुए शब्द। पिता को एक कौतुक के समान देखता हुआ माँ से चिपका खड़ा मासूम वह। उसने सिर को झटका दिया और वर्तमान में लौट आया

'माँ दरवाजा खोलो माँ यह मै हूँ, तुम्हारा बेटा–'

माँ ने धीरे-से दरवाजा खोला। वह सामने आया तो माँ उसके पैरों में गिर पड़ी। आँसुओं की धाराएँ बह निकलीं। अनगिनत हिचकियाँ बँध गईं और कुछ टूटे-फूटे शब्द उसके कानों से जा टकराए- "मुझे माफ कर दे, बेटा-सुबह मैंने तुझे दुखी कर दिया-बस एक बार मुझे माफ कर दे--

उसने नीचे झुकी माँ को उठाकर गले से लगा लिया और थपकियाँ देते हुए सोचने लगा--माँ तो उसमें उसे देख ही नहीं रही, किसी और को देख रही है। उसने माँ की मुक्ति के लिए क्या-क्या नहीं किया, लेकिन माँ तो अपनी कैद से निकलना ही नहीं चाहती। माँ दुःखों को हर वक्त ओढ़े रहना चाहती है।--वह कहना चाहता था, "माँ,मैं तुम्हारा बेटा हूँ, मुझमें अपने बेटे का रूप देखो माँ, दुःखदायी पति का नहीं-- लेकिन कह नहीं सका। उसे लगा, उसके ये शब्द माँ तक नहीं पहुँचेंगे। माँ ने अपने इर्द-गिर्द बहुत सारी समाधें खड़ी की हुई हैं, जिनके पीछे कैद में वह अपने अर्थों में सुरक्षित है। उसने पहली बार मन में पिता के लिए घृणा महसूस की। साथ ही उसे लगा कि माँ को अपने साथ रखने का उसका फैसला माँ के हक में नहीं था। वह एक बार भोगी हुई मौत को दुबारा भोग रही है और इसका कारण वह है-सिर्फ वह क्यों कि उसने सूरत माँ का कहना है, पिता से पाई है। माँ इतनी बड़ी होने पर भी क्यों नहीं समझती कि जिन्दगी सूरत से नहीं, सीरत से चलती है। उसे एकाएक लगा वह बहुत बड़ा ज्ञानी हो गया है और माँ नासमझ बच्ची जैसी उसकी गोद में बिसूर रही है, जिसे नए सिरे से बहलाने की जिम्मेदारी उसकी है--सिर्फ उसकी।



पीहर

- मीना अग्रवाल -

घर-भर मे देसी घी की महक भरी हुई थी। इमरतियाँ, गुलाबजामुन, मटर के समोसे, दाल भरी कचौरियाँ, केसरिया कलाकन्द। और भी न जाने क्या-क्या !

सध्या को होने वाली सूर्य के विवाह की ज्योनार की तैयारी लगभग पूरी हो गई थी। अबाले-वाली भाभी ने एक-एक चीज का मुआयना भी कर लिया था। उन्हे ही घर-भर में खाने-पीने की परख है, ऐसा माना जाता था।

उन्होंने लवी को पुकारा था, 'आओ भाई जरा देखो सब- कुछ ! आखिर को बनडे की बहन हो। देर में आई हो तो क्या , आज का मेहमानों का भार तो तुम जानों। तुम पर ही है ?उन्होंने हँसकर निहोरा कर लिया था लवी का।

"बस भी कीजिये भाभीजी मुझे न पहले कुछ आता था न अब आता है देखिए न। आया न हो तो मैं तो मुन्नी को भी ?

भाभी ने उसका मुहँ बन्द कर दिया था, ' पगली !कोई सुन लेगा अरे नजर लगा देते है लोग नजर।अच्छा जा तू अपने कमरे में तैयार हो आकर मै देख लूँगी सब ।"

लवी अपने कमरे में आ गई। वे दोनों मुन्नी के साथ आज प्रात ही प्लेन से आए हैं। आया मुन्नी का तामझाम लेकर रात को ही ट्रेन से पहुँच चुकी थी।

भैया तो जब से वे लोग आए है जीजाजी की आवभगत में लगा हुआ है। अपने दोस्तों की एक छोटी- सी पार्टी जीजाजी के स्वागत में आयोजित कर रक्खी है।

उसी समय से जब से आई है जी दहक रहा है। भैया को पास बैठा कर वह पूछना चाहती थी 'कैसे की तूने दोस्ती ?और हमारी अम्मा मान कैसे गई ?उन्हें तो प्रेम की बात से कडी नफरत है?

पर वह तो बस जीजाजी -जीजाजी कहता फिर रहा है।

अपने चिर-परिचित पलँग पर लेटते ही उसे बहुत कुछ याद आने लगा । सोचने लगी की जाकर एक बार तो अम्मा से लड ही ले। भैया के प्रेम-विवाह पर कितनी उमगी-उमगी फिर रही है। बाबूजी तो फिर भी बेचारे उसे गले लगा कर सुबक लिए थे। एक अम्मा है कि यही

देखती पूछती रहीं कि अपना गहना कपड़ा ढंग से लाई हो कि नहीं। इतने लोग आएँगे अच्छे से पहनना -ओढ़ना समझीं।

चार दिन पहले से , जबसे यहाँ आने की तैयारियाँ आरंभ हुई थी , हर पल उसे अपने शहर का प्लेटफार्म, घर का मार्ग द्वार का आँगन आँखों के सामने आता-जाता दिखाई दे रहा था। एक वर्ष हो गया। वह बार-बार सोचती , स्टेशन से घर तक की सड़क तो बहुत चौड़ी हो गई होगी?दोनों ओर की दुकाने भी ढंग की बन गई होंगी?पड़ोस के मंदिर की अमराईयों के बीच वाले चबूतरे पर मौलश्री और भी अधिक बरसती होगी ?वहीं तो वे सब सखियाँ मिला करती थीं। हँसती - बतियाती कच्ची अमियो को दाँत तले कुतरती अपनी-अपनी राम कहानी कहा करती थीं।

उसने अनुमान लगाया था वे नदी -से बहते हुए दिन, वह कुछ और जी लेगी। मोरपंखों पर रचे रंगों से जी जुड़ा लेगी। मौसम में फिर दिन-दिन भर नहा लेगी।

उसी समय से उसे आनन्द की सुधि मेहराबों से छन-छन कर आती धूप के उजाले-सी पसरी-पसरी दिखाई देने लगी थी।

विवाह से पहले, जब वह अपनी सुध-बुध खो चुकी थी, एक दिन भाभी के सामने छटपटा-कर सब उगल दिया था। उन्हों ने प्यार से समझाया था, उसकी सिहरन को पहचाना था। अपनी हथेलियों पर उसके गर्म आँसुओं को महसूसा भी था। उसकी विकलता और हठ देखकर वे काँप गई थीं।

"लवी तुम्हारा यह निर्णय तुम्हारे दिमाग का बौरायापन लग रहा है। ऐसा जान लो। अम्मा ने इतने ऊँचे -ऊँचे मसूबे बाँध रक्खे है तुम्हारे लिए। अपने इस कृत्य से जीवन भर के लिए उन्हे दर्द की गठरी दे जाओगी, सोच लो'

अम्मा पर भी जब यह बात उजागर हुई थी तो उन्होने अपनी विडम्बना को कोसा था उसकी अबोधता पर दोहत्थड मारी थी।

उसने तब चाहा था कि बाहर जो ऊँचे -ऊँचे पहाड़ है घने बादल है उन्मुक्त हवा है पक्षियों के कलरव है उन सब के पीछे छिप जाए। कोई उसे न देखे। शर्म से उलझा-उलझा उसका व्यक्तित्व लाज के अदृश्य धागों के पर्दों से पुर गया था उसने स्वय को उसके भीतर सुरक्षित मान लिया था ।

पीहर

- मीना अग्रवाल -

घर-भर में देसी घी की महक भरी हुई थी। इमरतियाँ, गुलाबजामुन, मटर के समोसे, दाल भरी कचौरियाँ केसरिया कलाकन्द। और भी न जाने क्या-क्या !

संध्या को होने वाली सूर्य के विवाह की ज्योनार की तैयारी लगभग पूरी हो गई थी। अबाले-वाली भाभी ने एक-एक चीज का मुआयना भी कर लिया था। उन्हें ही घर-भर में खाने-पीने की परख है ऐसा माना जाता था।

उन्होंने लवी को पुकारा था 'आओ भाई जरा देखो सब- कुछ । आखिर को बनडे की बहन हो। देर में आई हो तो क्या , आज का मेहमानों का भार तो तुम जानो। तुम पर ही है ?उन्होंने हँसकर निहोरा कर लिया था लवी का।

'बस भी कीजिये भाभीजी मुझे न पहले कुछ आता था न अब आता है देखिए न। आया न हो तो मैं तो मुनी को भी ?

भाभी ने उसका मुहँ बन्द कर दिया था, ' पगली !कोई सुन लेगा अरे नजर लगा देते हैं लोग, नजर!अच्छा जा तू अपने कमरे में तैयार हो जाकर मैं देख लूँगी सब ।"

लवी अपने कमरे में आ गई। वे दोनो मुन्नी के साथ आज प्रात ही प्लेन से आए हैं। आया मुन्नी का तामझाम लेकर रात को ही ट्रेन से पहुँच चुकी थी।

भैया तो जब से वे लोग आए है, जीजाजी की आवभगत में लगा हुआ है। अपने दोस्तों की एक छोटी- सी पार्टी जीजाजी के स्वागत में आयोजित कर रक्खी है।

उसी समय से जब से आई है जी दहक रहा है। भैया को पास बैठा कर वह पूछना चाहती थी "कैसे की तूने दोस्ती ?और हमारी अम्मा मान कैसे गई ?उन्हें तो प्रेम की बात से कहीं नफरत है?

पर वह तो बस जीजाजी -जीजाजी कहता फिर रहा है।

अपने चिर-परिचित पलँग पर लेटते ही उसे बहुत कुछ याद आने लगा । सोचने लगी की जाकर एक बार तो अम्मा से लड ही ले। भैया के प्रेम-विवाह पर कितनी उमगी-उमगी फिर रही है। बाबूजी तो फिर भी बेचारे उसे गले लगा कर सुबक लिए थे। एक अम्मा है कि यही

देखती पूछती रहीं कि अपना गहना कपड़ा ढग से लाई हो कि नहीं। इतने लोग आएँगे, अच्छे से पहनना -ओढना समझीं।

चार दिन पहले से , जबसे यहाँ आने की तैयारियाँ आरभ हुई थी , हर पल उसे अपने शहर का प्लेटफार्म, घर का मार्ग द्वार का आँगन आँखों के सामने आता-जाता दिखाई दे रहा था। एक वर्ष हो गया। वह बार-बार सोचती स्टेशन से घर तक की सड़क तो बहुत चौड़ी हो गई होगी?दोनो ओर की दुकाने भी ढग की बन गई होंगी?पड़ोस के मंदिर की अमराईयो के बीच वाले चबूतरे पर मौलश्री और भी अधिक बरसती होगी ?वहीं तो वे सब सखियाँ मिला करती थीं। हँसती - बतियाती कच्ची अमियो को दाँत तले कुतरती अपनी-अपनी राम कहानी कहा करती थीं।

उसने अनुमान लगाया था,वे नदी -से बहते हुए दिन, वह कुछ और जी लेगी। मोरपखों पर रचे रगों से जी जुड़ा लेगी। मौसम में फिर दिन-दिन भर नहा लेगी।

उसी समय से उसे आनन्द की सुधि मेहराबों से छन-छन कर आती धूप के उजाले-सी पसरी-पसरी दिखाई देने लगी थी।

विवाह से पहले जब वह अपनी सुध-बुध खो चुकी थी एक दिन भाभी के सामने छटपटा-कर सब उगल दिया था। उन्हों ने प्यार से समझाया था, उसकी सिहरन को पहचाना था। अपनी हथेलियों पर उसके गर्म आँसुओं को महसूसा भी था। उसकी विकलता और हठ देखकर वे काँप गई थीं।

'लवी तुम्हारा यह निर्णय तुम्हारे दिमाग का बौरायापन लग रहा है। ऐसा जान लो। अम्मा ने इतने ऊँच -ऊँचे मसूबे बाँध रक्खे है तुम्हारे लिए। अपने इस कृत्य से जीवन भर के लिए उन्हे दर्द की गठरी दे जाओगी, सोच लो'

अम्मा पर भी जब यह बात उजागर हुई थी तो उन्होने अपनी विडम्बना को कोसा था उसकी अबोधता पर दोहत्थड मारी थी।

उसने तब चाहा था कि बाहर जो ऊँचे -ऊँचे पहाड़ है घने बादल है, उन्मुक्त हवा है पक्षियों के कलरव है, उन सब के पीछे छिप जाए। कोई उसे न देखे। शर्म से उलझा-उलझा उसका व्यक्तित्व लाज के अदृश्य धागों के पर्दों से पुर गया था उसने स्वय को उसके भीतर सुरक्षित मान लिया था ।

अपने अधिकारों से जूझना पूरी सच्चाई व खुले दिल से उन्हें स्वीकारना किस तरह किया जाता है उसे सहेलियों ने उकसाया भी था। वह तो बेदम ही हो गई थी। सोच लिया था, प्रेम का सोपान केवल विवाह ही तो नहीं है। वह जीवन- भर उस थाती को हृदय मे सँजो लेगी। निकालकर पढ़ लिया करेगी। अपने केवल अपने स्वार्थ के लिए सबका जी दुखाए बदनामी भी मोल ले इस विचार ने उसे कायर बना दिया था।

उसका यह निर्णय और भी दृढ़ हो गया था जब एक रात मे उसने माँ की बाबूजी को लताड़ना सुनी थी 'अब कहे देती हूँ पन्द्रह दिन के अन्दर बेटी के लिए वर खोज लो नहीं तो सिर पीटना बैठ कर। यह आवारा'आनन्द है न ?फिरता रहता है माशपिटा इधर-उधर न काम का न काज का। कहती है उससे बियाह कर दो। छटी का जब दिन-दिन भर बैठी रोटी पोओगी, बर्तन माँजोगी पानी भरोगी। जनम के तो पूरी हुई नहीं प्रेम करेगी। फिर ऊपर से बियाह भी।कोई पूछे इनसे प्रेम का मतलब भी जानती हो?अरे प्रेम जीवन -मरण होता है लाज -शरम होता है दीपक -बाती होता है। यूँ ही बस नाम सुन लिया प्रेम का, करने लगी परेम।

बाबूजी शायद उनकी ओर देखते रहे होंगे नहीं तो उनकी कोई बोली सुनाई देती उसे।

अपने घने होते अपराध-बोध और नासमझी की समझ में दुर्बल होती चेतना को कसकर पकड़ लिया था उसने। फिर हँसते-हँसते दुल्हन बन कर चली गई थी।

एयरपोर्ट से आते-आते मार्ग-भर वह अपने पतिदेव को बताती रही ,यह मेरा कॉलेज है, यह सिनेमा ये कला परिषद और भी सब-कुछ , जो सामने पड़ रहा था।

बस जब आनन्द का घर दिखा था तो सुस्त पड़ गई थी। ठंडी साँस भी निकली थी। चाहकर भी न कह पाई थी कि यह मेरे बचपन के साथी का घर है। इसकी दीवारों के चारों ओर हमने न जाने कितनी आँख-मिचौली खेली है। वह जो सामने बबूल का पेड़ है न उस पर चढ़कर जीवन भर एक साथ इसमे से सचमुच के आम तोड़कर खाने की कसमें भी खाई हैं।

शब्दों की कोताही बरत ली थी। माँ के अनुसार'बँधी गृहस्थी बनाए रखना। फटे दूध की दही कभी न बनाना। झूठ और सच क्या-बस पैबंद लगा रहे वही ठीक है।

बाहर उसे लगा कि मेहमान आने लगे है। उसने मुन्नी को दूध पिलाया। आया को सब प्रकार की हिदायत दी। जल्दी-जल्दी तैयार होकर बाहर आ गई। चौक वाली ताईजी मण्डी वाली बुआ जी आ गई थीं। उन्होंने गले लगा कर सबी को प्यार किया। नाउन चाची ढोलक

लेकर बैठ गई। भाभी सबको शर्बत पानी पूछ रही थी। ताई जी ने हाथ पकड-कर उसे अपने पास बैठा लिया।

उसी ने पूछा, 'ताई जी स्वर्णा दी क्यो नहीं आई आपके साथ?" अरे आती कैसे वह तो छह बजे तक आफिस से ही आती है। आ जाएगी बाद मे। भई बताओ न कोई लडका अपनी ससुराल मे उसके लिए भी।"

ताई जी ने एक ठडी आह भर ली। बेटी के भार से जैसे सुन्न हो गई हों और लवी की माँ के भाग्य पर ईर्ष्या करने लगी हो। बुआजी भी ललचाई दृष्टि से लवी के गले की कुन्दन कठी देखने लगी, अच्छा हुआ तुम प्लेन से आई नहीं तो आजकल इतने कीमती गहने लाने, ले जाने में तो जोखिम ही जोखिम है।'

उसका मन हुआ कह दे कि मुझे इन गहनो से कोई विशेष लगाव-वगाव नही है। है तो बस है। पर हाँ हमारी अम्मा के जी को तो सतोष है ही। उन्होने तो दुनिया -जहान एक कर डा देना चाहती थीं। खोजबीन पूरी हो ही गई थी उनकी।

इन सब चीजो के बिना भी जिया जा सकता है। कही कोहरा कहीं ओस कहीं धूप कही शीत का प्रकोप भी होगा इनसे। उन्होंने अनुमान ही नहीं लगाया था।

तभी भाभी ने आकर उसको उबार लिया। वे सबको बहु के लिए भेजा जाने वाला सामान दिखाने के लिए बुलाने आई। सामान देखकर ताई अम्मा को समझाने लगीं तुमने लाल थैली मे रोली मेंहदी नहीं रखी बहुरानी?

अम्मा बडे उत्साह से चाँदी की डिब्बियाँ खोलकर दिखाने लगीं "लाल थैली कुछ जँच नहीं रही थी भाभीजी, इसी से मैने ये डिब्बियाँ मँगवा ली है। 'हाँ यह तो बहुत अच्छा किया। समधिन भी तो मान ले वह सेर तो हम सवा सेर। क्यो बीबीजी? ताई ने लहककर बुआ जी की ओर अपना मुँह कर लिया।

यूँ ही नहीं मान लिया हमने बेटे की पसद को। बेटी गुणी देखी है तो माल-पानी भी देखा है।' बुआ हँसकर गर्व से कहने लगी थीं।

ये तो जी जग की रीत है। दो घर जब तक बराबरी के न हों तो सबध रो- कलपकर टिकते है।" चाची ने कहा था।

देख लो अब लवी को ही कितने अच्छे घर मे गई है।" छोटी चाची ने उमग मे भरकर कहा था।

भाग्य ही अच्छा था बीबीजी' भाभी जी अपनी बात पर टिकी रहीं भगवान ने लाज रखी।'

चाची हँस पड़ी थीं। लवी वहाँ से न जाने कब खिसक ली थी। भीड़- भड़क्के में आनन्द कहीं होता तो वह चुपके से उसे कह देती, देखो आनन्द, मैं कितनी प्रसन्न हूँ, भरी-पूरी। अब तुम घर बसाओ दुनिया की तरह खुश खुश जियो।

आनन्द तो उसे नहीं मिला हाँ मोहल्ले की पारो और बीरो मिल गईं। दोनों को वह खाने की मेज तक ले गई। अपने हाथ से प्लेट परसी। तीनो घुल घुलकर बातें करने लगी। अगली पिछली सभी यादें आईं।

तू तो बहुत बची लवी'

"तेरे पीछे तो यहाँ आनन्द- काँड बहुत मशहूर हुआ।'

'हुआ ये था कि हजरत न जाने कहाँ से एक लड़की उठा लाए।

तुम्हारी शादी हुई तो नूपा पर डोरे डाले। उसके माँ- बाप ने हड्डी-पसली तुड़वा दी। घर से भाग गए लौटे तो दुकेले ये दुकेले। न जाने कितने झूठों के सहारे उसे सुहागिन बनाने का ढोंग रचा था। बीरो ने कहा।

पारो चमककर बोली ये तो ये हुआ कि वैसे तो वह लड़की मरियल- सी है। माँ-बाप ने जब ना- नुकुर की तो धौंस जमाकर बैठ गई। एक-एक को पुलिस का भय दिखाकर चौकस कर दिया और आराम से अपने बच्चे को जन्म दिया।

उसके सिर में न जाने कैसी धूँ धूँ होने लगी। सारा शरीर बर्फ की तरह जमने लगा। हाथ की प्लेट लगा अब गिरी तब गिरी। तभी उन दोनों ने फुस-फुसाकर एक लड़की की ओर इशारा किया।

'लो, देख लो आनन्द की बहु भी कर दो मुँह- दिखाई' खिल-खिलाकर हँस पड़ी थी दोनों।

पारो ने लवी को टहोका भी दिया।

साटन का सलवार सूट गोटे की अमेरीकन चुनरी ओढ़े बगल मे बहती हुई नाक वाला बच्चा दाबे गँवार-सी इस लड़की को न जाने कब से उसने महरी की बहु सोचा हुआ था।

उसके भीतर भोर से ही प्यास का समुद्र लहरा जिसमें था।

परत मन की

- कमला सिंघवी -

तुम बहुत जल्दी अधीर हो उठते हो दीपक। अधीर तुम शुरू से ही थे पर इस बीमारी के बाद से तो तुम बेहद अधीर हो चले हो। मैं तो आ ही रही थी तुम्हारे लिए दूध का गिलास लेकर। दूध जरा ज्यादा गर्म था इसलिए ठंडा कर रही थी।" सुषमा ने यथाशक्ति अपने स्वर को धीमा करते हुए कहा और दूध का गिलास दीपक को थमा दिया।

मुझे नहीं पीना है दूध। और दीपक ने झटके के साथ दूध का गिलास टेबल पर रख दिया। गिलास का दूध झटका खाकर थोड़ा-सा बाहर छलककर टेबल पर गिर गया एकाध छींटे फर्श पर भी गिर गए।

सुषमा चुप रहना चाहती थी पर उसके मुँह से निकल ही गया--"ओह दीपक तुम्हारी यह पटकने-झटकने की आदत कब जायेगी।"

सुनते ही दीपक क्रोध के मारे चिल्ला उठा-- 'हाँ हाँ अब तुम्हें मेरी आदतें क्यों सहन होने लगीं? कहतीं क्यों नहीं कि मेरी बीमारी के कारण तुम पूरी तरह से तंग आ चुकी हो। अपने भीतर का पूरा जोर लगाकर चीख चीखकर दुनिया को क्यों नहीं सुनातीं कि अब मैं इस बीमार अपाहिज पति नाम के कीड़े के साथ नरक की यातना नहीं भोग सकती मुझे छुटकारा चाहिए ताकि मैं नये सिरे से अपनी जिंदगी शुरू कर सकूँ? बोलो बोलो अपनी असलियत पर आओ चुप क्यों हो?

सुषमा ने कसकर अपने होंठ भींच लिए। ग्लानि अपमान और गुस्से से उसका बदन काँपने लगा पर उसने भरसक कोशिश करके अपने को संयत किया और दूध के गिलास को उठाकर चुपचाप कमरे से बाहर चली गई।

सुषमा के इस तरह बिना बोले चले जाने के बाद भी दीपक कुछ देर तक बड़बड़ाता रहा और फिर अपने बिस्तर पर करवट बदलकर लेट गया।

सुषमा जाकर सीधे अपने कमरे में औंधे मुँह पलँग पर गिर पड़ी और फूट-फूटकर रोने लगी। पाँच-सात मिनट रो लेने पर मन कुछ हल्का हुआ। गुसलखाने में जाकर सुषमा ने मुँह धोया और चेहरे को पोंछकर पाउडर का पफ जरा-सा फेर लिया। साड़ी की सिलवटों को ठीक करती हुई वह किचन की ओर चल दी। अभी किचन में मातामप्रसाद को सामने

निकालकर देता है मीनू बताता है। महरी भी आनेवाली होगी। थोड़ी देर में छोटेलाल भी दीपक को लेने आ जायेगा और दीपक जी तो अभी तक मारे गुस्से के पलंग पर ही मुँह फिराये पड़े होंगे। सुषमा अपने को मानसिक रूप से तैयार करके दीपक के पास जायेगी, उसे मनायेगी और ऑफिस के लिए तैयार करेगी। यह तो उसका रोज का ही काम है। जब से दीपक इस हादसे का शिकार हुआ है, सप्ताह में दो-तीन बार दोनों में खुलकर तू-तू मैं-मैं हो ही जाती है। सुषमा अपनी तरफ से पूरी कोशिश करती है कि वह दीपक के प्रति कटु न होने पाये, पर कभी-कभी जब दीपक की ज्यादती हद से गुजर जाती है तो सुषमा तिलमिलाये बिना नहीं रह पाती। खैर अभी यह सब सोचने और सोचकर उस पर सिर खपाने का सुषमा के पास वक्त नहीं है। दीपक को ऑफिस भेजकर सुषमा फुरसत से आज अपने जीवन की बिखरी, मुड़ी-तुड़ी जिंदगी का ओर-छोर पकड़ने की कोशिश करेगी और आगे सोचना छोड़कर सुषमा सधे कदमों से किचन की ओर बढ़ गयी।

"माताप्रसाद तुम लंच के लिए बैंगन का भरता लौकी की सब्जी [illegible] रायता तैयार कर लो। नाश्ते के लिए चीज-टोस्ट बना दो। आज [illegible] है छोटेलाल आता ही होगा। मैं जरा साहब के कमरे में जा रही हूँ।" और [illegible] जाकर दीपक के पलंग के पास जाकर खड़ी हो गई।

हो जाने का भय है। आपरेशन के सफल हो जाने की सभावना है, पर खतरा उसमें केवल एक है कि यदि उस कमजोर पडती नस को पूरी ही काट देना पडा तो कमर के नीचे का हिस्सा काम करना बद कर देगा यानी दीपक न अपने आप उठ सकेगा, न चल सकेगा। सुनकर घर-परिवार के लोग सकते मे आ गए थे। सुषमा और अम्मा तो मानो काठ ही हो गए। सप्ताह भर तो किसी की समझ मे नही आया कि क्या निर्णय लें, इधर कुआँ तो उधर खाई वाली स्थिति थी। यदि आपरेशन नहीं करवाते है तो शर्तिया लकवा जल्दी ही हो जाएगा इसमे दो राय नहीं थी। आपरेशन यदि सफल न हुआ तो भी जब कमर के नीचे का हिस्सा काम करना बद कर देगा तो वह भी तो एक प्रकार का लकवा ही होगा। परिवार के कुछ लोग इष्ट मित्र आपरेशन के पक्ष मे थे कुछ बिल्कुल विपक्ष में। कुछ लोगो का कहना था भगवान पर भरोसा करके आपरेशन जरूर करवा लेना चाहिए। शायद आपरेशन सफल हो जाये, कम-से-कम उसके सफल होने की गुजाइश तो है ही। बिना आपरेशन के तो लकवा न होने की गुजाइश ही नहीं है। अत मे सुषमा, अम्मा सभी इष्ट मित्रो की एव डाक्टरो की राय से आपरेशन करवाने का ही निर्णय लिया गया। जो सुनता वही सुषमा के प्रति सहानुभूति जताता-बेचारी बहू के भाग्य को देखो। शादी को पाँच साल हुए है न कोई बाल-बच्चा और ऊपर से भगवान ने यह कहर और ढा दिया। कोई कहता-माँ जी से पूछो कि अपने इकलौते बेटे की यह दशा देखकर उनके दिल पर क्या गुजरती होगी।

जिसने जो कहा, अम्मा ने वही किया। पूजा-पाठ करवाये, पीरजी के गई साईबाबा की मनौती मानी पर दीपक को ठीक न होना था, सो नहीं हुआ। नस इतनी सड चुकी थी कि डाक्टरो को काटनी पडी। दीपक उस दिन के बाद कभी चल नहीं पाया खडा नही हो पाया। आपरेशन के दस-बारह साल तक तो वह बैठ भी नहीं सकता है। साल भर से उसने व्हील चेयर में बैठकर सप्ताह मे एक बार, हर सोमवार को ऑफिस जाना शुरू किया है। छोटेलाल सोमवार को दस बजे उसे ऑफिस ले जाता है। बाकी दिन दीपक घर मे ही ऑफिस का काम करता है। खाने-पीने और आराम से रहने की कोई तकलीफ नहीं है पर जीवन भर की इस तकलीफ को झेलना दूसरे के सहारे पर जीना कितनी बडी तकलीफ है दीपक इस यातना को दो मिनट के लिए भी नही भूल पाता। इसीलिए दिन प्रतिदिन उसका स्वभाव चिडचिडा और रूखा होता चला जा रहा है। बेवजह ही वह कभी-कभी सुषमा पर बेहद नाराज हो जाता है छोटी-छोटी बातो के लिए उसे परेशान कर डालता है। पर वह करे भी तो क्या। और किस पर नाराज हो? अम्मा भी तो नहीं रहीं। वही जो उसके आपरेशन की सफल न होने की बात उन्होंने सुनी तब जो पलँग पकडा तो पलँग से ही क्या दुनिया से ही

उठ गई। पर अभी तो न जाने कितने साल दीपक इसी तरह बिताने है। अभी इसकी उम्र ही क्या है। इस जुलाई में ही तो बयालीस साल का हुआ है। सुषमा भी चालीस साल की हो गई। बेचारी ने उसके साथ शादी करके जिंदगी का कौन-सा सुख भोगा। उन्नीस साल की थी जब उसकी शादी हुई और शादी के पाँच साल बाद ही यह हादसा हो गया। आज पद्रह साल से तो वह इस हादसे को ही ओढ-पहन रही है और शेव करते-करते ही दीपक के मुँह से आह-सी निकल गई।

समय पर दीपक को आफिस भेजकर महरी और माताप्रसाद को जरूरी हिदायतें देकर सुषमा अपने कमरे में आरामकुर्सी पर आँखे मूँदकर अधलेटी-सी बैठ गई। आज उसका मन कुछ ज्यादा ही बोझिल हो चला था आज दीपक ने उसकी दुखती रग पर हाथ रख दिया था। दीपक का यह कहना कि सुषमा को उससे छुटकारा चाहिए ताकि वह अपनी नई जिंदगी की शुरूआत कर सके सुषमा को अदर तक साल गया था। प्राय रोज ही दीपक उसे मौके-बेमौके जली-कटी सुनाता रहा है पर इतने नीचे स्तर पर वह आज तक नहीं उतरा। पता नहीं उसे क्या हो गया जो दूध लाने में जरा-सी देर हो जाने पर ही आज वह बौखला उठा और इतनी कडी बात कह दी। ऐसी बात कहने से पहले दीपक ने एक बार भी नहीं सोचा कि अब चालीस साल की उम्र में सुषमा जिंदगी की क्या नई शुरूआत करेगी?यदि उसे अपना नया जीवन ही शुरू करना होता तो आज से पद्रह साल पहले ही कर सकती थी। तब तो वह केवल चौबीस-पच्चीस साल की ही थी। यह नहीं कि उसने कभी अपने अँधेरे भविष्य के बारे मे सोचा ही नहीं हो, पर दीपक को छोडकर अपना अलग जीवन जीने की भावना को उसने कभी अपने मन में नहीं पनपने दिया। इस हादसे के दो-तीन वर्ष बाद एक दिन उसकी बूढी अम्मा ने उससे झिझकते हुए कहा था-सुषमा बेटी तूने अपने बारे में क्या सोचा है?तेरी कच्ची उम्र और रेगिस्तान की तरह रूखी-सूखी तेरी पहाड-सी जिंदगी तू जी कैसे सकेगी मेरी बच्ची। तेरी मर्जी हो तो हम तुझे अपने साथ ले जाने के बारे मे दीपक से बात करे। उसे तो अब वैसे भी अपाहिजों की जिंदगी जीना है। उसके चाचा-ताऊ उसकी सार-सँभाल अपने-आप कर लेंगे पर तेरी सार-सँभाल कौन करेगा? अगर तू साथ चली चले तो सोच-समझकर फिर तलाक-वलाक के बारे में बातचीत की जा सकती है। हम और क्या कहे तू खुद ही समझदार है। लेकिन सुषमा का निर्णय दूसरा था। वह दीपक को नही छोडगी कभी नहीं। दीपक के साथ उसने अब तक के अपने सबसे अच्छे पाँच साल बिताये है और उन पाँच सालों में उसने उतना सब कुछ पाया है जितना साधारणतया लोग पचास साल में नहीं पाते। दीपक ने तब उसे अपना सपूर्ण प्रेम दिया था और सुषमा ने अपना

सपूर्ण समर्पण। अब वह दीपक के उस पूरे प्रेम और अपने उस पूरे समर्पण के टुकडे कैसे कर डाले? यह तो उसके अपने टुकडे कर डालने जैसी स्थिति होगी। टुकडों मे काटकर आदमी फिर भी शायद जी सकता है पर टुकडो मे बँटकर जीना, उस जीने से भी कई गुना बदतर है। सुषमा बँटकर नही जीना चाहती। उससे तो उसकी उन पाँच सालों की जमा पूँजी भी चुक जायेगी और वह पूरी की पूरी रीत जायेगी। यह सच है कि इन पिछले पद्रह सालो में उसने कई बार आत्महत्या करने या मर जाने की तमन्ना की है, कई बार दीपक और वह आपस मे झगडे है कितनी ही बार अपना अधकारमय भविष्य के भय से घबराकर उसने दीवार का सहारा लिया है, कई बार वह दीपक के बेवजह के गुस्से से कुपित होकर, उसे छोडकर चले जाने के लिए भी उद्यत हुई है पर इन सोचो के बावजूद कभी उसके जेहन मे यह नहीं आया कि दीपक को इसलिए छोड दिया जाये कि सुषमा अपनी शारीरिक, मानसिक या भावनात्मक जिदगी की नई शुरूआत कर सके। दीपक पर उसे तरस आया है, सहानुभूति हुई है क्रोध भी आया है पर अपने लिए उसे किसी परपुरुष की कामना कभी नहीं हुई। उसने हमेशा ही यह सोचा है कि ऐसा हादसा उसके साथ भी तो हो सकता था। दुर्भाग्यवश वह दीपक के साथ हुआ, पर ऐसी दुर्घटनाएँ विवाह को बिखेर नहीं सकतीं दोस्ती को खत्म नहीं कर सकतीं रिश्तो को कच्चे बखिये की तरह उधेड नहीं सकती, यदि प्रेम और प्यार की अतरंगता अपना पूरी गहराई से वहाँ मौजूद हो। वह आज भी दीपक को जी-जान से प्यार करती है जितना कि शादी के पाँच सालों तक करती थी, जबकि वह एक स्वस्थ पुरुष था। दीपक भी उसे बेहद प्यार करता था और उसका मन कहता है, आज भी दीपक उससे उतना ही प्यार करता है। परिस्थितियाँ बदली है उनका प्यार नहीं। परिस्थितियो ने दीपक को चिडचिडा बना दिया है। वह भी तो कई बार कितनी चिडचिडी हो जाती है। न कहीं आना, न कहीं जाना बस दिन भर दीपक की देखभाल के लिए घर पर बद रहो माना घर घर न हुआ, जेलखाना हो गया। अभी दीपक को दूध चाहिए अभी दीपक कपडों के लिए आवाज देगा अभी शेव का सामान माँगेगा और दीपक को इन्हीं सब कामों को करते हुए सुषमा की साँस किसी दिन बद हो जायेगी। यह सोचकर वह भी तो कितनी बार, कितनी बेरूखी से दीपक से पेश आई है। स्थिति और परिस्थिति के बदलने पर या बिगडने से प्रेम की शक्ल बदशक्ल हो सकती है पर प्रेम तो अपनी जगह कायम ही रहता है। यदि ऐसा नही होता तो क्या उसका मन आज भी यह गवाही देता कि वह दीपक को पूरा प्यार करती है और दीपक भी उसे पूरा प्यार करता है।

मैंने आज से दो-तीन साल पहले सुषमा से मिलने पर एक बार यूँ ही पूछा था "सुमी

अब भी समय है तू अपने लिए कोई निर्णय ले ले। ऐसी परिस्थितयों मे सबध तोडना कोई गुनाह नही है। आखिर तेरा अपने प्रति भी तो कोई कर्तव्य है। कब तक तू अपने इस निर्णय को नही बदलेगी बोल? सुमी ने मेरी हथेली अपनी हथेली के बीच मे लेते हुए धीरे से कहा था –"तब तक कुमु, जब तक दीपक के प्रति मेरे मन में रागात्मक सबध रहेगा, तब तक में उसे नहीं छोड सकती। कुमु, तू समझती क्यो नहीं कि दीपक से मै आज भी बहुत प्यार करती हूँ। उतना अधिक प्यार किए बिना क्या कोई पूरी औरत, किसी अधूरे पुरूष के साथ, अपनी जिदगी के उन सुदर सालो को बिता सकती है जो उसके लिए बहुत कुछ मायने रखते है?किसी मेरी तरह प्रेम करने वाले से पूछ , क्या छोडकर चला जाना इतना आसान होता है? हम लडते है झगडते है खीजते है, एक-दूसरे से तने हुए भी रहते है और यह सब देख-सुनकर तुम लोग समझते हो कि सबधों की सीमा अब टूटने को है। पर मेरे अदर का रागात्मक लगाव चूँकि तुम लोग देख नहीं पाते, इसलिए समझ भी नहीं सकते। सबधों का विच्छेद तो उस कगार पर होता है जहाँ एक-दूसरे के प्रति अनुराग खत्म हो जाये। ऊपरी सब कुछ टूटने पर भी, भीतर का राग सुर मे बजता रहे तो जीवन भर बेसुरा नहीं होता बीमार और अपाहिज व्यक्ति के साथ भी नहीं। दीपक के साथ रहने की कोई जोर-जबरदस्ती या दबाव नही है न मै लोक-लाज के भय से ही उसके साथ रह रही हूँ। मै अठारहवीं या उन्नसवीं सदी की पत्नी तो हूँ नहीं कि लोक-लाज के भय से मुँह न खोल सकूँ या कि घुट-घुटकर अपने को तबाह कर लूँ। मै पढी-लिखी हूँ, मुझमें विचार-वेदना है सोचने की क्षमता है, अपने मन की करने की स्वतत्रता है, अपने पैरो पर खडे होने की हिम्मत है पर मन के अतर के प्रेम राग और अनुराग को लिए इन चीजो की आवश्यकता नहीं होती। प्रश्न मेरे अतरमन का है देह से और सुविधा से परे जो प्रेम की प्रतीति होती है उस प्रतीति का है प्रश्न मनुष्यता का भी है। अब तू ही बोल कुमु, अपना मन के बुने हुए तानो-बानों में आकँठ उलझी मै, मन के तारों को अपने हाथों से तोडकर मै कहाँ जाऊँ क्यो जाऊँ?मेरा निर्णय वही है जो तब था, वही रहेगा भी। '

नारी-मन की परत-दर-परत को परखते रहने के कई अवसर मेरी जिदगी में आये है आगे भी आयेगे पर भीतर के राग की ऐसी मधुर तान मैने आज तक जीवन के किसी तानपूरे पर किसी भी गायक के मुँह से नहीं सुनी है। आज जब खेल-खेल में ही पति-पत्नी बदलने का चलन जोरों से चल पडा है, या कि भोजन के घी की कौन-सी परत खुलकर, उसके बधन को दीपक के साथ बाँध-बाँध देती जोड-जोड देती मै आज तक नहीं समझ पाई। गाँव-घर जाने पर जब भी माँ कहतीं-कुमु बेटा चलकर सती चौरा पर माथा टेक

आ'तो मेरा उत्तर होता था--माँ मैं तो सतीप्रथा के सख्त खिलाफ हूँ, मैं नहीं जाती किसी सती चौरा-वौरा पर। आज भी मैं सती-प्रथा के उतनी ही खिलाफ हूँ जितनी पहले थी। हाँ पता नहीं क्यो आज भी जब-जब मैं सुषमा से मिलती हूँ, तो उसको पैरों पर माथा टेकने का मन करता है।



कब्र-गाथा

- सिम्मी हर्षिता -

एक प्रश्न के चार कोनों मे चार प्राणी खडे है और उससे अपनी-अपनी तरह से जूझ रहे है।

श्रवणकुमार के पिता कभी फौज मे कर्नल थे। अवकाश प्राप्ति के बाद उन्होंने किसी कम्पनी में नौकरी शुरू कर दी है। अपने को सदैव घर से बाहर व्यस्त रखते है। सुबह नौ बजे तक अपने काम पर चले जाते है और रात घिरने से पहले लौटना नहीं चाहते ताकि घर में छायी अमावस अधिक गहरी न लगे। आज भी वे किसी फ्रन्ट पर है पर अतर इतना ही भर है कि कभी वे योद्धा की तरह सामना करते थे और आज उससे बचकर उसका सामना कर रहे है। वे रतिका के सामने पडना नहीं चाहते।

श्रवणकुमार बैंक में मैनेजर है। साढे नौ तक वह भी चले जाते है मूल और सूद के सरकारी धंधे में। पीछे इस मकान मे रह जाती है दो औरते। परम्परा ने पहली औरत को नाम दिया है श्रवणकुमार की माँ और दूसरी औरत को पहचान दी है—श्रवण कुमार की पत्नी।

श्रवणकुमार की पहली पत्नी थी उनके बराबर के स्तर की -सुदर धनी-मानी घर की डिग्री कालेज मे व्याख्याता। पर बुरा हो इस दुनिया के सारे गोरखधधों की जड शादी का जो कभी'हौवा'या फिर शिला बना देती है और कभी आदम को रातो-रात कहीं बहुत छोटा और कातर सिद्ध कर देती है। वे उसके सामने सप्ताह भर बीत जाने पर भी एक छत्र की सी स्थिति से आगे नहीं बढ पाए। एक भयावह प्रश्न-चिन्ह से घिरे उस विवाह की आँख खुलते ही मृत्यु हो गई थी। पत्नी वापिसी खत की तरह आते ही लौट गई। अतत मौन हस्ताक्षरी तलाक' ने ही उस पाला मारे विवाह का शेष दाह-सस्कार कर दिया था।

पर फिर भी अपने प्रति एक भ्रम श्रवणकुमार के मन मे कहीं बचा रह गया था। इस बार जयमाला के लिए पत्नी को बहुत सोच-समझकर चुना गया है। जो उनकी मानसिकता और सामर्थ्य की परिभाषा के अनुसार भली और घरेलू हो—जो घर की दीवारो मे फिट हो सके—जिसे पालतू बनाया जा सके-जिसके पास न माँगों की सूची हो-न अह का परमाणु हो-जो दूर-पास की रिश्तेदार हो और विवाह उस पर उपकार हो।

और उधर जब आशा के विपरीत रतिका की साधारण घरेलू स्थिति का रिश्ता इस घर की विशिष्टता के साथ तय हो गया था तो उसके मन के आँगन में कितनी ही

सुनहरी-झिलमिलाती कामनाओं के फूल खिल उठे थे-कितने ही छेड़छाड़ भरे गीतो के स्वर दिन रात गूँजते रहते। उसे एक वरदान-सी सात्वना मिली थी कि अतत यह विवाह उसे अपने घर की उदासी और ठहराव से मुक्त कर देगा। वह उन्मुक्त जी सकेगी अब। पाई हुई सूचना के आधार पर उसे दु ख होने लगा था कि कैसे इस प्यारे से पुरूष को एक चरित्रहीन औरत ने तलाक की आग मे झोंक डाला केवल अपने किसी पूर्व प्रेमी से विवाह रचाने के लिए! वह अपने चरित्र को भली प्रकार से ताले मे बद कर साथ लाई थी अपने प्रिय को असीम प्यार देने के प्रण के साथ ताकि वह उस दु ख-अपमान को भूल जाए। किसी की प्रेमिका बनकर जीने का अपना सपना वह इसी रूप में सच करेगी।

इस घर की चारो बेटियों की शादी हो चुकी है। इस शहर के आसपास ही रहती है। अकसर किसी-न-किसी का आना-जाना लगा ही रहता है अपने पति-बच्चों के साथ जिससे अच्छी-खासी रौनक हो जाती है और ठहरा हुआ घर भागने-दौड़ने लगता है।

चारों बहने क्योकि जुड़वाँ-जुड़वाँ है इसलिए दो-दो बहनो का आना सदैव सग-सग होता है। जन्म शादी गर्भपात और फिर बच्चे-हर मामले में उन्होंने एक दूसरे के साथ जुड़वाँपन निभाया है। यह घर उनकी बचकानी यादो और बहनापे की मिलन-स्थली है। आगतुक देवी-देवताओं के आतिथ्य की सारी पुण्य-वाटिका रतिका के ही हिस्से मे आती है। पर इस कर्त्तव्य-श्रृखला मे भी घर आए देवताओं से किसी सहज बातचीत और उनके सामने उठने-बैठने की बेअदबी पर बदिश होती है। नख शिख के चुबक को आँचल से ढके दृष्टि-नौका को पलकों के पाल मे छिपाए पर काम पूरी तटस्थता और निरपेक्ष अनुशासन मे करना। होकर भी न होने की ईश्वरीय योग्यता सिद्ध करना।

श्रवणकुमार की बहने अपने बच्चों को दूध पिलाते हुए कभी ताना और कभी छेड़छाड़ भरे स्वर मे कहती है- रतिका बहुत आराम कर चुकी हो!बहुत ऐश हो चुकी!अब तो दो से तीन होने के बारे मे कुछ करो!

मै क्या कर सकती हूँ?अपने भैया से कहो न।

उत्तर सुनकर और पारदर्शी चेहरा देखकर श्रवणकुमार की शक्तिस्वरूपा माँ रसोई के एकात मे शब्दों के कोडो मे उसका कोर्टमार्शल करती है। वह सीखती रहती है अशाति मे भी शाति से जीने के लिए पर बात का मौन उत्तर देना-हर स्थिति में अतिम शब्द सामनेवाले पक्ष को ही कहना है यह याद रखना। अन्यथा मुख खोलने का अर्थ है'कई दिनों के लिए

इदद्दे को स्तर पर और चाहे कुछ न बदले इंसान के हाथों पर ऋतुओं का राग है उसका ही दखल चलता है। यह अच्छा ही है कि मौसम को पाले मनुष्य के हाथों से बाहर है। अँधेरे में मुख छिपाए आई सुबह से लेकर तीसरे पहर तक की बंदिनी दिनचर्या से थोड़ी छुट्टी पाकर वह बुनाई के साथ बाहर बरामदे में जाड़ों की वापिस लौटती कमज़ोर-सी धूप के सुख में आकर बैठ जाती है। ऊन के गोले की तरह गुमसुम पलकों को नीचे गिरे रहने की ऐसी आदत हो गई कि उनकी बोझिलता दर्द से उठाए नहीं बनती।

श्रवणकुमार की दूरदर्शी माँ अपने बेटे की हितचिंता में, कपूर में रखी मिर्च की तरह सुरक्षा से पीछे-पीछे चली आती हैं। उस कच्चे-कोरे-से मिट्टी घड़े को किसी काम-बेकाम की ठोकर से बचाए रखने के लिए घर-गृहस्थी की मान-मर्यादा को बनाए रखने के लिए शंकित सावधानी से टोकती है—"मत बैठा करो यहाँ, सामने के मैदान में लड़के खेलते रहते हैं।

'वे तो लड़के हैं।' उसके अंदर एक उत्तर बुलबुले की तरह बेआवाज़ उभरता है। माँ जैसे उस मौन प्रतिक्रिया को सूँघ लेती है इसलिए अपनी बात को अधिक तर्कसंगत बनाते हुए कहती हैं—"सड़क पर से लोगों का आना-जाना भी लगा रहता है। भले घर की बहू का यूँ बैठना।

एक गूँगा प्रश्न रुआँसे मुख में तिनके की तरह दबाए [illegible] अंदर चला जाता और मन के तालाब में डूब जाता—सड़क इस घर से घर की घेरेबंदी और बरामदे से इतनी दूरी पर है कि कुर्सी पर बैठने पर उसकी आवाज़ भी दिखाई नहीं देती। यह आप बैठेंगी तो उनके महिमाशाली भलेपन पर आँच नहीं आती। [illegible] पड़ोसी बहू-बेटियाँ हमउम्र सबकी [illegible] धूप में बैठती हैं तो उनके नहीं [illegible]। तब मेरे ही अभागे भलेपन में ऐसा क्या है जो [illegible] हो जाएगा?

अपने प्रश्न का जो उत्तर उसके अंदर उभरता है [illegible] मुख पर फेंक देना चाहती है। चाहती तो वह बहुत कुछ है, पर वह [illegible] ही पाती है कि निढाल-सी कंबल लपेटकर पड़ी रहती है [illegible] देखती है— "चलो उठो। अधिक [illegible] रात किसलिए बनी है?

रात की कालिमा उसके अंदर [illegible] लगती है।

कभी मेज पर सजे फलो का सवाल उठ खड़ा होता है–"एक संतरा कम क्यो है? दुकानदार ने ही कम दिया था या तुमने ? इतनी अधिक खाकर और हट्टी-कट्टी होकर तुझे भला क्या करना है? माँ की चौकसी कोई-न-कोई नई करवट बदल लेती है।

प्रश्न सुनकर श्वास अवरुद्ध हो जाते है और एक निर्णय उनमें घुटने लगता है–ऐसे नंगे सवालों-तानों का सामना करने से अच्छा है कि हर तरह की भूख को मार दफना दिया जाए। पर आखिर किस-किस इच्छा की हत्या करूँ? कभी कुछ मनचाहा खाने की इच्छा ? पहनने की इच्छा? इन दीवारों से बाहर घूमने की इच्छा? अपने प्रिय के साथ सहज ढंग से जीने की इच्छा? मेरी हर कामना कितनी अपमानित और विकृत होकर जी रही है। अदर-ही-अदर कितना भटकाती है! कैसे लालसा मन की खोह मे चुपचाप सरसराती और सिर पटकती रहती है! वह देखने लगती है अपनी तृषित कामनाओं का अभिसार और फिर सुनती है उनका अरण्य रोदन।

उसके विचारों की श्रृंखला को माँ का आक्षेप तोड़ देता है– 'कहीं तू हमारे घर की बुराई-चुगली तो नहीं करती रहती पास-पड़ोस में? आज चदा फिर तुझे पूछ रही थी–रतिका नहीं दिखाई दी कई दिनों से? ठीक तो है न? बीमार तो नहीं कहीं? क्यो ? क्या बीमारी है भला तुझे जो लोग राह चलते पूछने लगते है मुझसे?

मै क्यो करूँगी चुगली या बुराई?

तो फिर पड़ोसिने तेरी ही हालचाल क्यो पूछती रहती है मुझ से आते-जाते? और किसी का क्यो नहीं पूछती? तुझसे ही इन्हे इतनी हमदर्दी क्यो है?

उत्तर देने के बदले वह मन के सागर में डूब जाती है–कह दूँगी कि वे भी मेरा हालचाल न पूछा करें। इस इज्जतदार घर की विसगत स्थितियों में सगत बाते हो कैसे सकती है? बंजर जमीन मे झाड़-झखाड़ ही तो उगेंगे और रेत में केवल रेत ही तो जन्म लेगी। एक बार जब कोई रेगिस्तान जन्म लेता है तो कैसे वह कण-कण बढ़ने-फैलने लगता है और अपने आसपास की धरती को भी रेत बनाने लगता है! न जाने इस मरु का अत कहाँ है?

पड़ोस में चदा और मधु से रतिका का अच्छा परिचय है। कभी आमना-सामना हो जाने पर दो-चार बातें नन्हीं गेंद की तरह उछलकर घर की दीवारों के आर-पार चली ही जाती है माँ के न चाहने पर भी। उसके प्रति चदा का स्नेहभाव कह देता है–"तुम्हें देखकर ऐसा लगता है जैसे कोई नया पक्षी हो–जिस पर अभी पूरे रोयें न आए हों–जिसने अभी उड़ना न सीखा हो।

और फिर उसके अतस के घुप अँधेरे मे उतरने का यत्न करते हुए धीमे से पूछती है—"तुम क्यो इतनी पीली और बुझी-सी दिखाई देती हो?तबीयत तो ठीक रहती है न?"

वह इन प्रश्न-द्वारो के आगे चुप्पी की चट्टान रख देती है—मै क्या बताऊँ कि मेरा अधूरापन क्या है?कि मेरा रोग क्या है?कि मुझे अपने आपसे ही वितृष्णा क्यो होती जा रही है?'

फिर एकाएक वह अनखा जाती है—' क्यो ?मुझे क्या होना है?ठीक ही तो हूँ!

चदा विस्मित रह जाती है कि रतिका मे यह कटुता क्यो ?मेरे सीधे-सरल सवाल का ऐसा टेढा उत्तर क्यो ? क्यो कुछ लोगों को खिझाता है उनसे उनका हालचाल पूछा जाना?तभी रतिका अपने स्वभाव में लौटी और मनाते हुए विवश -सी बोली— चदा, नाराज हो गई हो?बुरा लगा न मेरा ऐसा अटपटाना?क्या करूँ?कभी मन बस यूँ ही बेबस, पागल कटखना-सा हो जाता है।

इससे पहले कि वह कोई उत्तर दे अपने बच्चे को रोने की आवाज सुनकर चदा के कदम घर के अदर की ओर दौड गए। रतिका शून्य मे ताकती रह गई खडी उस अपने वीराने में--कही कोई नहीं जो इस तरह विकल होकर पुकारे कि वह उस पुकार पर सुध-बुध भूलकर बिछ-बिखर जाए। तभी पीछे से मधु ने प्यार से उसे पुकारा-- 'कबूतरी कैसी हो? '

यह सबोधन सुनते ही उसका अतस हर बार अकालग्रस्त धरती की तरह दरक जाता है और चारों ओर धूल तथा धूप की तीखी अनुगूँज सुनाई देने लगती है-'मेरे सिर स्वाह।कबूतरी जैसी खुशनसीब होती है मै वैसी कहाँ हूँ ? पीछे वाले मकान के छत की मुँडेर पर देखती हूँ दिन भर स्लेटी कबूतरों का जोडा चोंच भिडाते और एक दूसरे की भावभरी परिक्रमा करते हुए। यह मेरा घर नहीं मेरी कब्र है जिसमे मै रोज दफ्न होती हूँ। जीवन की दुहागरात्रि ने मेरे स्वप्निल घर के सारे शीशे चकनाचूर कर डाले है। मेरा हर आज कल के हाथों गिरवी होता चला जा रहा है। इससे पहले की शब्द खारा जल बनकर बाहर झाँके उसने हँसी की एक फाँक उस दयार पर रखकर बताया-- मै ठीक हूँ। तुम सुनाओ कैसी हो?

मधु अपने घर का गेट पार कर बरामदे में उसके पास आ गई प्रश्न का उत्तर देने को। इधर-उधर की बातो के बीच अपनी आदत के अनुसार वह अपने प्रति एकाएक गहरी चिंता से रतिका के कधे पर अपना बाजू टेककर पूछ बैठी--' मेरा चेहरा कैसा लग रहा है आज?

उसकी चिंता का उत्तर चिंता से देते हुए रतिका किसी वैद्य की-सी गभीरता से

बोली—"लगता है आज तुम सोई नहीं। आँखें-बोझिल सी लग रहीं हैं। जैसे कोई नशा पिया हो।क्या तबीयत ठीक नहीं है?

वह नशा तो हम रोज ही पीते है।" वह एकाएक सकुचाई गुलाबी मुस्कान से बोली और सिर रतिका के कंधे पर धर दिया राग से। आशा के बिल्कुल विपरीत उत्तर पाकर रतिका चौंक उठी और तन उसके हाथों से छूटकर पारदर्शी शब्दो के पार बदहवास-सा दौड़ता चला गया। मधु के चेहरे का गुलाबीपन उसके चेहरे पर आकर ललक से ठहर गया। उसका स्वप्न पुरूष उसके निकट उसी वेग से आ खड़ा हुआ। उन कोमल पलों की रक्षा के लिए ही सूर्य ने अपनी जगह चन्द्रमा को दे दी। तभी मधु को मधुर'बनाते हुए उसके पति ने पुकारा तो रतिका स्वप्निल गति से घर के अंदर लौट आई।

मधु के उन नवब्याहे शब्दो के ताप मे विद्युत का जो वेग था उसने मधुशाला के बंद द्वार खोल दिए थे। मधुपात्र को हिलाकर उसके आच्छादन को एकाएक हटा दिया था और अंदर बंद माधवी फेनिल रूप से पूरी उठान के साथ बिखरने लगी थी। तभी रसोईघर ने उसे पुकारा तो वह बेमन से वहाँ चली आई।

आग पर रखा दूध अपने पात्र के ओंठो को जैसे छू पाने के लिए ही सीमांत से नीचे गिरने की परवाह किए बिना उफन आया था और वह रसोई में गुमसुम खड़ी देख रही थी उसकी उफान और उसका बिखरना और सुन रही थी श्रवणकुमार की प्रिय माँ का चीखना-चिल्लाना कि दूध क्यो अशुभ कर रही है?

ज्वालामुखी के अंदर लावा बहता-झनझनाता रहा। लपटें सूने हृदय पर सिर पटकती बिलखती रहीं।

जब सारा घर अँधेरे में डूब गया तो वह थकियाई-सा अपनी कब्र मे आ गई। उसकी लोहित पिघल न को समेटकर किसी साँचे मे ढालनेवाला वहाँ कोई नहीं था। कब्र के स्वामी पर एक घृणित मृगतृषा दृष्टि डाली और तकिए पर कढ़े मधुर स्वप्न' के नीचे रखी गोलियों में बंद नींद की मूर्छा भरी यातना अपने ओठों से लगा ली। ज्वार को भाटे ने अपने अंदर निगल लिया। जिंदगी एक बार फिर मरकर सो गई।

मुँह अँधेरे आँख खुली तो टूटते हुए देखा—तन का तर्पण करने की बेला है।

और फिर शुरू होता है पेट की भूख से जुड़ा एक और दिन। अखबार के शब्दों में खोये बैठे पुरूष को बिस्तर पर चाय देना। उस दिन पहनेवाले उसके कपड़ो की देखभाल करना

हिदायतों के तहखाने में बद कर लेना और एक के बाद दूसरे काम की जजीर से अपने तन-मन को बाँधते चले जाना। यदि सारा दिन कोल्हू नहीं चलेगा तो गृहस्वामिनी को सतोष सुरक्षा और आश्वस्ति का तेल कैसे मिल सकेगा?

बेटे के प्रति युगों पुरानी ममता मगलवारी सत्सगी औरतो मे बिना पैरों के झूठ मे ढिढोरे के पाव बाँधते हुए सुनाकर कहती है– 'आज रतिका को डाक्टर के पास ले गई थी। उसने इसमें कुछ कमी बताई है। शायद आपरेशन करवाना पडे।हाय! मेरा बेटा कैसा अभागा है! पहली औरत चरित्रहीन निकली और दूसरी बाँझ' श्रोताओं को अपनी सहानुभूति से उसने अपने पल्लू की दोनों गाठों को और बडा कर लिया और सतोष से सामाजिक प्रतिष्ठा का लबादा ओढे घर में प्रवेश किया।

रतिका को अपनी इस तथाकथित डाक्टरी जाँच कमी की और आपरेशन की सूचना चदा से मिलती है और वह सुनकर रूआँसी-सी हँस देती है– 'बहना!कमी औरत मे ही होनी चाहिए–औरत मे ही होनी शोभा देती है।घरो का कूडा गूरे पर ही जँचता है!"

चदा सहानुभूति और जिज्ञासावश उससे इस सभावित आपरेशन के बारे मे पूछती है और फिर तरह-तरह के सुझाव देती है कि कौन-सी डाक्टर अच्छी रहेगी–कि इसमे घबराने की कोई बात नहीं–कि मामूली-सा आपरेशन होता है–कि मेरी भाभी ने भी करवाया था और अब दो बच्चो की माँ है–कि कई बार देर हो ही जाती है–कि तुम चिता न करो!

उसने ध्यान-बेध्यान-से सुनकर हाँ-हूँ कर दी और फिर सोच के भँवर मे डूबते-उतराते हुए मुर्छित से शब्द चदा तक पहुँचने लगे–' चिता कैसे न हो चदा? वह तो होती ही है न चाहने पर भी। धरती से फसल पाने के लिए उसे जोतना तो पडेगा बीज तो डालना पडेगा। पर मेरी इस अभागी धरती को कुछ मिलनेवाला नही। नारीत्व तथा मातृत्व की ऋतु यूँ ही लौट जाएगी खाली हाथ। विकास-सुख का कोई रूप मेरे हिस्से मे नहीं आ सकता। मै वर्णमाला का वह अक्षर हूँ जिससे कोई शब्द नहीं बनता। मै वह झील हूँ जिस पर सदा हिमखड ठहरे रहते हैं जिसमें कभी कोई कमल नहीं खिल सकता। मै एक पत्नी नही सामाजिक प्रतिष्ठा के शो- केस में रखा पत्नी का ढाँचा मात्र हूँ। मै केवल तलाक के धब्बे को धोने का साधन हूँ। युगो बाद कभी किसी पल विवाहित जीवन का एक चिरप्रतीक्षित अर्थ मेरी ओर उत्साह से बढाता है और फिर अगले ही पल हवा निकले गुब्बारे की तरह निस्पद हो जाता है। आरोह से पहले ही अवरोह की हताश स्थिति से मुख छिपाने के लिए पुरूष का क्रूर कुंठ

की अंधी खाई मे जा गिरना। मेरा तन-मन उन घावों से छलनी हो चुका है। प्यास लगी–मिलकर पी लिया और भूल गये। पर न पी पाने की आकुलता एक पल को भी विस्मृत नहीं होती। कामलता के वन में दिन रात भटकना और ख्वाब में भी छिछडे देखना। मेरा यह जीवन मुँह बाये बस इसी सीढी पर अटककर रह गया है—न नीचे उतर पाना–न आगे आ पाना। चारों ओर साय-साय करता अनंत रेगिस्तान-न कोई भविष्य—न कोई वर्तमान।

"यह सब तुम क्या कह रही हो, रतिका?

'क्या मैने कुछ कहा ? कुछ तो नहीं। अदर चलूँ। सत्संगियो के लौटने का समय होने को है। अदर शायद फोन की घटी बज रही है।" शयनकक्ष की खिड़की आँधी के तीखे धक्के से एकाएक धड़ाम से खुल जाने और चदा को अदर का दलदली अँधेरा दीख जाने से घबराकर वह दीवारों के अदर लौट आयी और तकिए के मधुर स्वप्न'पर बोझिल सोच रख दी—

एक रिश्ते की गाँठ मे बाँधकर जब से मुझे यहाँ लाया गया है बस एक शायद' मेरी धड़कनो मे बद है या मै ही इस शायद'चूहेदानी में कैद हूँ। प्राण फड़फड़ाते है, पर अपने में हवा समेटकर उसके बद द्वार को धक्का नहीं दे पाते। दो टूक निर्णय ले सकने के लिए छूट चुके माँ-बाप के पास उनकी याद के बहाने से बार-बार जाती हूँ और फिर चुपचाप विवाहशुदा आशीर्वाद लेकर श्रवणकुमार के पीछे-पीछे वापिस लौट आती हूँ 'शायद' की रस्सी से बँधी हुई। श्रवणकुमार की चौकसी दो दिन से अधिक मुझे वहाँ रूकने नहीं देती और न एक पल के लिए अकेला छोडती है। यदि वे नहीं सामने होते तो उनकी पुकार मेरा पीछा करती रहती है और माँ निहाल हो जाती है इस प्यार पर। शायद वहाँ परिस्थितियाँ कुछ ठीक हो जाएँ या शायद यहाँ कभी कुछ बदल जाए। पर वहाँ माँ खून की उल्टियाँ करती हुई अस्पताल जा पहुँची है और पिता दिल थामे बैठे रहते है। न यहाँ जी पाती हूँ—न वहाँ जा पाती हूँ अपने दुःख की गठरी उठाकर उनके दुःख पर रखने के लिए। इस जाल से अब जीते जी निकल पाना सभव नही लगता। हर सुबह एक अँधेरे से शुरू होना और हर रात का दूसरे अँधेरे में डूब जाना। हर रात एक कब्र और दिन उस पर फैली सीली मिट्टी की काली चादर। हर पल एक परवी जिंदगी की कुंठित तपिश। पल-पल सालता हताशा का पाला जीवन की हरियाली और फसल को मार देनेवाला। अज्ञात तन-मन की भूकम्प छाई दीवारों की कपन को किसी शंकित सेंध से बचाने के लिए उसके चारों ओर काँच रोप देना। पहेलियों को चिडियों की नहीं चिडियों के पख की चिंता ही अधिक सताती है। टूटे पखो से फड़फड़ाती उड़ान। सुख का पता पूछकर बार-बार उसे नेह की लेखनी से—प्रार्थना की स्याही से—धैर्य और प्रतीक्षा के कागज पर खत लिखना और उसका निरूत्तर लौट आना। बार-बार जीवन

की अच्छाई सुंदरता और विश्वासो पर से भरोसा टूट-फूट जाना। एक रागहीन दारूण यात्रा। कहीं कोई पथ-साथी नहीं—कहीं कोई पथगीत नहीं। निसदभाव से दडित करती जड स्थितियो से घिरा निहत्था मन रह-रहकर प्रश्न उठाने के सिवा कुछ कर नही पाता। वे लोग कितने भाग्शाली है जिनके पास सहेजकर रखनेवाली यादों के खत आते है।मेरे हाथ आए है रद्दी कागज।

माँ मगलवारी महिला-सत्सग मे गई हुई है।

तीसरी बार फोन की घटी घडघडा ई बज रही है।

अपनी धर्मपत्नी के अकेलेपन की भयाक्रह चिता बैक मे मैनेजर की कुर्सी पर बैठे साहब को हो रही है। कभी वे कुछ पूछ लेते है कभी मौन रह जाते है उसकी हाजिरी से आशवस्त होकर।

बूँदाबाँदी से जन्मी मिटटी की सोंधी सुगध और तन मे रह-रहकर जगती मोरपखी हिलोर। फुहार का कोमल-शीतल स्पर्श तापित भावनाओं पर। प्रकृति में विकलता भरे मिलन की एक अभिलषणीय गतिशीलता। पत्तियो की मुरझाई और धूलधूसरित हथेलियो पर गगनचुम्बी बादलो का आतुरभाव से झर-झरकर उनकी उदासी और चिरप्रतीक्षा को धोना-अपने अतस की कोई मधुघुली कथा गुपचुप सुनाना। रतिका का उस कथा मे रह-रहकर डूब-खो जाना। श्रवणकुमार की कठ-उपस्थिति से उदासीन हो अपने स्वप्न-पुरूष के साथ कहीं ओझल हो जाना।

वे दोनो पति-पत्नी उनका प्यारा सा बच्चा और उनकी बातों की लय। ये दोनो पति पत्नी इनके सर्वव्यापक-सर्वत्रगामी माता-पिता और उनकी सवादहीनता। मित्र के पास कैमरा है जो बादलों के छँट जाने पर आज की सग-साथ भरी यादों को कल के लिए सँजोना चाहता है।

मित्र ने पिकनिकी उत्साह मे भरकर सबके मिले-जुले कई चित्र खींचे-खिचवाए है। श्रवणकुमार के साथ रतिका का और फिर माता-पिता के चित्र। मित्र दम्पत्ति का अपने बच्चे के साथ। दोनो पत्नियो का सग-सग कैमरे के सामने खिलखिलाते हुए खडा होना और फिर दोनों पतियों का ।

घर लौटना हुआ और कमरे के कैमरे मे बद होकर एक ही जिरह बार-बार होने

लगी-"तुमने क्यो खिचवाई थी फोटो उसकी पत्नी के साथ?उस आदमी की नीयत तुम पर थी। तुम उसे क्यो देख रही थी बार-बार?क्यो हँस-हँसकर बाते कर रही थी उन लोगों के साथ?इसीलिए उसने तुम्हारी फोटो अपनी पत्नी के साथ खींच ली थी बहाने से!'

पिकनिक मे किसी के साथ जाएँगे तो देखना और बातें क्या नहीं होंगी?क्या हम वहाँ किसी का स्यापा करने गये थे?महीनो बाद घर से बाहर निकलना हुआ था। हँसकर बात न करती तो क्या अपने जीवन का बारहमासा रोना रोती उनके सामने? आपको तो खुश होना चाहिए था कि आपकी पत्नी खुशी का कितना अच्छा नाटक कर लेती है!दोस्त आपका है!पिकनिक का कार्यक्रम आप दोनों ने मिलकर बनाया था! कैमरा उसका था! फोटो वह खीच रहा था आप सबके सामने!तब इसमें मेरा क्या कसूर?

कसूर है तुम्हारा! मना क्यो नहीं किया?क्यो झटपट मान गई थीं?अब पता नहीं तुम्हारी फोटो के साथ वह क्या करेगा?फोटो के रूप मे तुम अब उसके पास, उसके घर मे हो!'

'आखिर क्या करेगा वह कागज की उस फोटो के साथ?क्या ?

'कुलटा!' बिफरा हुआ एक तमाचा। बाल पजे की हिसक चपेट में। सिर पलग की पाटी पर ।

उस दिन न जाने क्यो ऐसा हुआ था कि वह मार उसके तन को नहीं मन और मान को चोट पहुँचा रही थी और अपने पुरुष का मनोविज्ञान एक सिरे से भूल गई थी। मार-काट को सदा की तरह उसकी हताशा और बेचारगी समझकर सहानुभूति से चुपचाप उसे सहने के बदले घर-गृहस्थी की प्रयोगशाला की वह गिनीपिग उस दिन पहली बार अपने बचाव का उपाय तलाशने लगी थी। उस खोज में उसने सिले हुए मुख के टाँके अधिक खिचाव और दबाव पडने से एकाएक उधड गये थे और कफन फट गया था। शब्द निर्वस्त्र होकर सामने आ खडे हुए थे और उसे पुकार-ललकार कर बोले-- अरे ओहमती! नामर्द! शब्द चारो दिशाओं मे चीख चीखकर गूँजने लगे तो तुम भी अपने को पति कहते-मानते हो?तुम्हे भी एहसास है पति होने का और पत्नी पर अपने कानूनी अधिकारो का? यूँ मारकर अपना तथाकथित पौरुष जताते हो? तुमसे और आशा भी क्या की जी सकती है?काश!मैने अपने माँ-बाप के सामने अपना मुख खोलने की हिम्मत जुटायी होती--उनकी आँखो में अटकी बेटी के विवाह की खुशी की नन्हीं-सी अंतिम किरण की परवाह न की होती और यूँ बिना आग के सती होने से इन्कार कर दिया होता !

बालों पर की कठोर पकड तानों से छलनी होकर बीच मे ही छूट चुकी थी पर रतिका

के शब्द उस पर अपनी जकड कसते जा रहे थे–" आखिर तुम भी एक इन्सान हो–यह न सोचा होता! तुम्हारे पास भी एक मन है–तुम्हे भी दूसरे लोगो की तरह दु ख-सुख व्यापता है–अकेलापन काटता है–यह भी न सोचा होता। तुम भी सबधो की सहजता देना-लेना चाहते हो–स्वस्थ गृहस्थ जीवन के सपने देखते हो और उन्हे साकार करने के लिए विज्ञापनो और दवाओं के अधे जगल मे दिन-रात भटकते रहते हो–शायद कभी दु स्वप्न हमारा पीछा छोड दें–यह सोचने की जरूरत न समझी होती। यदि मै अदर की औरत को न पा सकी तो अपने पुरूष को न पा सकने का दुख तुम्हारा भी तो उतना ही घना है–यदि मै एक अँधेरी सुरग से गुजर रही हूँ तो तुम्हारी सुरग भी तो उतनी ही अधकारमय है–यह ताना बाना भी बार-बार न बुना होता और अपने को उसमें उलझाकर दुर्बल न बनाया होता तो विवाहित जीवन की इस अविवाहित कब्र-गाथा से मुक्त हो जाती। वह समर्थ औरत उठकर चली गई और यह कब्र मेरे हिस्से में आ गई!

सामने के सोफे पर बैठी थी पराजित खंडित मूर्ति और परदे के पीछे अपमानित कोख का साया डोल रहा था अपने कानों को अदर भेज कर–' यदि मुझ जैसी अभागियो के माँ-बाप बीमार और लाचार न होते तो तुम जैसों को कैसी मिलतीं बार-बार पत्नियाँ इस खडरनुमा समाज मे अपने मान और पौरूष की रक्षा के लिए? शायद गलत कहा!अपने बाहरी रग-रूप और पद-पौरूष के बल पर तुम चाहे जितनी बार विवाह की नौटकी रचाने और घर-गृहस्थी का ढकोसला खडा करने में सफल हो सकते हो। सभ्यता के दावेदार भले घर के मनुष्यों से भली तो पशुओं की पशुता है जिनमे माँ बाप अपने धन और पद के बल पर अपने बेटे-बेटियो के लिए नर-मादा सबध खरीदना बेचना नहीं जानते। यदि तुम्हें पता थी अपनी सच्चाई तो तुमने दूसरा विवाह क्यो किया?"

प्रश्न एक फदे की तरह श्रवणकुमार के गले में झूल रहा था। एक आत्मघाती काला साया उसके चेहरे पर पख फडफडा रहा था।

आहत पुरूष का अह उस अँधेरे मे उठकर घर से बाहर चला गया था। गई रात तक न जाने कहाँ-कहाँ भटक रहा था।

कुशकाओं की आँधी मे डाँवाडोल गुर्राती-झपटती हिसक ममता की काली-कसैली जीभ एक सहवासी गाली से दूसरी पर फिसलती रपटती आसुरी विलाप कर रही थी– अरे! बेटा कैसा भी है है तो वह बेटा और उस पर तुम जैसी कितनी ही औरतें वारी-फेरी जा सकती है। मेरा बेटा तो दवाइयाँ खा-खाकर ठीक हो गया है पर तेरी ही डायन भूख !

तुझे कोई भला घर नहीं कोठा चाहिए ।"

उस रात ससार की असख्य कब्रों में से जब एक कब्र चीखी तो भयभीत मन स्थितियो ने इतनी तेजी से करवट ली कि रतिका की सारी माँगो में से एक को हल होना ही पडा और उस 'कुँवारी माँ' के द्वार पर एक के बाद दूसरी बधाई दस्तक देने लगी।

श्रवणकुमार की पत्नी पहले की ही तरह दिन-रात काम मे जुटी रहती है।

श्रवणकुमार की माँ की दोनो आँखे अपने पोते के पालन-पोषण मे दिन रात लीन रहती है और तीसरी आँख रतिका पर टिकी रहती है।

श्रवणकुमार शाम को दफ्तर से लौटकर उस 'रोपित शिशु' को बच्चागाडी मे लेकर बरामदे मे घुमाते रहते है। पर जैसे ही पडोसी युवतियों की जिज्ञासु प्रश्निल दृष्टि उन पर ताक-झाँक करती है या उनका सलाहकार पडोसी डाक्टर विस्मित आँखो में कोई असफल अटकल लगाने का यत्न करता है तो उनके चेहरे का साँवला रग अधिक गहरा हो उठता है और वे चुपचाप अदर लौट आते है।



बिरथा जनम हमारो

—सुनीता जैन—

साथ वाले वकील साहब की आज शादी है। मेरा अभी विवाह नहीं हुआ और मै शादी-ब्याह के मामले में बहुत सेन्सिटिव हूँ।

वकील साहब का बँगला हमारे बँगले से इस तरह सटा हुआ है कि अपने बगीचे मे बैठी मै दीवार के टूटे हिस्से में से बहुत कुछ देख सकती हूँ। बहुत साल हुए बरसात में बीच की यह दीवार गिर गई थी फिर उठाई नहीं गई। हम लोगों का स्नेह इतना है कि आने-जाने का मार्ग सहल हो जाने से हम सब प्रसन्न ही है।

देखती हूँ कि पूरा आयोजन हो चुका है। बारात का समय हो चला है। लाल बजरी के ग्रैवल पर दो मशकची पानी छिडक रहे है और नाते-रिश्तेदारो की खासी भीड हो गई है। जी में आता है वकील साहब से लड पड़ूँ। शादी में तो मै जाने की नही। माँ बिगडे, चाहे जो भी हो। भला कोई बात है कि वकीलनी आण्टी के मरते ही, दो महीने में वकील साहब दूसरा ब्याह रचा लें।

जैसा अनुमान था, माँ मुझे बगीचे में बैठी देख प्रसन्न नही हुई। आकर बोली "अरे शादी में चलना है कि नहीं। बैंडवाले आ गए। घोडी तैयार है और तू किताब ही लिए बैठी है। कैसी लडकी है?"

"मुझे नहीं जाना है माँ। तुम जाती हो तो जाओ ।'

'आखिर कोई बात भी तो होगी ? जाने की?पडोस का मामला है वे लोग क्या कहेंगे?हमेशा की नाराजगी हो जाएगी।

"तुम कह देना तबीयत ठीक नहीं है।'

"पर तू चलती क्यो नहीं ? सब तो जा रहे है। फिर मैने खाना भी नहीं बनाया है'भूखी रहेगी क्या ?

'मुझे तो आज भूख ही नहीं है। तुम कैसी हो माँ?वकीलनी आण्टी से तो इतना प्यार था तुम्हे और उनके मरने पर वकील साहब के दूसरे ब्याह में जा रही हो।

"बेटा भाग्य पर क्या बस किसी का। कमला तो मुझे सगी बहन से भी ज्यादा थी। कहते

हुए माँ बराबर की कुर्सी पर बैठ गई।

"लेकिन वकील साहब से तो ऐसी उम्मीद नही थी कि इतनी जल्दी दूसरा ब्याह रचा लेंगे।'

"उस बेचारे को क्यो दोष देती हो?उसको क्या सुख होता होगा?देखा नहीं, बीमारी में कितनी सेवा की थी कमला की। ब्याह तो बच्चो की खातिर कर रहा है, न कि अपने लिए।"

यह तो सब बहाना है माँ। कभी सौतेली माँ से सुख होता है बच्चो को?इतना पैसा है आया क्यो नहीं रख लेते?'

"कैसी बाते करती है। माँ माँ ही रहेगी नौकर नौकरा और सौतेली होने से ही क्या वह प्यार नहीं करेगी? सब एक से नहीं होते। तू तो गुस्से मे है। अब बता वकील साहब-घर को देखे की काम पर जाए?ब्याह हो जाएगा तो घर की चिन्ता से मुक्त रहेगा। अगर उसकी नई पत्नी बुरी भी आ जाती है तो बच्चों का भाग्य। इतने ही भाग्यवान होते तो अपनी माँ क्यो मरती बेचारों की। जब मेरा ब्याह हुआ था तो ब्याहली की गोद में तेरे बडे भैया को बिठा दिया था तेरी दादी ने। बेचारा डेढ बरस का था कुल। और पूछ ले जो एक दिन भी उसे दु ख दिया हो। उल्टे तुम सबसे ज्यादा मुझे उसी की मुहब्बत है ।

माँ से जिरह मे मै सदा हारी हूँ। माँ चली गई है और बारात भी चल पडी है। एक मै ही अभी लॉन मे बैठी हूँ। लाउडस्पीकर के गानों के मारे सिर फटा जा रहा है। सुना है दिल्ली मे तो अब शादी में लाउडस्पीकर लगने बद हो गए है। पर अपना मेरठ अभी इतना'माडर्न नही हुआ। सो में में'की आवाज करते घिसे-पिटे गाने बज ही रहें है। पता नहीं, दूसरो का चैन छीन लेनेवालो पर म्युनिस्पैलिटी टैक्स क्यो नही लगाती।

नई वकीलनी आज दोपहर ही आ गई। नवजात शिशु और वधू, दो चीजें देखने का लोभ मै कभी सवरण नहीं कर सकती। अपनी नाराजगी को ताक पर रखकर भी बहू देखने गई। अधिकतर नई बहू को घेरघार कर सारा कुनबा बैठा रहता है। पर वकीलनी एक तरफ लाल धोती में सुकुडी-सी बैठी थी। माथे पर नाक तक का घूँघट था। मैने उठाकर देखा और देखती ही रह गई। मुश्किल से सत्रह-अठारह बरस की होगी। रो रोकर आँखे सूजी थीं, पर चेहरा बडा स्वस्थ भरा भरा था। वह सिर झुकाए बैठी ही रही। देखा कि घर में बहू के प्रति विशेष कौतूहल नही है। थोडी चुहल है। एक तो बेचारी दूसरी थी तिस पर गरीब गाँव-घर की। दहेज के नाम पर कुछ एक सूती धोतियाँ वगैरह ही लाई थी। वहाँ भी किसी को कुछ आशा नहीं थी। सो सब खाने-पीने में मग्न थीं। थोडा बहुत कौतूहल यदि किसी को था तो

बच्चो को—वकील साहब के छ बच्चों को। बारी-बारी से आकर वे नई माँ को देखते अ
चले जाते। उस देखने मे आशा से अधिक भय था जो सौतेली'शब्द से उपजा होगा।

मै जितने गुस्से में गई थी, वकीलनी को देखकर उससे कहीं अधिक आक्रोश मे लौटी। अ
ही माँ से उलझ पडी, देख लिया न माँ, वकील साहब को। तुम तो कहती थीं बडे बेच
है। क्या हक था उन्हे ऐसी बहू लाने का?"

'क्यो क्या हुआ?'

हुआ क्या? आप तो कब्र मे पैर लटकाए बैठे है बहू लाए है सोलह बरस की। मुझ से
छोटी।'

'शर्म कर। क्या अशुभ बोलती है?चालीस का ही तो है।

दुगुने से ज्यादा हुआ की नही?तिस पर छ बच्चे भी उसे पालने होगे। वह तो खुद बच्चा
है। राजेश की माँ नहीं बहन जँचती है। मुझे तो ऐसा क्रोध आ रहा है कि क्या बताऊँ।
कहो माँ विधुर से ब्याह होने में बुरा नहीं लगता?'

माँ कुछ बोली नही। जब आँख का पानी आटे में गिरने से रोकने को उसने पल्ला उठा
तो मै चेती। छी! भला माँ से ऐसी बात की जाती है। होंठ चबाती हुई मै वहाँ से उठ ग

वकील साहब और हमारे घर के बीच एक ट्रासमीटर लगा हुआ है जिससे दोनों घरो
मिनट-मिनट की स्थिति रनिंग कामेण्ट्री की तरह हमें मिलती रहती है। नहीं समझे अ
वह हमारी महरी है न जुगनी वही हमारा जीता-जागता ट्रासमीटर है। सबसे पहली ख
आई विस्फोट'नई बहू छोटे घराने की निर्लज्ज आचार विचारो की। बेहया इतनी की ब
के अगले दिन ही घूँघट को तिलाँजलि दे, पल्ला पीठ में खोंसे मर्दानी बनी घूम रही है अ
एक एक कर महीनो से ठहरी चाची बुआ मौसियो को बिदा दे रही है। सुनकर आश्च
हुआ। आश्चर्य ने घी का काम किया। जुगनी भभकी और बिटिया हैरत क्या। उसे व
पता बडे घर की बहू-बेटियों का सहूर-कायदा। गाँव मे धन्धा पेला दो जून का खा लि
सो यहाँ भी यही करने लगी। देख लेना दो दिन मे ही मिस्सर(रसोइये) को भी छुट्टी
देगी। अब गए पहली वकीलनी के दिन। अब बच्चो का भगवान ही मालिक है।"

मुझे भी चिंता बच्चो की ही थी। खासकर सबसे छोटी पिन्टु मे तो मैने अपनी जान ब
छोडी थी। अगर वकीलनी ने उसे मारा तो?तो मै क्या कर सकूँगी। वह तो माँ है उसक
चले थे न दूसरा ब्याह करने अब ले मजे।

दोपहर को फिर कामेण्ट्री हुई-वकील साहब तो सिटपिटाए से कोर्ट चले गए है। रिश्तेदार भी सब जा रहे है और'मल्लो रानी'सारा घर साफ करवाने में लगीं है।

शाम को बिन्नो उधर से निकला। मैने पकडकर पूछा 'अरे बिन्नू, माँ कैसी है?'

"पता नहीं।" वह भाग गया। मै असमजस में ही रह गई।

मै जरा दिन चढे सोकर उठती हूँ। अगले दिन उठ घर की दरार में झाँका तो धक्का-सा लगा। वकील साहब के यहाँ बड़ी शान्ति थी। बच्चों का कोलाहल सुनाई नहीं देता था। रोज तो लॉन मे लडते झगडते खेलते रहते थे सब।

दसेक बजे फिर उधर निगाह गई। देखा पाँचो लडके नहाए धोए बरामदे मे कतार बाँधे बस्ता-पटटी लिए बैठे है और गिरधर शास्त्री स्टूल पर बैठे उनका काम जाँच रहे है। बच्चे कोई विशेष प्रसन्न नहीं आते थे। गर्मियो की छुटियो में विद्यारम्भ देखकर कुछ सोचूँ, कि इसके पहले ही खबरें'आने लगीं।

जुगनी ने बताया "जो कहा था वही हुआ न आखिर ? मिस्सर की छुट्टी । चौका-चक्की खुद सँभाले बैठी है। और मिस्सर के बदले शास्त्री जी बुलाए गए है। बच्चे बेकार के झझट में फँसा दिए गए है अभी से। बेचारे!

दोपहर कोई दो बजे राजेश माँ से सिलाई की मशीन माँगने आया। माँ ने आश्चर्य से पूछा, "क्यो रे क्या करेगा मशीन का ?

'वह, जो माँ है न उन्होंने मँगाई है ताई। मुन्नी की और गुड्डू की बनियान-जाँघिया सीएँगी।'

"इतनी धूप में ? बला की तो गर्मी है। भला यह क्या टाइम है कपडे सीने का?सुबह से क्या कर रही थी?"

सुबह तो खाना बना रही थी। मिस्सर जी तो चले गए न।

अरे हाँ मै तो भूल ही गई थी। रज्जो बेटा भला यह मिस्सर को क्यो निकाला उसने?कब से तो था पडा रहता।

'पता नहीं ताई।"

राजेश मशीन ले गया। माँ बडबडाई मुझे तो रग-ढग ठीक नजर नहीं आते। ऐसा न तो कभी देखा न सुना। जब देखो काम में ही लगी रहती है यह लडकी।

उसके दो दिन बाद पिण्टू मेरी गोद में बैठी थी। मै कोई पत्रिका देख रही थी। माँ ने पूछा

"ए पिण्टी तेरी माँ क्या कर रही है? '

"पूजा कर रही है भगवान की ताई, माँ ने बडा अच्छा मंदिर बनाया है। कृष्ण भगवान रखे है। रोज पूजा करती है। वह रात मे भी वहीं सोती है। कल से तो मै भी वहीं सोऊँगी। मन्दिर मे सोने से रात को डर नहीं लगता। '

माँ कुछ देर चुप बैठी रही और फिर एकाएक चप्पल पहनकर वकील साहब की ओर चल दी। माँ तो अक्सर वहाँ जाती ही रहती थी।

मै पत्रिका पढती रही और बोर होकर पिण्टू मेरी गोद मे ही सो गई। मै उसे कन्धे से लगाकर उसके घर ले चली। पिण्टू को चारपाई पर लेटाकर मुझे कुछ देर उसे थपकना भी पडा क्योंकि वह जाग गई थी और मेरा आँचल छोडती नहीं थी।

कुछ ही क्षण बीते होंगे की दोपहर के सन्नाटे मे बराबर के कमरे की खुली खिडकी से माँ की आवाज आई 'बहू,अपना कुछ ख्याल रखा कर, गर्मी बहुत है बीमार पड जाएगी।"

"नहीं अम्मा, मै ठीक हूँ। ' यह अम्मा-बेटी कब से हो गई दोनों ?माँ, पता नहीं, कैसे सबसे रिश्ता जोड लेती है।

'ठीक कहाँ मुझे तो ठीक नहीं लगती। मिसर को क्यो निकाल दिया?गर्मी मे खुद खटकी रहती है।'

अम्मा स्त्री के रहते खाना और कोई बनाए यह तो अच्छा नहीं न। खाली बैठी मै ही क्या करूँगी?मास्टर जी भी तो आने लगे है ।

' अभी तो स्कूल भी नहीं खुले, मास्टर क्यो लगा लिया ?

"क्या करूँ। घर की सफाई करायी तो एक का भी तख्ती-बस्ता साबुत नहीं मिला। लगता है महीनो से इन सबने कुछ पढा ही नहीं। अभी कचाई निकल जाएगी तो अच्छा है।'

"बहू, यह मन्दिर कब बना लिया तूने ? और यह अपनी क्या हालत बना रखी है। न तन पर ढंग का कपडा न बाली न झुमका।"

"यह तो जीवन के साथ है अम्मा सिंगार करके क्या करना है?

'और तू सोती भी यहीं है? माँ ने हौले से पूछा। मानो कठिनता से इतनी देर रह सकीं थीं।

' "

"वकील साहब कहाँ सोते है?"

"अपने कमरे में।"

"बैठक में ?"

"जी।"

"यह क्या बात हुई ?तू बच्चों को लेकर अलग पड़ी रहती है। और तेरे ब्याह को दिन ही कितने हुए है। लड़ाई हो गई क्या ?अभी नहीं खाए-पहनेगी तो फिर कब?झगड़ा हो गया हो तो मुझे बता? ।

'देख, कोई बात हो तो मुझे बता। तेरी माँ के बराबर हूँ तेरे से पहले जो थी, वह भी बहुत मानती थी। बचपने में आकर कुछ न कर बैठना ।"

उधर से धीरे-धीरे सिसकने का स्वर आने लगा। पिण्टू को थपकता मेरा हाथ एक बारगी थम गया। अरे !माँ उसे सहलाकर सात्वना में कुछ कह रही थी। क्या बात हुई समझ नहीं आई। फिर सिसकियों में नई बहू की आवाज उभरी, "ब्याह की रात कहने लगे मेरे बच्चों का ख्याल रखियो। यही तेरे भी बच्चे हैं। ईश्वर के दिए पहले से ही छः हैं। इसलिए इन्तजाम कर आया हूँ। आपरेशन करवा लिया है अपना ।"



और किरण फूटी

- आशा रानी व्होरा -

घुप्प अँधेरा।

बाहर खिडकी से लगे पीपल पर एक काली छाया हिली-डुली फिर दुबककर बैठ गई। सामने के पलँग पर से उस पर अपलक लगी दो आँखें भय से सिहरीं काँपी, फिर उन्होंने अपने कपाट कसकर बद कर लिए कि भय बाहर ही रहे भीतर न घुसने पाए।

पर भय भागा नहीं। भीतर से उसे शह मिली तो उसने बढकर गुरूचरन कौर की गर्दन दबोच ली। एक चीख गले से निकलती निकलती रह गई। कपाट जिस तेजी से बद हुए थे उसी तेजी से खुल गए। वह हडबडा कर उठ बैठी।

हवा का झोंका आया। साँस ते‍ी से उठी गिरी। बाहर फिर वही काली छाया हिल उठी थी।

भय की एक चीरती हुई लहर। पर इस बार उसने आँखें बद करने के बजाए उन्हें और फैलाकर खोल दिया। ध्यान से देखा। फिर सतोष की एक लबी साँस-'ओह' और एक दबी हँसी कितनी मूर्ख हूँ मै भी। अँधेरे मे हवा से हिलनेवाली पेड की शाख को ही कुछ समझ बैठी।'

साँस अब सम गति पर आने लगी थी। आश्वस्त होकर वह उठ खडी हुई और आकर उसी खिडकी पर झुक गई। सिर निकालकर सडक के इस छोर से उस छोर तक देखा। पर जहाँ तक निगाह ले गई। अँधेरा ही अँधेरा। सहमकर वह पीछे हट गई। वापिस आकर अनमनी-सी लेट गई।

घुप्प अँधेरा।

न जाने यह अँधेरा कब तक चलेगा? पर अँधेरा तो सभी सडकों पर है। सभी घरों में है। 'ब्लैक आउट' में ऐसा होता ही है। पडोस की कमला आभा, नीरजा, सतवत और कोई भी तो इस अँधेरे से परेशान नहीं है फिर वही क्यो है? क्या वह इन सबसे अधिक डरपोक है? हाँ, डरपोक ही तो है वर्ना क्या इस घबराती? रात रात भर बेचैन रहती?

विचारों की उहापोह से घबराकर उसने अपने आसपास नजर दौडाई। दोनो बच्चे, पति

भी, आराम से सो रहे थे। एक वही क्यों बे-आरामी है?

वह सोने की कोशिश करने लगी।

आँखे मूँदकर उसने दिमाग को शान्त करने का प्रयास किया कि वह उसे थपकियाँ देकर सुला दे। दो मिनट की खामोशी में अंग शिथिल होने-होने को थे कि पास की घड़ी ने ग्यारह बार टनटना कर उस खामोशी को तोड़ दिया। दिमाग के तार फिर बिखर कर उलझ गए—सरदार जी मुझे प्यार करते है। कभी किसी बात की तकलीफ नहीं होने देते। यहाँ तक कि महीना-पन्द्रह दिन काम से बाहर जाते समय भी पीछे घर का राशन-पानी का पूरा इंतजाम करके जाते है। कई बार मैंने कहा भी, क्या मैं इतना जिम्मा भी नहीं ले सकती?पर हर बार प्यार की झिड़की के साथ लगभग यही उत्तर मैं किसलिए हूँ?मैं नहीं चाहता कि मेरी गैरहाजिरी में भी तुम्हें किसी की मदद लेने की जरूरत पड़े। और हर बार कुछ हिदायतें देकर वे चले जाते है जैसे मैं कोई छोटी बच्ची होऊँ जिसे कुछ भी समझ नहीं या जिससे कोई भी इंतजाम नहीं हो सकता। ओह!र कितना-कितना ध्यान रखते है वे मेरा। और एक मैं हूँ कि फिर भी निश्चित नहीं हो पाती।

उसने निश्चित होकर एक बार फिर सोने की कोशिश की। पर करवट बदलते ही दिमाग के सोचने की दिशा फिर बदल गई—कैसे होऊँ निश्चित?यह कैसा प्यार है कि एक-दूसरे पर पूरा विश्वास न हो?अपनी किसी भी बात में वे मुझे राज़ीदार बनाते है?छः साल होने को आए शादी हुए। दो बच्चों की माँ बन चुकी हूँ। अभी भी वे मुझे बच्ची ही समझते रहेंगे?कुछ भी पूछो हँसकर टाल देंगे या गंभीर होकर कहेंगे,जिन बातों को तुम समझती नहीं हो उनमें क्यों सिर खपाती हो? तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं, तो क्या गुरु महाराज पर भी नहीं है? यह सारे गुरु की महिमा ही तो है कि हम आराम चैन की रोटी खा रहे है। जो ईश्वर भक्ति में लीन रहता है गुरु महाराज उसके बीवी-बच्चों की खुद ही फिक्र रखते है। देखती हो कितने घंटे जाप में बिताता हूँ। फिर सतसंगियों का बुलावा आता है तो बाहर भी जाना पड़ता है। पैसे का क्या है?वह तो किसी भी भेड़े धन्धे काम से कमाया जा सकता है। मैं ऐसे काम क्यों करूँ? गुरुमहाराज की किरपा से सतसंगी खुद ही मेरा ध्यान रखते है। मैंने तो अपना जीवन गुरुचरणों में ही बिताने का निश्चय किया है। और मैं चुप हो जाती हूँ। पर मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि कोई काम धंधा न करो घंटो जाप में बिताने और सत्संग में जाने से (दो-ढाई हजार रुपए महीने का खर्चा कैसे निकल आता है? जरूर कोई तस्करी का या ब्लैक धंधा करते होंगे मुझे बताते नहीं है। छि छि गुरु के शिष्य और धर्मी होकर ऐसे काम!.. कुलवन्त और फिर बेचैन हो उठी।

घड़ी ने बारह बजाए। उसने साथ के पलँग पर लेटे पति पर नजर दौड़ाई। कमीज-पाजामे की झक्ख सफेदी अँधेरे मे चमक उठी। काली, मुलायम छोटी-सी दाढ़ी वाले अपने बाँके सरदार को जब कभी भी वह सफेद कपड़ों में देखती उस पर प्यार उमड़ आता है। कितना सुदर लगता है हरनाम सिंह धोबी के धुले या टिनोपाल लगे सफेद झक्ख कपड़ो में। न जाने कितनी बार उसने फरमाइश की होगी कि वह रात को भी सफेद कमीज-पाजामा पहनकर सोया करे, पर कभी ध्यान नहीं दिया था। पुरानी आदत के अनुसार अपना धारीदार नाइटसूट भी सोते समय उतारकर रख दिया करता और कच्छा-बनियान पहने सो जाता।

पर इधर कुछ दिनो से, जब से 'ब्लैकआउट' होना शुरू हुआ है, वह नाइटसूट भी नहीं, सफेद धुले कपड़े पहनकर सोने लगा है—न जाने कब बमबारी हो और भागना पड़ जाए'इतना ही नहीं वह अपना एक बैग भी तैयार करके उसे बगल मे रखकर सोता है—क्या पता कब भागना पड़े, तो कुछ जरूरत का सामान तो पास में हो।

बैग का ताला बद रहने से गुरचरन कौर कभी भी उस जरूरत के सामान को नहीं देख पाई। हाँ उसने एक बार मजाक किया।'गुरु के सिख होकर डरते हो तो उत्तर मिला था क्या सिक्खो को अपनी जान और अपने बीवी-बच्चे प्यारे नहीं होते? यह मत समझो कि अकेला भाग जाऊँगा तुम्हें भी साथ भगा के ले जाऊँगा।

पति की इस बात को याद कर गुरुचरन कौर को हँसी आ गई। तनाव कम होते ही उसकी पलकें भी मुँदने लगीं।

रात गहरी चुकी थी। दिल्ली की इस नई बस्ती में चारों ओर अँधेरा और सन्नाटे का राज्य था। कोई सवा तीन बजे होंगे कि एकाएक हवाई हमले की चेतावनी का भोंपू बज उठा। हरनाम हड़बड़ा कर उठा और बाहर निकल गया।

गुरुचरन कौर देर से सोई थी। इसीलिए एकदम झटके से न उठ सकी। पर उसकी नींद खुल गई थी। अलसाई हुई देह तोड़ती हुई वह उठी और दोनों बच्चों को उठकर भीतरी कोने मे ले गई। जब बच्चों को सँभाल चुकी तो उसे ध्यान आया सरदार जी कहाँ है?

चिंता की इस घड़ी में भी उसे हँसी आ गई। वैसे तो इतना डरते हैं और अब बाहर निकल गए है। उन्हें बुलाने के लिए वह बाहर निकली। इधर झाँका उधर झाँका, 'अरे कहाँ चले गए? फिर छत की ओर देखकर एकाएक सिहर उठी। यह क्या ? छत की यह रोशनी कैसे चमक रही है?भय से चीखकर उसने पति को पुकारा। सरदार जी।

थोड़ी देर में सरदार जी ने आकर उसे बाँहों में सँभाल लिया 'क्यो डर क्यो गई थी?

मै तो छत पर पाकिस्तानियों के जहाज देखने गया था। सालों ने नींद हराम कर रखी है।

'तो तुम्हें डर नहीं लगा?"

"डर कैसा?"

'वह जो रोशनी निकली थी?"

' हाँ, वह मुझे भी दिखाई दी। शायद बिना आवाज के किसी जहाज ने फैंकी होगी।"

"तुम तो कहते थे, अकेला नहीं भागूँगा?

"तो अभी भाग थोडे ही चला था पगली कहीं की।" और उसने पत्नी की गालों को प्यार की हल्की चपत से सहला दिया।

तभी खतरा टल जाने का भोंपू बज उठा और पति-पत्नी दोनो बिस्तर पर लौट आए।

हरनाम सिंह ने घडी देखी। चार बजने मे कुछ ही समय शेष था। ग्रंथी और कर्मकांडी होने से वह रोज चार बजे उठ जाया करता था। फिर निवृत होकर सुखमनी साहब का व ग्रंथ साहब का पाठ किया करता था। उसने गुरचरन कौर से कहा "मै तो अब क्या सोऊँगा। चार बजने वाले है। तुम सोओ। मेरा तो पाठ का समय हो चला है।'

और वह अपनी पूजा-पाठ वाली कोठरी में जाने के लिए तैयार होने लगा।

इस कोठरी में हरनाम सिंह ने ग्रंथसाहब का दरबार लगाया हुआ था और रोज यहीं पर घंटो बैठकर पाठ करता रहता था। इस पाठ-स्थल की पवित्रता के बारे में उसके नियम ऐसे थे कि पत्नी-बच्चों तक को और किसी भी मेहमान को उसमें प्रवेश की इजाजत नहीं थी। बस वह बैठता था या कभी-कभी आनेवाले उसके सत्संगी। पत्नी और बच्चे इस बात का पूरा ध्यान रखते थे कि सरदार जी की पाठवाली कोठरी में नहीं जाना है। सत्संगियो के सामने तो हरगिज नहीं।

गुरचरन कौर ने फिर सोने की कोशिश की पर एक बार नींद उचट जाने से फिर आँख नहीं लग रही थी। लडाई के बारे मे भयावनी कल्पनाएँ उसके मन में उठने लगीं थी। रात के पिछले पहर में चाँद आसमान में निकल आया था, पर उसे लग रहा था जैसे अभी भी वैसा ही घुप्प अँधेरा है।

घुप्प अँधेरा !

यह अँधेरा बाहर ही तो नहीं है।उसके भीतर भी तो वैसा ही अँधेरा है।'वह सोचने लगीन जाने कैसी धुकधुकी चल रही है मेरे उस अँधेरे मन में। ये सरदारजी जरूर कोई चोरबाजारी

का धंधा करते है और ढोंग बनाते है, पाठ का। यह भी कोई बात है कि मै इनकी पाठवाली कोठरी में नहीं जा सकती?बाहर के सारे गुरूद्वारो मे मै जा सकती हूँ तो उनका यह छोटा-सा गुरूद्वारा ही सबसे ज्यादा पवित्र रह गया है कि मै उसमें घुस नहीं सकती?कुछ भी हो जाए, मै आज तो जरूर जाऊँगी।'

यह निश्चय करने के बाद वह सोई नहीं। उठकर खडी हो गई। दबे पैरों कोठरी की तरफ आई तो कुछ आवाज सुनकर वहीं ठिठक गई। हाय!यह क्या ? यह क्या सुखमनी साहब का पाठ है?उसे अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ।

ध्यान लगा कर उसने कुछ सुना। फिर धीरे से बढकर एक झरोखे मे से झाँक कर देखने लगी। अब उसे अपनी आँखों पर भी विश्वास नहीं हो रहा था।

देखते-देखते उसका सिर घूमने लगा—हाय मेरे साथ यह क्या हुआ?इतना बडा धोखा? सिक्खो के भेष मे पाकिस्तानी छाता सैनिक—सिक्ख बने नकली सैनिक ? नहीं-नहीं छ साल पहले छाता सैनिक कहाँ से आ गए?—क्या हो गया है मुझे? मुझे तो कुछ समझ में नही आ रहा' नहीं नहीं हाँ हाँ ये सरदार जी ब्लैक नहीं करते ये तो ये तो पाकिस्तानी जासूस है।'

सिर को जोर का एक झटका-सा लगा। कलेजे में दर्द की एक गहरी टीस उठी। एक क्षण को उसे लगा सारी पृथ्वी हिल रही है। भूचाल तो नहीं?पर चक्कर के थमते ही वह होश में आ गई इसलिए चिल्लाई नही। किसी निश्चय पर पहुँचने के लिए वैसे ही दबे पाँवों पीछे लौट पडी।

आकर पहले तो बच्चों से लिपट पडी। उसकी रूलाई फूट आई थी। दु खर्न-विह्वल स्वर में वह बुदबुदाई। अभागों, किसकी सतान कहलाओगे तुम? मै भी किसी को क्या मुँह दिखाऊँगी? हाँ, क्या मुँह दिखाऊँगी किसी को?मै किसकी पत्नी हूँ?

फिर पाँच मिनट मे ही स्थिर हो आई नहीं-नहीं', मै इसकी पत्नी नहीं हूँ इसकी पत्नी। यह हमारा दुश्मन है। मै दुश्मन का साथ देकर देशद्रोह नहीं कर सकती। इसका भरोसा भी क्या ?जब जरूरत नहीं होगी हमें ही भून देगा। तो क्या ? क्या ? हाँ-हाँ मुझे यही करना चाहिए। देरी ठीक नहीं। कहीं उसे पता चल गया के मैने देख लिया है तो?'

वह शीघ्रता से उठी। चलने को उद्यत हुई कि विवेक जाग उठा। पैर बढाते ही रूक गई।नहीं-नहीं यह ठीक नहीं होगा। इतने सवेरे मुझे घर से नहीं जाना चाहिए। फिर अब तो मै अपने बच्चों को एक मिनट के लिए भी इस घर मे अकेला नहीं छोड सकती। तो? तो

क्या करूँ?

उसकी बेचैनी बढ चली थी। पर वह मन में वाहे गुरू-वाहे गुरू जपती हुई लेटी रही। हरनाम सिंह सुबह सात बजे तक भीतर ही रहता था और उजाला छ बजे ही हो गया था। उसने चैन की साँस ली।

सवा छ बजे पड़ोसी बंगाली बाबू की टेलीफोन की घंटी टनटना उठी—हलो सुपरिटेंडेंट साहब, आप यह मकान नंबर नोट करिए और फौरन चले आइए। जी हाँ, उसकी पत्नी ने ही बताया है। वह अपने दोनों बच्चों के साथ मेरे यहाँ ही बैठी है। आप सीधे ग्रंथसाहब वाली कोठरी में चले जाइए वहाँ एक मिट्टी के घड़े में आपको ट्रांसमीटर मिलेगा जी हाँ सात बजे से पहले हरनाम सिंह भी वहीं मिलेंगे, आप जल्दी कीजिए ।"

अब बंगाली बाबू फोन कर रहे थे और गुरचरन कौर को लग रहा था उसके भीतर-बाहर बरसों से जमा अँधेरा कट रहा है—कटता जा रहा है और किरण फूटती आ रही है।



चाची की चूडियाँ

- लीला तलरेजा -

पतली-पतली नगीनो जडी-सी चूडियों पर जब भी नजर जाती है आँखों में आँसुओं का ज्वार अनायास उमड आता है और जाते-जाते वक्त की रेत पर छोड जाता है स्मृति की अनेक सीपियाँ। इन प्यारी सीपियो मे बन्द है अनेक कहानियो के अमूल्य मोती।

आज तो केवल एक ही सीपी खोलूँगी। यह क्या कहती है अपनी जुबानी, आप भी अवश्य सुनना चाहेगे। हाँ तो मुझे इस सीपी मे नजर आ रहीं है चाची की सीप - जैसी दो सुन्दर पनीली आँखें और उनकी झिलमिलाती सोने की चूडियों की चमक-दमक।

मुझे अच्छी तरह याद है वह दिन जब चाचाजी के लिए हम लडकी देखने गए थे। हमउम्र होने के कारण माँ- पिताजी और मँझली चाची ने मुझे ही उनसे बात करने के लिए कहा था। मगर मै इसके लिए मानसिक रूप से तैयार नहीं थी लेकिन स्पष्टत ना भी नहीं कर सकती थी। इस सिमटी-सिकुडी लडकी का भावी चाची के रूप मे चयन करने के लिए मै उतावली अवश्य थी, किन्तु उनसे ज्यादा सकोच मुझे हो रहा था। आधा घटा बीत गया पर हम दोनों में से कोई नहीं बोला। बस टुकर- टुकर तकती रहीं एक- दूसरे को हम दोनों।

माँ- पिताजी ने मुझे बाहर बुलाकर पूछा था 'कैसी लगी लडकी तुम्हें ?बातचीत की तुमने?

'मै भला कोई दादी-अम्मा हूँ , मैने मन ही मन झुँझलाते हुए लेकिन ऊपर से बडी गम्भीरता से कहा, "हाँ, चाची अच्छी लगी लेकिन बात- वात मै नहीं कर सकती।" मै भी तो लडकी हूँ। यदि इस तरह कोई मुझे देखने आये, सोचकर मै पसीना-पसीना हो गई थी।

खैर लडकी माँ- पिताजी बडे चाचा- चाची व हम सबके द्वारा पसन्द कर ली गई। कुछ रस्मों रिवाजों के बाद सगाई की रस्म पूरी हो गई और कुछ महीनों बाद विवाह भी। चाची को सुन्दर साडियों और गहनो से लाद दिया गया। विवाहोपरान्त बडे चाचा जी ने छोटे चाचा चाची को भी कानपुर बुला लिया। वहाँ उनकी तेल की मिल थी, जो शायद उनसे अकेले नहीं सँभल रही थी।

बस छोटी चाची के दुर्भाग्य की कहानी शुरू हो गई। कानपुर उन्हे रास न आया। चाचा जी को तेल की मिल में जबरदस्त घाटा हो गया। घर की जमा पूँजी के साथ- साथ बडी

चाची के जेवर तक बिक गए। घर की इज्जत बचाने के लिए छोटी चाची के गहने रहने दिये गए। बिरादरी में विवाह- शादी के अवसर पर दोनो उन्हीं जेवरों से काम चला लेतीं। इस सबके बावजूद उनकी आर्थिक स्थिति सँभलने के बजाय बिगड़ती जा रही थी।

आखिर चाचा जी ने पत्र लिखकर पिताजी को सारी स्थिति समझाई और उन्हे वहाँ बुला लिया। घर की मान मर्यादा का प्रश्न था। पिताजी व्यवसाय का बोझ मेरे छोटे भाई के कधो पर डाल कानपुर चले गए। जाते- जाते माँ के अनुरोध पर जो राशि मेरे विवाह के लिए अलग रखी थी वह भी चुपके से लेते गए। वहाँ तेल की मिल बन्द करा उन्होंने चाचा जी के साथ एक पोलट्री फार्म खोला। लेकिन परिवार के खर्चे और अनुभव न होने के कारण पोलट्री फार्म भी धीरे-धीरे घाटे मे जाने लगा।

इधर माँ ने अपने विचार से मेरे लिए एक सुयोग्य घर ढूँढ निकाला। उन्हें मेरे विवाह की बहुत जल्दी थी। पिताजी और चाचाजी को तार देकर लडका और घर देखने के लिए बुलाया गया। घर-वर पसन्द करने के बाद समस्या थी भावी सास की दहेज की माँग पूरी करना। हालाँकि लडके को सुशील सुन्दर लडकी ही चाहिये थी। लेकिन माँ को खुश करना उनके लिए अत्यत आवश्यक था। भावी ससुर का समाज मे बहुत नाम था किन्तु पत्नी से वे भी डरते थे। उस वक्त पिताजी का हाथ तग था पर माँ थी कि लडके को हाथ से निकलने न देना चाहती थी। और फिर लडकेवालो ने स्वय रिश्ते की माँग की थी। अत काफी सलाह-मशविरे के बाद इस रिश्ते के लिए स्वीकृति दे दी।

मँगनी के साथ ही वर पक्ष की ओर से दहेज के सामान की लिस्ट भी थमा दी गई। जैसे-जैसे विवाह की तिथि नजदीक आती जाती थी एक-एक कर घर की बहुमूल्य वस्तुएँ मेरे नाम होती जा रही थी। मै असहाय निरूपाय-सी भरे दिल और सूनी निगाहो से सारा तमाशा देख रही थी। माँ ने अपना एकमात्र सोने का सैट मेरे दहेज के लिए रख दिया। मामाजी सिलाई मशीन ले आये तो बुआ जी फर्नीचर चाचाजी ने अपना स्कूटर बेचकर विवाह के कुछ खर्चे का प्रबन्ध किया तो पिताजी ने कर्ज लेकर बाकी खर्च का। बस रह गई सोने की चूडियाँ जिसके लिए मेरी सास ने विशेष रूप से कहलाकर भेजा था।

मुझे याद आया हमारे घर में तो कभी किसी ने दहेज की माँग न की थी। हाल ही में तो चाचाजी का विवाह हुआ था। एक बार उन्होंने बर्तनों के विषय मे पूछ-भर था ताकि वे जो बर्तन दें वह हमारे सँयुक्त परिवार मे काम आ सकें लेकिन घर के सब लोगों ने सख्ती से दादीजी को मना कर दिया था कि अपनी तरफ से कुछ न बतायें। उनकी जो इच्छा हो

सो दें या ना दें। लेकिन यहाँ तो खुले रूप से दहेज की माँग हो रही थी। मानो लडकेवालों ने हमसे कोई कर्ज लेना हो जो हमे हर हालत मे चुकाना ही होगा। तभी तो एक शहर के लोगों से दूसरे शहरो के लोग रीति-रिवाजो, विचारों मे भिन्नता के कारण रिश्ता करते हुए डरते है।

जी चाहता, शादी से इन्कार कर दूँ। पर अब क्या हो सकता था। फिर रिश्ता जोडने के वक्त हमसे किसी ने पूछा था क्या जो अब तोडने के लिए पूछेगे। लडकी तो गाय होती है गूँगी गाय जिसे बाबुल के खूँटे से खोलकर श्वसुर जी के खूँटे से बाँध दिया जाता है बाजे-गाजे के साथ। आज तो विवाह के बाद भी जितनी आसानी से सम्बन्ध विच्छेद हो जाते है तब मँगनी के बाद रिश्ता तोडना भी जुर्म माना जाता था। और उसके बाद लडकी का अन्यत्र विवाह होना मुश्किल हो जाता।

हाँ तो बात हो रही थी सोने की चूडियो की जिनका हर हाल मे बनवाना आवश्यक था। इसका एकमात्र उपाय बचा था छोटी चाची की चूडियों में से मेरे लिए चूडियाँ बनवाना। सुनकर मेरा रोम- रोम सुलग उठा। जब ये चूडियाँ सुनार के पास जाने लगीं मै फूट-फूटकर रोने लगी। मेरा बस चलता तो मै काँच की चूडियो से ही सतोष कर लेती पर मेरी सुनता कौन था। सबने समझा मेरे विवाह की तिथि नजदीक आ रही है शायद मै इसी कारण रो रही हूँ।

खैर, किसी तरह मेरा विवाह सम्पन्न घराने मे हो गया। अपने कष्ट भूलकर इस बात से सभी सतुष्ट थे। दस वर्ष बीत गए इस बात को। मेरे विवाह के बाद जल्दी ही पोल्ट्री फार्म बन्द हो गया। पिताजी दिल्ली वापस आ गये। बडे चाचा जी दूसरे शहर जा बसे छोटे चाचा जी भी दिल्ली चले आए। यहाँ उन्होंने भी अपने श्वसुर के सहयोग से अपना व्यवसाय प्रारम्भ किया। हमने राहत की साँस ली। कुछ दिन सब ठीक रहा, लेकिन तकदीर ने ज्यादा दिन चाचा जी का साथ न दिया। आये दिन उन्हे रुपये-पैसो की जरूरत रहती। पिताजी का अपना हाथ तग था। ससुराल वाले भी कब तक उनकी मदद करते।

इन्हीं परिस्थितियो मे हैरान परेशान चाचा जी एक दिन हमारे घर आये। हाल चाल पूछने की औपचारिकता के बाद उन्होंने चाची की बाकी बची सोने की चूडियाँ मेरे सामने रख दी। चूडियो की खनखनाहट में उनके रूँधे कठ के बोल खो- से गये। मेरे लिए तो हर चूडी चाची का चेहरा बन गई थी, जो प्रश्न- सूचक निगाहों से मेरी ओर देख रही थीं। कुछ न सुनकर भी मै सब कुछ समझ गई थी।

न जाने किस अज्ञात प्रेरणा से मैंने झपटकर वे चूड़ियाँ उठाईं और कलेजे से लगा लीं। मन ही मन ये निश्चय किया अब कहीं न जाने दूँगी ये चूड़ियाँ। ये चाची जी की गोरी कलाइयों की ही शोभा बढ़ायेंगी। और चाचा जी को दूसरे दिन तक रुपयों के बन्दोबस्त का आश्वासन देकर विदा किया।



घर का पति बाहर का पुरूष
- उषा गोयल -

सिगार का धुँआ गोलाकार छल्ले बनाता हुआ अपनी लबाई बढाता ही जा रहा था। खाँसता हुआ रवि चिंता मे लीन था। पानी का घूँट भरते हुए उसने फिर सिगरेट सुलगाई।

"क्यो सिगरेट पर सिगरेट सुलगाए जा रहा है यार' गोपू ने रवि को टोकते हुए पूछा ।

"तुम क्यो चेन- स्मोकर बनते जा रहे हो ? मिस मालती ने भी तपाकसे प्रश्न किया।

"मै अपने घर मे बिल्कुल भी सिगरेट नहीं पीता रवि ने उत्तर देते हुए सिगरेट की राख झाडी 'केस निपटाते हुए क्लाइन्ट इतना टेशन पैदा कर देते है कि न चाहते हुए भी मैने इसे फिर शुरू कर दिया।"

'और आपके पैग का शौक।' गोपू ने टोका।

"वकील साहब आप अपने घर मे भी एक के बाद दूसरी बत्ती जलाते हो ?कितनी बार आराधना करते हो देवी के सामने' मालती ने चुटकी ली।

"मेरी पत्नी इस काले पर्दे के पीछे है। उसकी नजर में मै देवता हूँ। केवल पतिदेव हिन्दू पति। यकीन कराने पर भी पत्नी को विश्वास नहीं होगा कि मेरे शौक बढ चुके है। स्वप्न मे भी वह मुझे अपना परमेश्वर मानती है। 'विश्वास और आस्था भरे शब्दों मे रवि ने ठडी साँस भरते हुए कहा।

'तो क्या तुम ठगी करते हो अपनी पत्नी से। छल- फरेब, धोखा सफेद झूठ बोलते हो।' मालती एक साँस में बोलती गई।

"मेरे बच्चे भी इस विषय में नहीं जानते। यह बात आपको नहीं पता मालती। केवल मै ही तो ऐसा नहीं हूँ। केवल मै। मेरा दोस्त जगदीश इतना बडा सर्जन होकर भी पत्नीभक्त है तो मै मै तो नया-नया वकील हूँ।'

"तो आप दोस्तों के कदमो पर चल रहे है रवि बाबू ' बराबर की कुर्सी पर बैठी हुई मालती ने पैनी दृष्टि से रवि को ताका, मानो कह रही हो -तुम कपटी हो ठग हो दोगले। चरित्र ही क्या है ?एक कपटी ढोंगी और तुम मे अतर ही क्या है। केवल ।~ शब्दों का।

मै सोचती हूँ कि आपकी पत्नी को सच्चाई की पता जरूर होना चाहिए। माध्यम चाहे कुछ भी हो। आपके डाक्टर का क्या तरीका है मि रवि ? मालती ने बडी नम्रता से पूछा।

घर म पत्नी के प्रत्येक आदेश का चुपचाप पाल‍ा करता है डाक्टर। पत्नी व बच्चो को स्कूल छोडकर आना घर का सभी सामान लाना बाग का काम करना आदि ।

यह तो डाक्टर का आपरेशा के बाद अपनी थकावट दूर करने का एक साधन मात्र है। चूरन चटनी मुँह का टेस्ट बदलने के लिए कुछ तो चाहिए ही उसे। मालती ने व्यग्यबाण छोडते हुए कहा।

पुरूष का लँगोटा कसकर कौन रख पाया है ?क्या आप यह नहीं जानती कि यह पुरूषप्रधान समाज है। स्त्री पढ लिख ले कमा ले रूप का चौखटा सजा ले मगर स्त्री है तो स्त्री ही। उसे पति के चरण चिन्हो का अनुसरण तो करना ही है। पत्नी होने के नाते भारतीय पत्नी सीता सावित्री की अनुगामिनी न बनी तो उसे चैन से रोटी कौन खाने देगा?उसका चैन उसका सकून केवल उसके समझौतो मे है। यही शाति बिन्दू है जो उसके जीवन के विस्फोटक पदार्थ को ढाँपने की शक्ति रखता है। सबला को अबला बनाने वाला पुरूष अपनी पत्नी को भी नही बख्शता पर पुरूष की आस तो परायी आस है। क्या तुम्हारा विचार कुछ और है वकील साहब मालती ने रवि बाबू से सीधे सपाट प्रश्न किया।

रवि इतने प्रश्नो का उत्तर एक साथ देने मे उलझ गया। माथे पर चिंता की अनेक रेखाएँ उभर आई पर वह उन्हे ढाँपता हुआ भी अनेक सत्यों को एक झूठ की आड मे समेट न पाया। चुप रहकर विषय को बदलने की कोशिश करता रहा रवि। परन्तु मालती कब छोडने वाली थी। सत्य की चोट उसके आर- पार थी जिसे सहना उनके लिए कठिन था। "जवाब दो रवि बाबू।मालती ने पुन टोका।

क्या तुम चाहती हो मेरे घर के सुख चैन मे बवडर उठ खडा हो। मुझे दो वक्त की रोटी न मिले। मेरे बच्चों ने मेरा जो चित्र बना रखा है वह धूमिल हो जाए और उस पर कीचड के चद छींटे आ पडे। रवि बोल उठा।

मगर यह वकालत के झूठे धधे का छल फरेब अपने चरित्र में लाते ही क्यो हो रवि बाबू ?आप जिन बच्चो पत्नी व परिवार के लिए परिश्रम करते हो उनके लिए सच झूठ की गोटी खेलते हो तो दो गोटियो का रग तो एक हो। उनमे बदरगी कैसी। बाहर काकटेल का मजा लूटनेवाला चेन स्मोकर हीरो घर मे पत्नी के सामने बगुला भक्त बने इसमें क्या

शान है। यह नकली चमक तो क्षणिक है। चेहरे की असली लाली ही स्थायी होती है मि रवि। फिर पत्नी को क्यो बरगलाते हो ? मालती का प्रश्न था जब किसी दिन सच्चाई की बिजली टूटी और रँगे हाथो पकडे गए तो क्या हालत होगी तुम्हारी ?सोचो फिर सोचो मि रवि वकील साहब।

'मगर मेरा डाक्टर दोस्त भी तो अपनी नर्सों और आने वाली मरीजाओं के साथ गुलछर्रे उड़ाता है। फिर भी वह घर मे अपनी देवी की भक्ति मे धूनी रमाता है। वह भी खुश है और उसके बीवी बच्चे भी। उसके जीवन मे तो कोई उथल-पुथल नही। रवि ने व्यग्य करते हुए मालती से कहा।

'जिस दिन डाक्टर का भडा फूटेगा उस दिन सँभाले नही सँभलेगा बच्चू। छठी का दूध याद आ जाएगा अगर पकडा गया किसी दिन। बे भाव के पडेगे मियाँ को। जान बचानी मुश्किल हो जाएगी। डाक्टरी चडी भी बन सकती है। कौन कह सकता है यह असभव है। असभव को सभव करने मे ही पौरुष है। सभव को असभव बनाना तो बच्चो का खेल है वकील साहब कोर्ट का केस या कचहरी की अदालत नही। आज नारी की नजरे सभी ओर है। काश!आप मे भी सुधार होता तो जीवन का रग ही कुछ और होता। वकालत का धधा, अनेक क्लाइट सभी को सच्चा न्याय मिलता। फरेबी आदमी फरेब का ही दामन थामेगा, सच्चाई का नही।अभी वक्त ज्यादा नही गुजरा रवि बाबू जीवन अभी बहुत शेष है।



गुलाबी प्रभात

- सिंधू भिगारकर'सरिता'-

अलार्म की घंटी बज उठी। फिर पाँच दस मिनट सन्नाटा——कोई हलचल नही। श्रीमतीजी देख रही थी वह उठ रहा है या नही। सुधीर ने भी अलार्म सुना था पर उठने का विचार करते-करते वह नींद मे डूबने लगा डूबता ही जा रहा था कि गरजन सुनाई दी अजी उठिए भी दूध लाने को नही जाना है क्या ? आज तो बूँद भी नहीं बची है दूध की। सुधीर को जोर से हिलाकर बोली उठिए न नही तो केंद्र पर दूध नही मिलेगा आजकल की दूध केंद्र की स्थिति उसे याद आयी। कभी बोतले कम मिलती तो कभी गाडी देर से आती। कभी देरी से जाने पर कुछ भी न मिलता। वह सच कह रही थी।

सुधीर उठ गया। पति- पत्नी बारी बारी से दूध केंद्र पर से दूध की चार बोतले ले आते थे। चार दिन वह ले आती तीन दिन सुधीर। प्रभात की ऐसी सुंदर बेला मे बिछौने को छोडना बिल्कुल पसद नहीं था पर ताजा दूध की गरमागरम चाय भी उसे बेहद पसद थी। वैसे तो दस मिनट का भी यह काम नही था पर अलार्म बजाकर नींद को तोडना उसे अच्छा नही लगता था। धीरे धीरे मीठी नींद से इस दुनिया मे आ जाना पाँच दस मिनट फिर इस करवट से उस करवट पर एक दो मिनट फिर बिस्तर पर यों ही लेटे रहना और नींद पूरी होने के उल्लास मे उठना यही उसे अच्छा लगता पर करे क्या ? उठना ही होगा। नींद तो अब टूट चुकी थी।

वैसे तैयार भी क्या होना था?हाथ मुँह धोया बालो मे से हाथ फेर दिया बिना आईने मे देखे हुए। हर कोई ऐसा ही आता है- इतनी सुबह कौन किसे देखता है अभी धुँधलका ही है थोडा-सा दिखाई देने लगा है। सब ऐसे ही आते है। बिना मेकअप बिना कघी किए घरेलू ड्रेस मे सुधीर ने भी नाईट पाजामे पर एक शर्ट पहन ली और चल पडा। सडक का वातावरण इस समय शात होता है कोई चहल पहल नहीं मनभावनी हवा। घर से बाहर निकलने पर मन हल्का फुल्का हो जाता है। सुधीर निकल पडा। मन शात था निर्मल पानी जैसा दिन भर की मिटटी की ढेकले उसमे अभी नही पडी थीं।

बोतलो का बास्केट लेकर वह दूध केंद्र पर पहुँचा। वहाँ आज दूध कम ही आया था। क्यू भी छूट गया था उसे तीन ही बोतल मिली। एक- दो नम्बर के बाद दूध खत्म भी हुआ।

इधर-उधर नजर दौडाकर बडे आराम से वह लौट रहा था।

दूर से एक आकृति आती हुई-सी लगी वही है ऊँचा छरहरा बदन। सुदर तो नहीं पर आकर्षक। शायद सुबह के धुँधलके मे अधिक आकर्षक लगती हो। हमेशा वह शाल ओढकर आया करती थी गरमी के दिनों मे सूती और सर्दी के दिनो मे ऊनी। आज भी बादामी रग की रोज की शाल ओढकर आ रही थी। बाल बिखरे हुए कोई मेकअप नहीं। पानी से धोया हुआ तरो ताजा चेहरा, मानो ओसबिदुओ से धुला हुआ कोई फूल हो। उस फूल को देख सुधीर का मन खिलने लगा।

आधे लीटर दूध की दो बोतले खरीदती थी। कभी क्यू मे सुधीर के आगे खडी होती तो कभी दो कदम पीछे। कभी आती हुई दिखाई देती तो कभी जाती हुई तो कभी बिल्कुल नही पर सुधीर की आँखें उसे खोजती रहती। इन कुछ महीनों मे दोनो मिलते ही एक- दूसरे की तरफ देख थोडा- सा मुस्कराने लगे थे- बिना होठ खोले मुस्कराहट- इतनी ही पहचान। अभी-अभी एकाध शब्द भी एक- दूसरे से बोलने लगे थे। सुधीर कहने लगा था कि आज देर हो गयी दूध नहीं आया तो अच्छा' या ऐसा ? उत्तर वह देने लगी थी। दोनों ओर से परस्पर परिचय की कोई जल्दी नही थी- सुबह के धुँधलके मे बस मुस्कराना।

सुधीर लौट रहा था वह आ रही थी। सडकें शात अधसोयी-सी। प्रसन्न और सुहावनी हवा पर प्रकाश का हल्का-सा जादू दोनों एक-दूसरे के सामने खडे थे, वही बद मुस्कराहट। सुधीर ने साहस किया-

वहाँ जाने से क्या फायदा?

'क्यो ''

'आज दूध तो कम आया था अब कुछ भी बाकी नहीं है । दूध खत्म हो गया है।

हूँ ss।

'देखिए आपको एतराज न हो तो

एतराज ? किस बात का ?

"मुझे तीन बोतले मिली है।"

अच्छा हुआ आपको तो कुछ मिला।

'ऐसा करेगे

करना क्या है लौट जाती हूँ।

"नहीं, नहीं, मैं कह रहा था "

'जी, क्या ?

"एक बोतल दूध की मैं आपको "

'आपकी श्रीमतीजी "

'नहीं उसे मैं कह दूँगा।'

"क्या कह देंगे?

'जी, यही की "

सुधीर ने झट से झुककर अपने बास्केट में रखी दूध की एक बोतल उसके बास्केट में रखी और वहाँ की खाली बोतल अपने बास्केट में।

दोनों मुस्कराये। सुधीर अपने रास्ते चल पड़ा, वह अपने रास्ते।

ताजा दूध से बनी गर्म चाय की चुस्कियाँ सुधीर ले रहा था कि श्रीमतीजी ने धीमे स्वर में पूछा 'क्या आज दो ही बोतलें मिलीं ?

"दो मिलीं, यही बहुत समझो। देर हो जाती तो खाली हाथ लौटना पड़ता।

सुधीर समाचार- पत्र पढ़ने का बहाना बना रहा था और गुलाबी प्रभात की याद उसके मन में गूँज रही थी।



व्यामोह

- कमल कुमार -

आज के सवेरे से ही शोर मचा था-बुढ़िया कहाँ गई ? सारे बरामदों में बैंचों पर आसपास के सभी कमरों में ढूँढ़ मची थी बुढ़िया को देखा ? नहीं वहाँ ? ना। उधर ? कहीं भी नहीं है। सब जगह देख लिया है।

बेड नम्बर तीन का राधेश्याम नीचे जाकर बाहर सड़क तक देख आया था। आते हुए अस्पताल के स्टोर में दवाइयों की दुकान में भी नजर मार आया था। पर कुछ पता नहीं चला। बुढ़िया यूँ भी कहीं आती-जाती नहीं थी। डाक्टर हैरान थे और गुस्सा भी। बुढ़िया को क्या अस्पताल निगल गया ? देखो ठीक तरह से कहीं तो जरूर होगी।

बुढ़िया रात भर सूखे पत्ते सी थरथराती रही थी। बिस्तर पर बेसुध लेटे बेटे को दूर से देखती आँखों आँखों में पलोसती। पानी से निकली मछली सी फड़फड़ा रही थी। कभी बिस्तर के सिरहाने जाती कभी पैताने कभी दूर से और कभी पास जाकर उसे देखती जाती थी। उसकी बाँहों में मुँह में नाक में नलियाँ ही नलियाँ लगी थीं। तरह तरह की मशीनों और डाक्टरों से घिरा वह सबसे बेखबर था। डॉक्टर ने उसे बाहर भेज दिया था जाओ माई बाहर बेंच पर थोड़ा सुस्ता लो हम लोग अभी हैं इसके पास। पर बुढ़िया बाहर बरामदे में भी कमरे की दीवार से चिपकी खड़ी रही थी। मुझे सामने पाकर फूट पड़ी थी ...अब किया होएगा ? जैसे रुका हुआ तूफान हो। वह मेरे कन्धे पर सिर रखकर नन्हीं बच्ची सी फूट फूटकर रो रही थी। मुँह में उसने धोती ठूँस ली थी। आवाज रोक ली थी। हिचकियों से उसकी दुबली देह दहल रही थी।

धीरज रखो माँजी ! भगवान पर भरोसा रखो। सब ठीक हो जाएगा। डाक्टर पूरी कोशिश कर रहे हैं। आप भी थोड़ी देर सो जाओ।

नींद ना आवेगी।

नींद तो नहीं आएगी तो भी आप थोड़ा सा लेट लो। शायद आँख झपक जाए। अगर आप भी बीमार पड़ गई तो इसकी देखभाल कौन करेगा? बुढ़िया मेरे कन्धे से अलग हो गई और दीवार के साथ उकडूँ दुबक-सी गई।

अजीब बात है। बुढ़िया कहाँ जा सकती है ? मरीज नर्सें और वार्डबाय सब जगह देख

जाए थे। पता-ठिकाना ढूँढवाकर टेलिफोन भी किए थे। रिश्तेदार, जिन्हें भी अस्पताल की खबर मिलती धीरे धीरे आते जा रहे थे पर बुढ़िया का कुछ पता नहीं था।

रात का तूफान थम गया था। वह अब ठीक था होश मे था औरओ अम्मा- ऽ-ओ अम्मा ऽ ऽ पानी देना। पुकार रहा था। नर्स ने उसे पानी दिया तो वह तुनका था ओ अम्मा - तू दे ना री पानी ऽ। कहाँ गई री - ऽ अम्मा - ऽ।'

नर्स ने सवेरे के राउंड के डाक्टरो की टोली की तरफ देखा। डाक्टर ने अर्थ भरा संकेत किया और कड़ी आवाज मे बोला पानी पियो ऽ और यह दवाई भी!"

नर्स ने उसके सिर के नीचे हथेली रखकर उसे थोड़ा उठाया और चिड़िया के बच्चे-से खुले उसके मुँह मे दूसरी हथेली पर रक्खी गोली चुआ दी। पानी की दो घूँटों से ही वह उसे निगल गया था। नर्स ने पुन उसे लिटा दिया था। सवेरे के राउंड पर डाक्टरों की टोली आगे बढ़ गई थी। उसकी आवाज पहले से ज्यादा पुख्ता थी —'अम्मा - — ओ अम्मा - ऽऽ अम्मा री ऽ ऽ सुनै क्यो न तू ऽ ऽ !

वह बेड नम्बर सात था। पिछले दस महीने से वह बैड नम्बर सात ही था। इसलिए वह परमानेंट सात नम्बर था। उसे डाक्टर वार्डबाय उस कमरे के और आसपास के कमरों के नए आनेवाले और पुराने जानेवाले मरीज सभी उस नम्बर से परिचित थे। वही नम्बर बुढ़िया का भी था। दिन भर वह दीवार के सहारे घुटनो पर हाथ रक्खे चुप बैठी रहती। कुछ सोचती सी । या फिर उसकी आवाज के सहारे यत्रवत क्रियारत रहती। वह उसकी आवाज की लय से उठती-बैठती थी। दिन भर उसके छुटपुट कामो को पूरा करती। रात मे वही उसके पलँग के नीचे टट्टी पेशाब थूक के बर्तन खिसकाकर आधी धोती नीचे बिछाकर और आधी का गोला बनाकर सिर के नीचे रखकर सो जाती थी। सोते मे भी जागती सी। ओ अम्मा — अम्मा - ऽऽ सरी ऽ -- पानी दे - ऽ !' कभी सचमुच की प्यास और कभी आदतन उसकी टेर पर वह उठती पीतल के लोटे से कटोरी मे पानी उँडेलती और उसके मुँह से लगा देती। रात मे कई-कई बार वह पानी माँगता था — या पेशाब जाता था। उसके उठते-उठते ही कई बार उसका पजामा भीग जाता तो वह उसकी जान की आफत खड़ी कर देता। वह चादर ढककर उसका गीला पजामा खिसका देती तौलिया गीला करके उसकी टाँग पोंछती और सुखाती — फिर दूसरा धुला पजामा पहना देती और गीला पजामा उठाकरगुसलखाने मे चली जाती। एक धुरी थी जिस पर बुढ़िया घूम रही थी। जैसे और कुछ भी उसके लिए मायने नहीं रखता था।

बुढिया पिछले दो सालों से यहीं थी। शुरू- शुरू मे महीने दो महीने मे एक दो बार जाँच के लिए आती रही थी। एक दो दिन टिककर अपने गाँव लौट जाती। पर पिछले दस महीने से तो लगातार यहीं पर है। जहाँ एक दिन भी गुजारना दूभर था वही अस्पताल अब तो मुझे घर जैसा दीखे है। वह कहा करती थी। शुरू- शुरू मे रिश्तेदार आ भी जाया करते थे - अब कौन आवै। सबकी अपनी गिरहस्ती। उसी मा लगै होवै सब। यही दिल्ली मा दूर के रिश्ते की बहन है मेरी - बस उसी का आसरा है जो अब तक निभा कर री है।

बुढिया ने बताया ' दस बरस का था काका जब इसका बाप छोडकर चला गया [illegible] बिग्गा जमीन थी इसके बाप की। सब भाइयो ने हडप ली। इब मुझे कौन पूछ्‌ [illegible] अपना नही इस ससार मे — सभी मतलबी है। इसी के भरोसे जी रही [illegible] किस्मत — मेरी —। किसी दूसरे का किया दोस। दो साल हुए इसनू [illegible] जब बिल्कुल अँधेरा ही छा गया तद बताया। पैले तो साल- भर [illegible] डाग्दरो ने मनाह कर दिया - कुछ नही हो सकदा ले जाओ [illegible] दुबारा भरती कर लिया। अब तो रोज जाँच होवै। [illegible] । पर कुछ न बतावै डाग्दर —।

इसी के वास्ते टिकी हूँ हियाँ। न पूजा न पाठ [illegible] मैने कौन-सा इसकी कमाई खानी है। मेरा [illegible] करवूँ —इसकी ममता है। इसके मोह ने [illegible]

उसके सिर पर और आँखो पर पट्टी [illegible] मे था।

'अम्मा S, यहाँ देख ना [illegible]

हाँ बोल।

कर दिये। चिलमची उठाकर कुल्ला करा दिया। गीले तौलिये से उसका मुँह पोंछकर साफ कर दिया। शीशी से थोड़ा तेल लेकर उसके हाथों और मुँह पर चुपड़ दिया। बीस-बाईस बरस का वह गबरू जवान नन्हे दूध-मुँहे बच्चे-सा निश्चिन्त लेटा रहा।

उस दिन वह ठीक था। सवेरे से ही बार-बार टेर रहा था- अम्मा - -- ओ अम्मा - ऽऽ बुला डाग्दर को।

आएगा अबी।'

नहीं तू बुला ला।

बुढ़िया बाहर गई - स्वागत कक्ष तक -- । नर्स की ठंडी मुद्रा से डरी-सी लौट आई।

'आवै है डाग्दर।

नहीं तू बुला उसे अबी।

हाँ हाँ आएगा डाग्दर। तू पैले बोल न किया चाहिए।

मुझे भूख लगी है।'

तो फेर तू दूद पी ले -- न तो थोड़ा दलिया खाले।"

नहीं - आज परौंठा खाऊँगा।

बुढ़िया उबलती खिचड़ी-सी खिदकी थी जब अन्न खाने को जी चाहे तो समजो के बीमार चंगा हो गया। उसके चेहरे पर हँसी का उजास छा गया था।

दुपहर में घर से उसने परौंठे मँगवाए थे। खा तो वह नहीं ही सका था। पर लालच था दो ग्रास लेकर ही ढक्कन सरका दिया था रख ले - बाद में खाऊँगा -- ।

साथ वाले कमरे में चीख-पुकार तेज हो गई थी। बैड नम्बर तेरह था। डाक्टर ने कलाई पकड़ी। छूते ही उसके चेहरे की रंगत उड़-सी गई। माथे पर चिंता की रेखाएँ खिंच गईं। उसने नाक के नीचे हथेली रखकर साँस की परीक्षा की। छाती पर स्टैथोस्कोप की डिबिया को कई बार घुमाया।

एक्सपायर्ड! नर्स ड्यूटी रूम की ओर लपकी। वार्डबाय को दौड़ाया आफिस से एक स्लिप लेते आना बैड नम्बर तेरह तो गया ।

उसके रोने वाले सगे सम्बन्धियों को डाँटा जा रहा था हल्ला नहीं करना यहाँ--। बाहर जाकर रोना-पीटना--। चोप्प -- सब चोप्प--। ऐ छाती मत पीट यहाँ--। और मरीजों पर

बुरा असर पडता है। चलो ९ निकलो बाहर सभी—ने सिर्फ संगेवाला लोग रहेंगे यहाँ—। आसपास के कमरों मे सन्नाटा छा गया था। सभी सहमे-सहमे फुसफुसा रहे थे —आज सवेरे तक तो ठीक ही था। दुपहर को नर्स ने सुई भी लगायी थी— तब तक तो ऐसी बात नही थी—। एकदम क्या हो गया—।

बुढिया चुप—दीवार के साथ सटी खडी थी। सबसे ज्यादा डरी-सी। धीरे धीरे जब साथ के कमरे की सारी आवाजे गलियारे से होती हुई हस्पताल से बाहर चली गई तो उसने एक लम्बी साँस भरी थी- ऐ रामफेरी लीला । तू ही दाता ९ सबका रच्छक। फिर वह बेड नम्बर सात के नीचे बेडुपैन खिसकाकर धोती बिछाकर गुडी-मुडी-सी होकर लेट गई थी।

बुढिया पारे-सी थरथरा रही थी। बेड नम्बर सात की आवाज खामोश हो गई थी। अम्मा — ओ अम्मा - ऽ ' के बोल उसके होठों पर सूख गये थे। उसकी नाक पर आक्सीजन की टोपी रखी हुई थी। वह जोर जोर से खर्राटो मे साँस ले रहा था। उसके नाक मुँह और बाहो मे नालियाँ लगी थीं। उसकी बाँह पकडे बुढिया बैठी थी। बाँह मे लगी नालियों को देखती कभी स्टैड पर उल्टी लटकी बोतलो को तो कभी हैरत से डाक्टरों और नर्सों के चेहरो को पढने की कोशिश करती।

बाँह सीधी रखा" नर्स ने झिडक दिया था। एक डाक्टर भीतर आता था तो दूसरा बाहर जाता था। शाम से ताँता लगा था। कभी जूनियर डाक्टर कभी सीनियर कभी एक्सपर्ट कभी ट्रेनी, कभी हर्टी। उसके इर्दगिर्द इकट्ठा हो जाते थे। उसकी एक-एक चीज को डाक्टरी यत्रो से टोह रहे थे। धीमी तो कभी तेज आवाजो मे उसे घेरे बहसते रहे थे। हस्पताली पर्चियों पर लिखी जाँच रिपोर्टों में उलझ रहे थे। उसका थूक पेशाब टट्टी मवाद- सब उनके लिए कितना कीमती था। बुढिया परेशान उनके चेहरे को देखती कभी उनके हाथो की क्रियाओं को ताकती। उसकी सिर्फ जुबान खामोश थी। बाकी उसके शरीर का रोआँ रोआँ पूछ रहा था,'इब किया होएगा डाक्टर साँब?

शाम से ही ट्रालियों पर तरह-तरह की मशीने आ रही थीं। शुभा ने उसे बताया था बडे गर्व से, ' हमारे पास लेटस्ट इक्वीपमेंट है। हम किसी को इतनी आसानी से मरने नही देते।

लेकिन तुम इसकी हालत देख रही हो। अगर तुम लोग उसे बचा भी लेते हो— तो भी क्या होगा। यह जीना कोई जीना है?

"ओफ! हम डाक्टर है। हमारा काम बीमार को मौत के मुँह मे न जाने देना है। उसे जैसे भी हो जीवित रखना है।

"तुम जीवित रहने का और जीने का अन्तर समझती हो?

डाक्टरो की टोली दरवाजे पर रुकी। दोपहर बाद आऊँगी— राउँड पर हूँ। और सुनो लगता है तुम्हारा इतजाम प्राइवेट वार्ड मे ही करना पडेगा। यहाँ रहोगी तो खुद तो परेशान होगी ही —मुझे भी जीवित रहने और जीने का अर्थ समझाती रहोगी।' वह तेज कदमों से डाक्टरो की टोली के साथ जा मिली थी। और वहीं से हाथ हिलाकर वेव कर रही थी।

उसे अब टेढ़ा लिटा दिया गया था। दो सफेद कोट उसे थामे थे तीसरे सफेद कोट से निकले हाथ इजेक्शन की सुई से उसकी रीढ़ की हड्डी से मवाद निकालकर छोटी बोतलो मे भरकर ट्रे म रखते जा रहे थे। इसको इमीजिएट लिखकर अभी लैब मे भिजवा दो।'नर्स ट्रे लेकर चली गई थी। गदे नालो से जैसे पम्पिंग करके रुका हुआ गदा पानी निकाला जाता है। ये उसके भीतर नालियाँ डालकर छाती से मवाद निकाल रहे थे। उसके मुँह मे प्लास्टिक की नाली से मटमैला कीच-सा द्रव मेज पर रक्खी बोतल में भरता जा रहा था। धीरे धीरे उसके गले की डरावनी घरघराहट बद हो गई थी। दवाइयो के असर से वह बेसुध सा लेटा था।

बुढ़िया डावाँडोल थी। आप कुछ खा लो माँजी। दुपहर भी आपने कुछ नहीं खाया।'

भूख ही नही है—।'

"भूख कैसे लगेगी, आप इतनी तो चिता करती है। चलो फिर चाय ले लो थोडी-सी, है मेरी थरमस मे। अभी ता गर्म भी होगी।

'न—मन ही नही है बिटिया।'

तो भी थोडी-सी ले लो माँजी। इस तरह अगर आप बीमार पड गई तो इसकी देखभाल कौन करेगा?

बुढ़िया फफक पडी। ऊपर से शात-सी दिखनेवाली बुढ़िया समुद्र से उठते ज्वारभाटे-सी उमडी पड रही थी बिस्तर के पताये से डाक्टरी जाँच के कागजों का पुलन्दा मेरे सामने रख दिया था "जरा-सा देख तो बिटिया, इसमें किया लिखा होवे।

इस पुलन्दे में डाक्टरी जाँच की पुरानी पर्ची-पर्चियों से लेकर इन दिनों की ताजा जाँच के कागज थे। उसके समझने-समझाने लायक उसमे कुछ नहीं था।

"बताऊँगी पढकर। अभी आप रक्खो यहीं। डाक्टर देखेंगे तो गुस्सा करेंगे।"शुभा ने बताया था ब्रेन कैंसर है बचेगा तो है नहीं। पर जब तक चलता है चला रहे है। कैंसर के [illegible] अधर

से इसकी आँखों की रोशनी चली गई है। यह केस ब्रेन कैंसर के विशेष अध्ययन के लिए बड़ा महत्वपूर्ण है। कुछ प्रयोग कर रहे है, इसीलिए डा सहगल विदेश जाना स्थगित करके इस केस की स्टडी में लगे हुए है।'

रात में उसकी हालत बहुत बिगड गई थी। लगता था, अब गया कि अब गया। डाक्टरों और नर्सों का रेला-पेला फिर शुरू हो गया था। नर्स ने मेरे और उसके बिस्तर के बीच मे स्क्रीन लगवा दी थी। जब भी किसी बीमार की हालत गभीर हो जाती तो अस्पताल के वातावरण में एक भयकर चुप्पी छा जाती। हवा मे एक डर-सा घुल जाता। आसपास के बीमारों और उनके सबंधियो के चेहरो पर कालिख-सी पुती लगती है। ट्रालियो पर लुढकती आती मशीनों की, नर्सों के हाथो मे ट्रे में रखे औजारों की खडखडाहट और दवाइयो की गन्ध रात के सन्नाटे में भय घोल रही थी। आसपास के कमरों में भी कै घबराहट-सी फैल गई थी। बैड नम्बर सात की, गलियारे में खुलनेवाली खिडकी से थोडी-थोडी देर बाद कोई सिर उचकता, उत्सुक आँखों से देखता और ओझल हो जाता था।

मै जो पिन चुभने से निकले खून को देखकर घबरा जाती थी, सब कुछ देख रही थी। मेरे भीतर कुछ नहीं हो रहा था। बुढिया की फडफडाहट भी अदर नहीं पहुँच रही थी। मेरा खून भी जैसे उस माहौल मे सर्द हो गया था। सफेद कोटो और रग-बिरगी पतलूनों की भीड मे जैसे अदृश्य रूप मे भी शामिल हो गई थी। वह गिनीपिग की तरह था। उस पर तरह-तरह के प्रयोग किए जा रहे थे। आँख खुली तो कमरे में हडकम्प मचा था। उसे ध्यान आया वह एक-दो घंटे की नींद भी ले चुकी है। बुढिया को डाक्टरों ने उसके पास से हटा दिया था। डाक्टरो के आसपास होने से नर्से भी चुस्त नजर आ रही थीं। हमेशा ऊँघते रहनेवाली नर्स भी तेज चाल से अन्दर-बाहर आ-जा रही थी। बडा डाक्टर हर घंटे दो घंटे बाद मरीज के पास आता था। वहाँ बैठे डाक्टरों को कुछ निर्देश देता और चला जाता। कमरे में नर्सो-डाक्टरा की गहमागहमी मची थी। डाक्टर केस के विभिन्न पहलुओं पर बडे ही अडियल तरीके से अपने-अपने नतीजो पर एक-दूसरे को लाना चाह रहे थे। यहाँ मरीज से भी ज्यादा मामला डाक्टरी हारजीत पर टिका लग रहा था। मरीज बीच में से जैसे गायब हो गया था। तो भी उन डाक्टरो का अथक प्रयास सराहनीय था। जिन्दगी के आखिरी सिरे को पकडे वे उसकी आखिरी साँस को आखिरी नही मानना चाहते थे और सवेरा हो गया था। इतनी देर तक तो मै वैसे भी नहीं सोती थी। सवेरे की चायवाला आकर जा चुका था। बाहर शोर मचा था 'बुढिया कहाँ गई? कहीं भी नहीं दिखाई दे रही। सभी जगह तो ढूँढ आये है।' रात-भर सुनसान आँखों से खडी देखती रही थी बुढिया बैड नम्बर सात को। कहाँ जाएगी वह?

पूरे चौंतीस घंटे बाद उसकी आवाज फिर सुनाई दे रही थी अम्मा - ओ अम्मा -ऽ अम्मा री - ऽ – अम्मा- ऽ ऽ सुनै क्यो न री तू— ?'



कैपवाला आदमी

- पद्मजा घोरपडे -

मृत्यु की विवशता सब तरफ फैली थी। जिंदगी मानो पथराकर आखरी साँस ले रही थी। पहाडो से घिरा हुआ वह 'हिल स्टेशन' मृत्यु का चेहरा बन गया था- खास तौर से मुनी के लिए । एक छोटे-से घर मे नानी माँ मृत्यु की चहल कदमी देखने मे इतनी खो गई थी कि मुनी का भी उन्हे ख्याल न रहा था। नानी माँ पिछले सात दिनो से बेहोश थी। लगता था ममता हमेशा के लिए अपनी यादगार खो देगी। नानी माँ के रूप में वर्षो से साकार होता रहा प्यार अब मृत्यु की कब्र मे सोने की तैयारी मे जुट गया था। और वह भी अचानक ! किसी के कानों खबर तक नही पहुँच पायी थी।

छोटी मुनी इस आतंक भरी उदासी को पहली बार महसूस कर रही थी। अत अपने आप इस सारे माहौल मे वह अजनबी बनी 'आउट-साइडर' उसने ऐसा खमोश भय इसके पहले कभी महसूस ही किया न था। सभी खामोश थे। मुन्नी इस खामोशी पर झुँझलाना चाहती लेकिन सबके चेहरे देखते ही वह सहम जाती। मुनी के प्रश्न पूछने पर हर कोई मुँह फेर लेता या अजुरि मे छुपा लेता अपना चेहरा ! मुनी को इस अजीब माहौल मे घुटन-सी लगती। वह कहीं दूर जाकर बैठना चाहती लेकिन नानी को छोडकर कही जाने की कल्पना मात्र से वह अजीब तरह से डर जाती। वह स्कूल भी नही जाना चाहती लेकिन उसे जबरदस्ती स्कूल भेजा जाता। स्कूल का बस्ता लेकर सीढियाँ लाँघते ही मुनी फिर डर जाती। पता नही कैसा डर। उसे लगता मेरे स्कूल जाते ही वह 'छिपा हुआ आदमी नानी माँ को उठा ले जाएगा। फिर मुनी नानी माँ का 'उस' आदमी की पकड से छुडा के कैसे लायेगी ? मुन्नी की माँ दरवाजा बद करके मुनी को छोडने के लिए निकल पडती। और मुनी बार- बार पीछे मुडकर खुली खिड़की को देखती। कही वह 'खुली खिडकी में से अदर चला जाये और ? लेकिन वह कौन ? मुनी की समझ मे न आता। स्कूल मे नानी माँ का विचार आते ही वह रूआँसी हो जाती। उसका कहीं मन न लगता। न पढाई मे न खेलने में और न ही अपनी सहेलियो में। स्कूल छूटते ही मुनी घर की ओर भागती। यह क्या ? माँ अभी तक ऑफिस से लौटी नहीं? वह चुपके से 'ती हॉल' मे से अदर के अँधेरे मे झाँकती। बिस्तर पर लेटा हुआ नानी का साया उसे अजीब तरह से सुन्न कर देता। चलो! नानी माँ तो बिस्तर पर है। याने वह 'अदर नहीं गया। माँ के दरवाजा खोलते ही मुनी बेतहाशा अदर दौडती। पर नानी माँ को देखकर

महमी-सी ठिठक कर खडी रह जाती। मानो किसी ने उसके पैर धसकर जमीं से बांध दिए हो। कहीं वह तो नहीं, जो मुन्नी को भी नानीमाँ के पास जाने नहीं देता है। अब मुन्नी को जाने क्यो विश्वास-सा हो गया था वह'सबके होते हुए खास तौर से मुन्नी के होते हुए नानी माँ को कहीं भी नही ले जाएगा। और अचानक मुनी के मन मे विचार कौंधता कि फिर ये सारे लोग नानी माँ को अकेला छोडकर जाते क्यो है ? कम से कम मुन्नी को तो हमेशा उसके पास बिठाना चाहिए। और अचानक मुन्नी की आँखो मे एक तसबीर उभरने लगती। उस काले-काले जादूई कैप पहने हुए अज्ञात अदेखे आदमी की।मुन्नी का लगता वह जादूई कैप पहनकर ही सबको देखता है। खासतौर से नानी माँ का। लेकिन खुद किसी को दीखता नही। दिखाई भी कैसे दे ? मुनी को मालूम था जादूई कैप पहनने से ही वह किसी को दिखाई नहीं देता। काश ! उस'का वह जादूई कैप ही मुनी के हाथ लग जाता। तब तो मुनी'उसे'धक्के दे-देकर घर से निकाल देगी। खाना खाते हुए भी मुनी सोचती वह नानी माँ को खाने क्यो नहीं देता ? क्या नानी माँ को भूख नही लगती?तो क्या नानी माँ भी उस'जादूई कै प वाले आदमी से डरती है ? इसीलिए चुपचाप आँखे बद करके लेटी है?लेकिन झट से मुनी इस विचार को झटक देती। सोचती ! हुँ!नानी माँ क्यो डरने लगी उस आदमी से। नानी माँ से तो सभी डरते है।'वह भी डरता होगा। तो और मुनी झुँझला उठती। चीजे उठाकर फेकना शुरू कर देती। उसे खास तौर से माँ पर गुस्सा आता। आखिर माँ'उस'कैपवाले से बेखबर क्यो है ?कहीं भी खिडकी खुली छोडकर चली जाती है। नानी माँ को अकेली छोडकर चली जाती है। मुनी का लगता किसी को नानी माँ की फिक्र ही नहीं है। और तो और मुनी से भी कोई पूछता नहीं है।

रात होते ही माँ मुनी को जबरदस्ती अलग कमरे में सुलाने ले चलती। मुन्नी की उनींदी आँखे तब भी चुपके से इधर-उधर देख लेतीं कहींवह'अपना कैप तो उतार नही देगा ?और नानी माँ को लेकिन यह विचार अधूरा ही रह जाता और नींद मुनी पर काबू पा लेती। मुनी रात मे सपने देखती। कभी वह देखती कि वह सोने का बहाना बना के'उस कैपवाले पर नजर रख रही है । कभी देखती कि मुन्नी ने'कैपवाले को धक्के मार-मारकर बाहर निकाल दिया है और उसका वह जादुई कैप छीन लिया है। तो कभी सपने में मुन्नी देखती कि'कैपवाला'गिडगिडाकर मुनी से कह रहा है मुनी मै फिर कभी यहाँ नहीं आऊँगा लेकिन मेरा वह कैप तो दे दो।

सुबह नींद खुलते ही मुन्नी कनखियो से नानी माँ के बिस्तर की ओर देखती और वहाँ नानी माँ को लेटा हुआ देखकर अजीब खुशी महसूस करती। स्कूल जाते समय सोचती आज

तो मेरे स्कूल से लौटने पर नानी माँ मुझे गोदी मे लेकर प्यार करेगी। मुझे दूध बिस्कुट खिलायेगी। स्कूल की बाते पूछेगी। और अचानक मुन्नी खीज उठती यही नानी माँ जब मै नहीं बोलती थी तब कितना-कितना मनाती थी। 'मुन्नी बेटा ऐसे रुठो मत' नानी माँ से कुछ तो बोलो' लेकिन अब खुद कहाँ बोलती है। हमारी बाते सुनती भी नही। मुन्नी को लगा जोर से चीख पडूँ, 'नानी माँ, कुछ तो बोलो। लेकिन उतने मे वह 'कैपवाला कौंध गया और मुन्नी जड कदमो से स्कूल के रास्ते पर आ गयी।

स्कूल से मुन्नी सोचती, माँ से नहीं, कम से कम डॉक्टर साहब से जरूर कहना चाहिए डॉक्टर साहब नानी माँ को दवाइयो की जरूरत नही है। आप उस 'कैपवाले को अपने काले-काले बैग मे ले जाइए तो नानी माँ अच्छी होगी। मुन्नी रोज तय करती आज शाम को डॉक्टर साहब से जरूर मै यह कहूँगी। और जब डॉक्टर को देखती तो उनका वह ऐनक से बोझिल बना चेहरा देखकर सहम जाती। उसे लगता यह बात सुनकर डॉक्टर साहब के पीछे से घूरकर मुन्नी को देखेगे और मुन्नी उनकी उस नजर को सह नहीं पायेगी।

और अचानक उस रात सिसकने की आवाजों के कारण मुन्नी की नींद खुल गई। देखा तो माँ भी बिस्तर पर नही है। नानी माँ के कमरे मे से मुन्नी ने माँ की रोने की आवाज सुनी। मुन्नी ने सोचा चलो अच्छा हुआ। शायद माँ ने 'उस' कैपवाले को देखा होगा। तभी तो डर के मारे रो रही है। खैर अब माँ 'कैपवाले से बेखबर नहीं है। और उस रात मुन्नी चैन से सो गयी। —— सुबह देर तक सोती रही। मानो इतने दिनों से मन पर बना रहा बोझ अचानक उतर गया हो।

देर सुबह मुन्नी की आँख खुली- लोगो को शोरोगुल से। पडोस के सारे लोग नानी माँ के कमरे मे क्या कर रहे है ?और सब के सब रो रहे है। माँ भी रो रही है' मुन्नी की समझ में नहीं आया कि कैपवाले' को पकडने के बाद भी लोग क्यो रो रहे है? तो क्या वह 'इतना डरावना है ? इतने मे माँ ने आकर मुन्नी को गोदी में उठा लिया। मुन्नी तुम्हारी नानी माँ हमे छोडकर चली गयी । माँ के इन शब्दों से मुन्नी चकरा गई। 'लो' यह क्या पहेली' नानी माँ तो बिस्तर पर लेटी है जैसे कि पिछले सात दिनो से लेटी रही है। और माँ तो कह रही है नानी माँ और यह क्या ? ये लोग नानी माँ को उठाकर आँगन में क्यो ले के जा रहे है ?मुन्नी ने सोचा इतने बडे होकर भी लोगों को मालूम नहीं कि बीमार व्यक्ति को कैसे उठाते है ?कम से कम 'स्ट्रेचर' तो लाना चाहिए। और हाँ डॉक्टर साहब कहाँ है' ?उनके बगैर ये लोग नानी माँ को देखो तो कैसे उठा रहे है छी ! कम से कम डॉक्टर या सिस्टर को तो बुलाना चाहिए। और ये लो ! आँगन में नानी

माँ को नहला रहे है। यह क्या तरीका हुआ। बाथरूम में क्यो नहीं ले गये उसे ?और डॉक्टर साहब की आवाज से मुन्नी को लगा, उसके दिमाग में सारी बाते गोलमाल बनकर उसकी सारी सोच को गलत बना रही है। डॉक्टर साहब कह रहे थे 'इतनी कोशिशो के बावजूद मै नानी माँ को बचा नही पाया   पास-पडोस वाले माँ से कह रहे थे——'बहन तुमने रात भर जाग कर नानी माँ की सेवा की लेकिन नानी माँ   नानी माँ ने मुन्नी का भी ख्याल नहीं किया   लो!मुन्नी अब इन सारे वाक्यो से क्या समझे ?अरे! आसान बात थी। इतनी कोशिशें कीं मगर'कैपवाले'को पकडने का विचार किसी ने नहीं किया। और — वह पडोसन क्या कह रही थी   माँ ने रात-भर जागकर   ' और फिर भी माँ को'कैपवाला'दिखाई नहीं दिया?कम से कम मुन्नी को तो माँ अपने साथ बिठा लेती वहाँ। मुन्नी की नन्हीं- नन्ही आँखो को वह'कैपवाला' जरूर दिखता। कम से कम मुन्नी की नन्हीं-सी उँगलियों की पकड में तो आता। लेकिन ये बडे लोग न जाने अपने आप को क्या समझते है ? हम जैसे छोटे लोगो से ना कुछ पूछते है और ना कुछ हमारी सुनते है ?मुन्नी को लगा अब कैपवाले'के बारे मे माँ से कह ही दिया जाए। बडी आयी अपने आप को होशियार समझनेवाली। लेकिन इस बार तो मुन्नी को जो मालूम है वह भी उसे कहाँ मालूम है ?यह विचार कौंधते ही मुन्नी झट से पूछ बैठी तो क्या माँ, रात-भर जागते रहकर भी तुमने उस 'कैपवाले'को पकडा नही ?तुम्हीं ने तो मुझे कहानी सुनाई थी कि ऐसा कोई कैपवाला'आकर ले जाता है प्यारे लोगो को   लेकिन तुमने उसे'रोका क्यो नहीं ?और कम से कम मुझे तो बुला लेती और एक क्षण मे माँ के आँसू रुक गए। वह फटी आँखो से मुन्नी को देखने लगी। तो क्या मुन्नी तुम उस कैपवाले को देख रही थी ?और   और तु म डरी नही ? तुमने मुझे बताया क्यो नहीं ?

लो ! और एक पहेली 'इसका मतलब माँ नेंउसे'देखा ही नहीं। तो क्या खाक पकडती 'उसे'। और मुझसे ही कह रही है डर नही लगा तुम्हे ? मुन्नी परेशान हुई। सोचने लगी अब यदिवह'आयेगा तो मुन्नी किसी की परवाह नहीं करेगी। किसी से कहेगी भी नही। खुद ही'उस'पर नजर रखेगी। लेकिन यह विचार आते ही मुन्नी सिहर उठी। बेहद डर गयी। उसके मुँह से चीख ही फूटी——नही नहीं ! उसे'यहाँ अब कभी नहीं आना चाहिए। और न जाने किस अज्ञात आशंका से उसने अपनी नन्हीं-सी बाँहो से माँ को ऐसे कसकर गले लगाया मानो वह अपनी माँ को हमेशा हमेशा के लिए'उस'कैपवाले के साये से बचाना चाहती हो।



अपने पराए

- पोपटी हीरानन्दाणी -

मैने अपनी "विल" बदल डाली ।

अपनी सारी सम्पत्ति मैने बीखू, उसकी पत्नी सकू और उनके दो बच्चो चुन्नी और मुन्नू के नाम कर दी ।

हाँ, मेरे दो बेटों को जरूर गुस्सा आयेगा, परन्तु मै उस वक्त दुनिया से जा चुका होऊँगा।

बात यह थी कि जब से मेरी पत्नी ——— श्यामी का देहान्त हो गया था मै अकेला हो गया था । बुढ़ापा तो वैसे ही एक बुरी बीमारी है उस पर अकेलापन तो जैसे एक भूत ही है । बुढ़ापे में रात को नींद तो आती नहीं हाँ घर की दीवारे जैसे नजदीक आकर गला घोंटने लगती है । दिन में भी अकेलेपन का भूत जैसे निगल ही लेता है ।

मेरे अपने बेटे है । दो-दो बहूएँ है । चार-चार पोते-पोतियाँ है, परन्तु क्या किया जाए ? पहले बेटी ब्याह कर अलग घर बसाती थी अब बेटे भी विवाह के बाद अलग हो जाते है। बहुओं को तो सास - ससुर नहीं भाते परन्तु बेटों को भी आज-कल अपने माँ-बाप अच्छे नहीं लगते। मेरे छोटे बेटे को कुत्ते अच्छे लगते । उसने दो कुत्ते पाल रखे है । पर उसके पास मेरे लिए जगह नहीं है । बड़ा बेटा तो अफसर है । उसके बड़े बगले के किसी कोने में मै पड़ा रहूँ, तो बँगले की शोभा शायद कम पड़ जाय । इसलिए मै अपने मकान में ही रहता हूँ । पुराना रसोइया है जो पहले झाडू-सफाई किया करता था । बाद मे मेरी पत्नी के स्वर्गवास हो जाने पर उसे हाथ-पैर जोड़कर अपने लिए कुछ पकाने को कहा । वही दो बार कच्चा-फीका कुछ पकाकर जाता है । चाय वगैरह मै खुद बना लेता हूँ ।

दो-चार दिन के बाद फोन कर लेते है । अपनी पत्नियो को बुलाकर उन्हे भी कह देते है कि पिताजी से पूछो कुछ चाहिए ? वे भी शिष्टाचार से मेरी तबियत के बारे मे पूछताछ कर पूछ लेती है पिताजी कुछ चाहिए ?किसी खाने-पीने की चीज पर मन करता हो तो बता दीजिए। हम ड्राईवर के हाथ भेज देगे।' पोते भी आते है मेरे पास कभी-कभी कैडबरीज चॉकलेट ले जाते है और मेरे गाल पर एक पप्पी दे जाते है ।

आप कहेगे कि अब और क्या चाहिये आप को ? लोग कहते है कि मै फलों-फूलो से लदा एक पेड़-सा हूँ परन्तु जहाँ आग लगती है वहाँ तो गर्मी होती है न ?

पडोस में सुनीता नाम की एक लडकी रहती है। हँसमुख फुर्तीली और सुन्दर। वह मुझ से हँस-हँसकर बोलती थी। बस पडोसवालों मे से कुछ लोगों ने कहना शुरू किया कि यह बूढा खूसट अच्छा आदमी नही है। बिल्डिग में नौजवान भी है। परन्तु बम्बई जैसे शहर मे एक बूढे से हैलो कहने की फुर्सत भी किस युवक को है ? मेरे जैसे एक दो व्यक्ति है परन्तु वे मोहवश घर के लिए सब्जी-मच्छी लाने मे ही व्यस्त रहते थे।

एक दिन अपने दोस्त से मै ने कहा— मै अकेला रह नहीं सकता। वह हँसने लगा - 'क्यो ?डरता है ?अरे जवान औरत थोडे ही हो ?बूढे को कोई नहीं खाता !

मैने अपने चचेरे भाई से एक दिन कहा - तू अकेला ही है। दिन मे कामकाज के लिए चला जाता है तू, रात को मेरे यहाँ आ जा। गपशप करके सो जायेगे। वह बोला —- और आजकल सभी अकेले है। बेटा अमेरिका में बेटी ब्याह कर हागकाग मे। सभी का यह हाल है। मै आ जाऊँ। पर एक- दो दिन की बात थोडे ही है यह।'

मुझे बुखार हुआ। मैने बडे बेटे को फोन किया। उसने कहा शाम को आफिस से लौटते समय डाक्टर से दवाई लेकर आ जाऊँगा। छोटे ने कहा — विमला को भेज देता हूँ। बच्चो को स्कूल भेजकर आ जाएगी वह।' वह साढे बारह पर आई और साढे तीन बजे चली गयी। 'अब बच्चे स्कूल से लौटेगे इसलिए मुझे घर जाना चाहिए। विमला ने कहा।

दवाई मिली डाक्टर भी आया परन्तु मेरे पास बैठने के लिए कोई नही आया।

तीसरे दिन मै कम्पाउड मे एक घर की देह री पर बैठ गया मूँगफलीवाले से मुँगफली ले ली परन्तु चबा नहीं पा रहा था।

सामने दो बच्चे खेल रहे थे। मैने बुलाकर उन्हे मूँगफली की पुडिया दे दी। उनकी आँखो मे चमक आ गयी। मुझे बडी प्रसन्नता हुई।

अब मै रोज आकर उस देहरी पर बैठता और बच्चो के लिए कुछ न कुछ लाकर उन्हे दे देता।

कुछ दिनो के बाद उनकी माँ दिखाई पडी। वह दो घरो में बर्तन साफ करने के लिए हमारी बिल्डिग में आती थी। जब तक वे काम निबटाती उसके बच्चे खेलते रहते।

मैने सकू से कहा—- मेरे यहाँ भी आकर कपडे धो लिया करो।

अब वे तीनों मेरे घर भी आते। नन्हीं मुन्नी कहती—- 'बाबू जी। आपके सर में तेल डालूँ ? कघी करूँ आपकी ? और वह मेरे पलग पर आ जाती आँख मूँदकर और वह अपने

नन्हें-नन्हे हाथ मेरे पैरों पर घुमाता।

मुझे जैसे परिवार मिल गया अपना। बीखू भी कभी-कभी आकर खिडकियो के शीशे साफ करता, मेरे घडियाल को चाबी देता। मेरे तकियों की खोल बदलता।

मैंने बच्चों को स्कूल मे बिठाया। स्कूल से लौटकर वे मुझे नर्सरी राईमस सुनाते तो मुझे बडा आनन्द आता। मुझे फ्लू हो गया। सकू दूसरे घरों में बर्तन साफ करने नही गई। उसने गर्म पानी मे नमक और काली मिर्ची डालकर मुझे घूँट घूँट कर पीने को कहा।

रात को वह दो बच्चो को लेकर वह मेरे यहाँ आ गई। रात भर जगकर उसने मेरे ललाट पर पट्टी रखी। बच्चे जमीन पर सोए और सकू मेरी आखें लगने पर उनके पास सोने गई।

बीखू के परिवार को मुझसे क्या मिलता था ?बीखू को मै अपनी फटी कमीज दे देता बच्चों को एक-एक स्वेटर और किताबे खरीद देता और सकू को कपडे धोने की तनख्वाह —— बस। बदले मे —— सकू मेरे सामने सर ढक लेती बीखू मेरे पैर छूता और बच्चे मुझे अपनी मुस्कान दे देते। इस परिवार ने उस अकेलेपन के भूत को भगा दिया था और मै बहुत खुश था। बच्चो की किलकारियाँ तोतली बाते छोटे-मोटे जिद्द मुझे अच्छे लगते थे। ऐसा लगता था मानो घर की दीवारे गा उठी हो।

एक दिन बडे बेटे ने फोन किया। चुन्नी-मुन्नू समीप ही खडे थे और आपस में झगड रहे थे। जब बडी बहू ने फोन लिया तो उसने पूछा यह बच्चों की आवाज कहाँ से आ रही है ? मैंने कहा—— 'काम वाली के बच्चे है।'

वह तुरन्त आ धमकी गाडी लेकर पिताजी आपको यह क्या हो गया है ? मैने अगले वर्ष आपको यह मँहगी चद्दर दिवाली को दी थी। देखिये बच्चो ने अपने मैले पैर रखकर कितनी गदी कर डाली है ? इन लोगों को पलँग पर चढने की अनुमति देकर सर पर मत चढाइये।

देवरानियाँ वैसे तो आपस मे प्रेम व्यवहार नही करतीं परन्तु ससुरालवालों को शत्रु समझने में दोनों मिलकर एक हो जाती है।

बडी ने छोटी को बताया तो छोटे बेटे -बिटिया भी आ गए मेरा बेटा पूछने लगा —— इस कपडे धोनेवाली को कितने पैसे देते है आप ?

मै स्तब्ध-सा रह गया। मैने सोचा मेरे बेटो को सिर्फ अपने अधिकार ही याद आते है ?

मेरे अधिकार उनके फर्ज बन जाते है परन्तु उन्हें उन फर्जों की याद बिल्कुल ही नहीं आती?

बीशू या उनके बच्चो को तो यह ख्याल ही नहीं आता कि मेरे पास क्या-क्या है और मेरी सम्पत्ति मे से उनहें कितना मिल सकता है। हालाँकि उनको पैसों की जरूरत मेरे बेटों से ज्यादा है।

बहुत दिनो तक मै सोचता रहा। आखिर मैने फैसला कर ही दिया। 'विल'के बारे में न अपने बेटो को बताया और न बीशू के कान में ही एक शब्द डाला।



सुलगते राह

- चन्दन नेगी -

रिक्शा कोहड बस्ती के लाल क्वार्टरो के पास से भी गुजर गया मैने हैरान-परेशान-सी होकर 'बे नवी' के चेहरे की तरफ देखा, पर उसकी नजरें सडक से दूर कुछ तलाश कर रही थी। बस्ती भी शहर से बहुत दूर है। कई दानी यहाँ तक आकर चीजें कपडे कबल, बिस्तर बाँटते है। मै भी माँ के साथ कई बार यहाँ तक तो आई थी ।

'बे नवी'ने गदे नाले के पुल के पास रिक्शा रूकवाया तो रिक्शा वाले ने पैसे जेब में डालते हुए एक नजर मुझे घूरा और फिर आँखे निकालकर बे नवी'की ओर देखने लगा। गंदे नाले पर लकडी का छोटा सा पुल था। लकडी के फर्श पर बडे-बडे छेद थे। पुल के आस पास की पसलियाँ कई टूटी थी कई गायब। सिर्फदो लबे डडे ही पुल के हाने का अहसास कराते थे।

'बे नवी'उसी टूटे-फूटे पुल के पास खडी हो गई थी । गदे नाले की एक ओर पचास - साठ झुग्गियो की बस्ती । पुल पर खडे होकर ऐसे लगता जैसे फटे-पुराने लीरो, फूस-तिनको के ढेर पर सफेद काले प्लास्टिक के टुकडे ऊँचे-नीचे बिखरे हों । सिरों के साथ सिर कधो के साथ कधे जोडे ये झुग्गियाँ कूडे-करकट का जैसे एक ढेर थीं।

'बे नवी' के काले प्लास्टिकवाली छत की तरफ इशारा किया, 'काली छत पर फूलोवाली कमीज पडी है दिखाई दी ? उस झुग्गी मे से सानी'को बुला ला ।

मैने बे नवी' की तरफ देखा सोनी तो कभी नहीं देखी घर तो कभी नहीं आई ? सोनी यहाँ कैसे ?

"जा बेटा बुला ला । बडी सयानी अच्छी मेरी अक्लवाली बेटी बे नवी ने कहा थपथपा सिर पर हाथ फेर मेरी पीठ को थोडा धकेला था।

मैने डरते-डरते पीछे मुडकर भी देखा । बे नवी मेरी पीठ निहार रही थी । मै एक पगडडी से ढलान उतरती झुग्गियो की तरफ जा रही थी । टागें काँप रही थी दिल धडक रहा था पसीना-पसीना हुई मै रोने जैसी हो रही थी और सोच भी रही थी बे नवी'ने क्यो कहा था कि यहाँ आनें के बारे मे घर मत बताना। मै सलवार के पोचे उठाये दुपटटे का पल्ला सँभाले कीचड के गदे पानी से सँभालती उस झुग्गी की तरफ जा रही थी जहाँ मुझे फूलोंवाली कमीज बिछी अभी भी दिखाई दे रही थी ।

ओफ !इतनी गदगी न निकलने की राह ? पैर रखने की जगह झुग्गियो मे से बाहर बहता गदा पानी और साबुन गदगी मिले गदे पानी के चुबच्चे जहाँ से गुजरते मच्छरो की तहपानी पर उडकर सिर पर मँडराने लगती कुछ हवा मे भी उड जाते और बाकी फिर काली तह बिछाये पानी पर ही बैठ जाते। एक झुग्गी के बाहर एक औरत अधनगी बैठी कपडे धो रही थी और दूसरी अँगोछा- सा लपेटे सिर पर साबुन मल रही थी। फिर भी मै उनके पास खडी हो गई सोनी कहाँ रहती [redacted] ?

कपडे धोती उस औरत के हाथो से थाली छूट गयी। पहले मेरे चेहरे की तरफ देखा फिर मुझे सिर से पैरो तक घूरा। अजीब तरह की उसकी नजर से मुझे और डर लगा। पहले तो वह चुप उदास सी हो गई फिर उसने फूलोवाली कमीज की तरफ इशारा किया और साथ ही सोनी ऐ सोनी हो सोनी री आ बाहर कू'आवाज लगाई।

मैने पुल की तरफ देखा वे नवी को बताने के लिए कि मै ठीक ठिकाने पर पहुँच गई हूँ, पर मुझे वे नवी नही दिखाई दी

सोनी झुग्गी के बाहर निकल आई। बहुत समय बाद देखा था सोनी को। मैने एक दम पहचान लिया और उससे ज़ोर से मिलना चाहा पर मुझे देख वह झुग्गी के दरवाजे के बीच मे ही खडी हो गई। जैसे टूटे-फूटे से फ्रेम मे जडा बेहद सुदर चित्र। गोरी अनछुई सोनी भरी भरी गोल चेहरा नाक मे लाल रगवाली पीतल की लोग अधघिसे से कपडे। मुझे अपनी झुग्गी के बाहर खडे देख वह हैरान भी हुई और गुस्से के साथ चेहरा तप गया। उकडूँ होकर वह झुग्गी के अदर घुसी और मेरा हाथ पकडकर झुग्गी के अदर ही घसीट लिया।

तू यहाँ क्या करने आई है ? तुझे मेरा पता कैसे लगा ? साथ कौन है ? किसके साथ आई है ? उसने एक ही साँस मे सारे सवाल पूछ लिये।

सोनी गुस्से के साथ लाल हो गई थी। आँखे निकाल-निकाल मेरे कधे झकझोर कर वह जोर-जोर से पूछती जा रही थी। मै डरकर रोने लग पडी थी। कोई भी जवाब नहीं दे सकी थी मै। मेरा गला रूँध गया था। सोनी मुझसे बहुत बडी थी मुझे लगा की मेरा मुँह अभी थप्पड मार मार कर तोड देगी। पहले तो सोनी मुझे बडा प्यार करती थी। गीटे कौडियाँ, चीचो ची गडेरियाँ चींजो धूप-छाँव- सारे खेल तो उसी ने सिखाये थे। वे नवी की बडी हवेली की चौडी सगमरमर की सीढियो पर हम खेलती थीं और अब मुझे देखते [redacted] सोनी लोहे-सी लाल हो गई थी।

मै तो डर से बोल भी न सकी थी और सोनी ने जाने क्या समझा। वह झटपट बाहर

निकलकर झुग्गियों के मोड़ तक देख आई।

मैंने झुग्गी में चारों तरफ नजर दौड़ाई। छोटी-सी झुग्गी साफ-सुथरी थी। मिट्टी से दीवारें और फर्श पुता हुआ था। एक कोने में पंप वाला स्टोव, आटे का कनस्तर और कुछ छुटपुट कुछ बर्तन, और एक चारपाई बिछी थी। चारपाई के नीचे लोहे की एक टकी को बहुत बड़ा पीतल का ताला लगा था।

'सोनी बड़ा अच्छा पीस ढूँढा है ? कसम ऊपर वाले की ताजी - ताजी कच्ची गिरी अभी-अभी खिली कमल कली 'एक अधेड़- से आदमी ने झुग्गी के अंदर सिर घुसाया और मुझे देखकर अजीब तरह की हँसी हँसा।

'निकालती हूँ तेरी भी कच्ची गिरी पक्की गिरी हराम "और सोनी ने मर्दों जैसी मोटी-सी गाली निकाली और मेरा हाथ पकड़ घसीटती-घसीटती, झुग्गियों से बाहर गंदे नाले के पास बनी पगडंडी पर आकर खड़ी हो गई।

'ओफ! कितनी बदबू है तू यहाँ कैसे रहती है सोनी ? मैंने बड़े लाड़ के साथ उसके चहरे की तरफ देखा।

सोनी एक लफ्ज भी नहीं बोली थी। अब हम टूटे-फूटे लकड़ी के पुल के पास पहुँच गए थे जहाँ वे नवीं'खड़ी थीं। सोनी ने फिर मेरी बाँह घसीटी और धक्का देकर'बे नवीं'की तरफ लुढ़का दिया।

इसको यहाँ भेजने की क्या जरूरत थी ? उसने बायीं हथेली पर दायें हाथ की उल्टी हथेली जोर से मारी और'बे नवीं की ओर ऐसे देखा जैसे अभी उसकी बूढ़ी हड्डियाँ कच्ची ही चबा जाएगी।

फिर वह चुपचाप खड़ी नाखून कुतरती रही 'बे नवीं'भी उसकी तरफ देखती रही, दोनों में से एक भी नहीं बोली थी सोनी की दायीं ओर खड़ी मैं दोनों को देखती रही।

मुझे तो सोनी वैसी ही लगी थी जब स्कूल का काम छुड़वाकर वह कहती थी 'छोड़ भी अभी तो स्कूल से आई है फिर वही कापियाँ कलम दवात लिखाई पढ़ाई सवाल चल गेंद-गीटे खेलें तब मैं भी कमरे में झाँकती, माँ को चूल्हे-चौके में लगी देख हल्केपैरों से खिसक जाती थी, और'बे नवीं की सागभरभरी चौड़ी सीढ़ी पर गेंद-गीटे या कोड़ियाँ खेलती थी।

खेलती सोनी को माँ चोटी से पकड़ घसीटती थी, उसकी मोटी चोटी को अपने हाथ पर

लपेटकर अच्छी तरह झँझोडती थी "इतनी बडी लौंडी न काम न काज घर में बर्तनो का ढेर पड़ा है न पढ़ना न लिखना नालायक को स्कूल से भी निकाल दिया इस चौठ-चुपट को शर्म न आई खसम खानी ! छोटी सी बच्ची के साथ खेलती है लौंडी अपना कद देख तीसरी मे पढती है इंदिरा तुझे कोई लाज नही !" फिर सोनी की पीठ को दोनों हाथो से पीटती, थप्पड़ों से मुँह लाल कर गोद का बच्चा उसकी झोली मे थमा देती थी । सोनी वैसे ही उकड़ूँ होकर बैठी रहती, न कभी रोती न कभी एक आँसू निकलता, और मै गें दन्मीटे छिपाकर धीरे से जाने लगती तो सोनी कमीज पकड़कर फिर बिठा लेती थी । बुड़बुड़ाती सोनी की माँ रसोई में घुस जाती। कुड़कुड़ाती सोनी बच्चे को घुटने पर बिठाये साथ घुटना हिलाती साथ ही थाल डालती 'कोठे उत्ते का——मै मर जाँ——रोण मेरीआँ सहेलियाँ ते पिटे मेरी माँ

वही सोनी नाखून कुतरती नाखून चबाती मेरे पास खड़ी थी 'बे नवीं'उसे समझाती रहती थी क्या किया तूने सोनी गदगी में बहा ली अपनी जिन्दगी और जब दो चार साल और ढल गये तो किसी मर्द बच्चे ने तेरी पीठ पर लात भी नहीं मारनी देख इदिरा कितनी सयानी है आठवीं में पढती है "

सोनी ने मेरी तरफ कनखियो से देखा जैसे कह रही हो 'यह नली चोचो कब की सयानी हो गई बुद्धू नथी

'बे नवी फिर बोली "सुन रही है सोनी चल मेरे साथ मै तुझे लेने आई हूँ" तेरे भाभी भाई भी अलग हो गये है तेरी माँ का जीना हराम कर दिया है तेरे बाप ने कि तेरी कोख के गदे फल ने मेरी नाक कटवा दी बहन बीरां रो-रोकर पागल सी हो गई है तू वापस चल मेरे साथ '

सोनी की तरफ आँखें फाड़-फाड़कर देखती रही । उसके कानों के साथ तो सिर्फ एक आवाज हवा टकराकर हवा में फैलती रही थी । वह आँखे झुकाये नाखून कुतरती रही। होंठों में से नाखून का टुकड़ा 'फुट'करके फेंकती और फिर नाखून देखने लग पड़ती । खुरचने लगती

'भाई और भाभी कहाँ गये? नाखूनों के पास से उखड़े नाखूनों को अँगुली के पोर के साथ मलते हुए उसने पूछा।

सोनी की भाभी का चेहरा मेरे सामने साकार हो गया । बेहद सुदर कुज-जैसी

पतली,गौरी , मोटे नैन, तीखे नक्श, घुँघराले सुनहरी बाल। बालों की लटे जब उनके कानो की बालियों के पास लटकतीं तो वह बेहद सुदर दिखाई देती। नया-नया ब्याह और झिलमिल तिल्ले सिलमेवाले कपड़ों मे सजकर वह कोई राजकुमारी लगती थी। सोनी का भाई दोपहर को भी दुकान से रोटी खाने घर आ जाता फिर कुडा मार वो दोनो कमरे में घुस जाते। एक दिन सोनी मुझे भी उनके कमरे के पिछवाडेवाली खिडकी की तरफ ले गई। एक पत्थर पर खडी हो उसने मुझे थोडा उठाया—— 'अदर देख भाभी क्या कर रही है ?

तब मैंने खिडकी की दरार के साथ अपनी आँखें जोडकर कनपटियो के पास 'बारह मन की धोबन आई देखने वाले बाइस्कोप की तरह दोनो हथेलियाँ फैला लीं। भाभी ने सिर्फ दुपट्टा लपेटा था और शर्म से झुकी आँखे मासूम-सा शर्मीला चेहरा। मुझे लगा जैसे आकाश से उतरी कोई परी अपने पख समेट अभी-अभी दरिया में से नहाकर निकली हो। या जैसे कोई सगमरमरी तराशा हुआ बुत किसी खास अदा से खडा गया हो। और मै खुद शर्म से पानी-पानी हो गई थी मेरे कानों में सीटियाँ बजीं लाल सुर्ख हो गई थी मै हाय सोनी भाभी नगी ग नगी हाय ! सोनी भाभी बहु त बे शर्म है ! हाय सोनी ! भाई भी अदर ! और आगे मेरी आवाज मेरे मुँह पर हाथ रख कर सोनी ने बद कर दी।

"मर परे', सोनी ने पत्थर पर खडे ही मुझे नीचे उतारा और खुद देर तक वही धूप में खडी अदर देखती रही। जब भाई ने कुडा खोला तो वह दगड-दगड करती बे नवीं के कोठे पर दौड गई। मुझे पता था वह कमरे के पिछवाडे रोज जाती थी और मुझे धमकाती 'अगर तूने किसी को बताया तो तेरा गला घोट दूँगी ऐसे !उसने मेरा गला दोनों हाथो से दबाते हुए कहा था। घर की आखिरी नुक्कड का कमरा जिसकी खिडकियाँ पिछले दालान में खुलती थीं।

"बोलती नहीं मै क्या बक रही हूँ घटे से ? ' 'बे नवीं ने जरा गुस्से और रौब के साथ कहा तो मै भी यादो की घुम्मन घेरी से बाहर निकली।

सोनी ने नाखून के मास को जोर से खीचा और सी-अ-अ'करते हुए उँगली का पोर मुँह में डाल लिया।

"फिर यही लोग कुत्ते के ठूँठ में भी पानी नहीं पिलाते——पता है ?यह भी कोई जीना है ? इससे तो डूब कर मर जा।"

"सोनी चल हमारे घर।"

सोनी नेमेरी तरफ घूरकर देखा जैसे कह रही हो तूभी लगी हैबोलने चुप हो जा

निकम्मो-सी!'

सोनी टस से मस न हुई। जमीन की तरफ देखती अँगूठे के पास पड़े छोटे- से पत्थर के साथ खेलती रही।

"मैं क्या कह रही हूँ?"'बे नवीं' ने रुखाई के साथ कहा, किस दलदल में फँस गई है सोनी? गलत कदम की सजा एक ही रास्ता तो नहीं निकल इस कीचड़ में से

"शाम को आऊँगी मुझे इंदिरा का घर मालूम है, डाक्टर के सामने वाली गली में।"

"पक्की बात मैं तेरे लिए ही आई हूँ सोनी वापस चल भुगत ली तूने सजा 'बदी बन अब।

'हाँ, उसने सिर हिलाया "आप इंदिरा को इस बस्ती से ले जाओ। इसे साथ लाने की क्या जरूरत थी।' उसने मेरे कंधे को पकड़कर धकेला।

"ताकि तुझे शर्म आये और यह राह छोड़ दे

हूँ,' उसने गर्दन एक तरफ झटकी।

'बे नवीं'की उम्र तो कुछ ज्यादा नहीं थी। अधेड़ औरत, सिन्दूरी रंग भरा-गुदा जिस्म ऊँचा-लंबा कद, भरी भरी छाती और छाती के पर उभार पर इलायची द्वारा छोटे-बड़े सबकी 'बे नवीं' थी। अपना असली नाम अपना व्यक्तित्व तो वह मायके घर-चौखट में चुये तेल की चिकनाई के नीचे दबा आई थी और सेठ दूनीचंद के घर के सवा सेर सोने में लदी-लदाई वह डोली में बैठी थी। सेठ दूनीचंद तब छड़ी के सहारे चलता था और डोली के साथ चार कदम चलकर घोड़ी पर बैठ गया था। फिर'बे नवीं'ने पिछले मायके घर कभी फेरा नहीं डाला था। नये घर मे वह दोहतों-पोतो, बहुओं-दामादों, बेटियों-बेटों की'बे नवीं'बन गई थी, यानी कि'नई माँ'।

मायके घर के कच्चे आँगन से संगमरमरी सफेद काली चौकड़ियों में छन- छन करती चलने लगी 'बे नवीं'और खद्दर, छींट, पापलीन छोड़ रेशम पटट हँटाने लगी। एक ही कमरेवाले मायके घर से बड़ा तो उसका अब गुसलखाना है जहाँ वह दिन में चार बार नहाती। बड़े कमरे में जहाँ रंगदार शीशोंवाली बड़ी-बड़ी खिड़कियाँ हैं जहाँ सारी दीवार में सुनहरी फ्रेमों में जड़े आदमकद शीशे लगे हैं वहाँ साफ-सुथरे बिस्तर पर सेठ दूनीचंद लेटे रहते।

'बे नवीं' ज्यादा उसी कमरे में बैठतीं सेठ जी की टाँगें दबातीं कपड़े बदलतीं गुसलखाने

तक ले जातीं, और फिर पलँग के पास शीशोंवाली पीठ की रगीन पीढ़ी पर बैठ जाती। बाते करती ?बातें तो अपनी उम्रवालों के साथ होती है। बढे बुजुर्ग पति के लिए तो इज्ज० मान, सेवा ही धर्म था।

'बे नवीं' ने पूरे पन्द्रह बरस अपना धर्म अच्छी तरह निभाया था। तरस या मान पर बे नवीं' की बात सबके लिए पत्थर की लकीर होती। मेरी माँ भी ठडी आह भरकर बताती थी 'असली सन्यास तो बे नवी'ने भोगा है। ब्रह्मचारी जीवन तो'बे नवीं' ने जीया है—— सारी उम्र तप किया ै बेचारी ने। पिछले जन्म का कर्जा उतारना होगा जो इस जन्म मे जर-खरीद जोरू बनी जर ढोली अपने सतधर्म पर पक्की रही मजाल है किसी ने अँगुली भी उठाई हो——वह तो रानी माँ——सबकी माँ——बे नवीं'।

'बे नवीं' सोनी की मासी थी और हम उसके पड़ोसी किरायेदार। उस शहर आमने-सामने बालकनी में खड़ी हो बातें करतीं और कभी बे नवीं'हमारे घर आ जातीं। तीन छत वाले बड़े घर में बहुओं, बेटों, पोतो-पोतियो से घिरी हुई भी वह अपने आप तो खाल-म-खाली इकल-म-अकेली महसूसती। तन-मन की साँझ तो किसी के साथ न बनी, घबरा जाती दिल घबराने लगता। सफेद बिस्तर पर पड़े आदमी ने घर से बाहर पैर कम ही निकालने दिया था माँ-बाप, भाई-बहनों ने कभी ऊँची चोखट सगमरमरी ड्यौढ़ी लाँघने की जुर्रत नहीं की थी या तो सब उस हवन कुण्ड को देख नहीं सकते थे जिसमें उन्होंने बाकी बच्चों के पेट की आग बुझाने के लिए अपने ही तन के टुकड़े की आहुति दी थी।

सफेद बिस्तर वाला पलँग खाली हुआ तो'बे नवीं'ड्योढ़ी में चौकीदार के कमरे में अपनी बहन और उसके परिवार को ले आई। बेहद गरीब बहन, ईंटें को देख वह हँसती-हँसती भी अदर से बेहद उदास हो जाती और बहन के परिवार की सीमा बड़ी ड्योढ़ी और चौकीदार का कमरा थे बस। कभी किसी बच्चे की सगमरमरी सीढ़ियाँ चढ़ने या आँगन की काली सफेद चौकड़ियों पर खेलने की जुर्रत नहीं पड़ी थी। पर सोनी ने जब पैर उठाया तो वह पीतल के कीलोवाली चौखट भी लाँघ गई और छत पर दीवार के पास खड़ी हो किलकारियाँ मारने लगी।

कितना कलपती थी'बे नवीं' पर सोनी का स्कूल मे जी न लगा। किताबे-कापियाँ फाड़कर फेंक आती। बस्ता नाले में बहा देती। सारा दिन खेलती या फिर मार-झिड़कियाँ खाती रहती। उसकी माँ मारती भी प्यार से समझाती भी, मरी 'रोटी पकानी ही सीख' पर उसके कान पर जूँ भी न रेंगती। कई बार स्कूल जाते मुझे भी रास्ते मे घेर लेती थी। किताबें छीन लेती

कापियाँ फाड़ देती चोटी पकड़कर धक्का देकर दौड़ जाती,'बड़ी आई पढ़ाको । नली चो चो ! नली सँभाल नहीं सकती है चली है स्कूल पढ़ने इंदिरा घलिन्दरा शिंदरा तेरी वजह से ही मुझे मार पड़ती है तू भी स्कूल न जा ! मैं जोर-जोर से रोती घर वापस मुड़ती थी।

जब मैं गेंद गीटे, रस्सा टापने, छुप्पन-छुपाई, धूप-छाँव, चीचो-चीच गड़ेरिया खेलने लायक हुई तो वह मेरी सहेली बन गई पक्की सहेली मेरे से आठ-नौ साल बड़ी सोनी । अजीब-सी बातें सुनाती थी सोनी 'तुझे पता [redacted] बच्चा कैसे पैदा होता है ? छत पर कौआ नहीं फेंकता अस्पताल में भी नहीं मिलता हाँ नारियल के पेड़ के साथ भी नहीं लगते जन्मते है बच्चे ।

'चल हट गधी, झूठी " और वह मेरा नाक और दोनों कान मरोड़ देती।

फिर हमारी बदली इस नये शहर में हो गई और सोनी बिसर गई थी।

इश्क की वादी में भटक गई थी सोनी। जजबातों और अहसासो की गिरह गलत धागे के साथ बँध गई। गलत पगडंडी पर कदम रख सोनी जीवन का सारा रास्ता भूल गई। जिन मजबूत कंधों की उसने छाया ढूँढी थी वह तो निरा पूरा टाहली का वृक्ष निकला। प्यार की पीगें झूलती सोनी ने आधी रात घर से कदम उठाया था। छुपते-छुपाते यहाँ दूसरे शहर आ बसे थे जहाँ न कोई जान थी न पहचान। अहसास की बेल जल्दी मुरझाई, जजबातों की छाँव को पेट की भूख ने हड़प लिया। जब भूख ने घेरा जेबें झड़ गई इकट्ठे मरने-जीने की कसमों का जब वास्तविकता से सामना हुआ तो इश्क-मुश्क प्यार सभी कुछ अंधे कुएँ की मिट्टी के नीचे दब गये। मन में खिले फूल मुरझा गये खुशबू उड़ गई। न एक के हाथ कोई वसब था न दूसरी के हाथकोई गुण। न काम मिला, न पेट की आग बुझी। मचती थी तो लड़ाई दिन-दुगुनी रात चौगुनी ।

एक रात चुपचाप जब वह घर से खिसका था वैसे ही सोनी के पास से उठकर पीछे मुड़ गया। सोनी कुछ दिन रोई धोई अब क्या करे?पीछे कैसे मोड़ती ? वह लड़की थी लड़की का एक गलत उठाया कदम उस को सारी उम्र अँधेरे की गार मे फेंक देता है उस लड़के को क्या डर था ? भागी तो सोनी थी नाक तो उसी के माँ-बाप की कटी थी

अंधेरा तो उसी के कदमो में छिपा था बुरी के बुरे लक्षण सबने सोनी को ही कोसा था जिस वृक्ष के तने पर वह अमर बेल बन लिपटी थी वह फिर घर मुड़ आया था नहाया- धोया थोड़ा। अमर बेल को वह तोड़-मरोड़ अपने घर से उतार आया था

जडहीन अमर बेल। और सोनी का पता-ठिकाना उसी ने बताया था। माँ-बाप के लिए तो मर गई थी सोनी 'कभी पैदा न होती कलमुँही मरे भुगते अपने किए का फल पर बे नवीं'सोनी की मासी आई थी सोनी को ढूँढने सोनी को लेने

"जीवन के पिछडे राह से उसको मै वापस मोडूँगी।"'बे नवीं'ने माँ को सारा कुछ बताते हुए धैर्य से कहा था।

'बे नवी हफ्ता इतजार करती रही, सोनी ने न आना था न आई।'बे नवीं खुद गई थी उन झुग्गियो मे जहाँ सलवार को पिडंलियो तक उठाकर लाँघना पडता था। गदे पानी, गदगी के ढेर जैसे धरती के सीने पर उभरे फोडे अभी-अभी रिसे हों। सोनी तो हफ्ता पहले ही कहीं चली गई थी।

एक दिन लडकियों के झुण्ड मे मस्त बातें करती स्कूल से आ रही थी, "इंदिरा इंदिरा ! और मेरी पीठ में जोर से मुक्का लगा।

सोनी ने मेरे पीछे देखने से पहले ही मुझे एक ही बाँह मे जकड लिया "पहचाना नहीं ? इतनी आवाजे दीं ?

बेहद खुश थी सोनी सिल्क का सिदूरी सूट, मुकेश जडा दुपट्टा गहने- जेवर पहने हार-शिगार से सँवरी सोनी। मै उसे सिर से पैरो तक देखती रही हैरान भी थी खुश भी।

'चल मेरे घर उसने मेरी बाँह घसीटी। आ ना यह नीली खिडकियोवाला मेरा घर है आ तुझे तेरे जीजे से मिलाऊँ अभी आये है काम से रोटी खाकर जा तुझे खुद छोड आऊँगी।" वह बेहद खुश थी।

मै तो बहुत कुछ पूछना चाहती थी तेरा ब्याह हो गया?पर उसने अगले सवाल मेरी नजरो से ही भाँप लिये। लडकियो के झुड में से एक तरफ हो गई। वहाँ झुग्गियों मे बडे-बडे अफसरो की बीवियाँ और समाज सेविकायें आती थी—— उन्होने बच्चो के लिए स्कूल भी खोले औरतो के लिए सिलाई केन्द्र भी खोले और जवान लडकियाँ जो भटककर गलत राहों पर पड गई थी उनके ब्याह करवाये। हम लडकियाँ थी बडी रौनक लगी थी हमारे ब्याह पर। पूरा साल हो गया है हमारे ब्याह को तुझे फोटो दिखाऊँगी 'बे नवी' के पास भी गए थे ये सब उसी ने दिए है उसने सोने की चूडियाँ चेन-बालियाँ दिखाई "चार महीने बाद फिर वहीं जाऊँगी और उसने शरमाकर पेट के आगे दुपट्टा कर लिया।

'चल न चल मेरे साथ मेरा घर देख वह चाव और खुशी के साथ फूली

नहीं समा रही थी।"

"नहीं फिर कभी रोज इसी रास्ते से ही तो स्कूल जाती हूँ तू आ माँ से मिल
"

वह एक दम उदास हो गई। उसका खिला चेहरा मुरझा गया—"तुझे पता है मेरी माँ मर गई मैंने उसे मारा है न ?'वे नवीं'बताती है बड़ा रोती थी बीमार हो गई और फिर सोनी का गला भर आया।

"जरूर आना ।" और वह नीली खिड़कियों वाले घर में घुस गई।

सोनी न घर आई न मुझे फिर कभी रास्ते मे मिली न मै गई मै कालेज मे पहुँच गई थी अब रास्ता भी अलग था, अब अपने ध्यान मे साइकिल चलानी पड़ती थी। मुझे भी सोनी की याद बिसर गई।

एक दिन रिक्शे में जाती सोनी मुझे फिर टकर गई। वह रिक्शे में से नीचे उतर आई—'इधर आ जा उसने बरादरी के एक कोने की तरफ कर मेरा हाथ पकड़ लिया।

अजीब-सा रास्ता बेहूदा सा शिंगार किया हुआ था सोनी ने। "तू आई नहीं " मैने फिर हैरान होकर उसको सिर से पैरो तक देखते हुए पूछा।

उसने इधर-उधर देखा और उसकी आँखों में से गंगा-जमुना की धारा में बह चली 'टप टप टप'आँसू उसके गले के नीचे दोनों तरफ उसकी कमीज को भिगोते रहे। मुझे वैसे ही लगा जैसे अभी-भी माँ ने उसे थप्पड़ मार-मार कर लाल कर दिया हो भाई भाभी के कमरे में खिड़की की दरार के साथ आँखें जोड़कर खड़ी हुई को माँ ने रँगे हाथो पकड़ लिया हो और चोरी से पकड़कर दीवार के साथ'ठह'मारा हो।

क्या हुआ सोनी ? तू ठीक है न ? तेरा बच्चा ? न तूने लड्डू खिलाये न बर्फी " मै आसपास की सजह भारी हवा को हल्का करके मुस्कराई।

"कुछ नहीं तू जा ऐसे ही बस मेरेसाथ बात करते हुए किसीनेदेख लिया तो तुझे भी यूँ ही बदनाम करेंगे लोग तू जा मै तो पहले बहुत बदनाम हूँ। कोई चाहे भी तो भी बसने नहीं देते लोग तू जा। और वह सिसकियाँ भरकर रोने लगी।

मैंने भी इधर-उधर देखा, अगर किसी वाकिफ ने देख लिया ?

रिक्शे वाले ने भऊँ भऊँ करता हार्न बजाकर सवारी को चेतावनी दी।

उसने झटपट आँखें पोंछ लीं। "एक ही साल सुख का गुजारा। सोचा था बच्चा घर, घरवाला और मैं   भगवान ने मेरे पिछले गुनाह बख्श दिये   पर   उस मेरे घरवाले ने मेरी कोख में पुगरी पौध का गला घोंट दिया 'यह बच्चे-वच्चे के जंजाल नहीं होने। मैंने बड़ी विनती की पर उसने एक न सुनी   और   और साल बाद ही सारे सपने चूर-चूर हो गये—उनका असली रंग उघड़ आया   मुझे ब्याह के बंधन में कैद करने का मकसद पता लगा   इंदिरा ! समाज सुधार——प्यार   ब्याह-व्यूह   पवित्र बंधन   अग्नि फेरे   सब झूठ-फरेब। उसने तो सिर्फ जिस्म का सौदा करना था। पर मैंने तो ब्याह किया था। एक ही आदमी के साथ वफा निभाने का प्रण लिया था। मैंने जिस तरह जीना चाहा किसी न किसी ने मेरी आराधना भंग की।

'और अगर फिर भी वही सब करना है   वैसे ही रोज नये चेहरे   अनजाने लोग   और पैसे कमाने थे   जिस्म बेचना था   रातें जागनी थीं   तो घर वाले रखवाले   पति परमेश्वर की आड़ में क्यों   ? उसकी मर्जी के   उसकी पसंद के ग्राहक क्यों   ? उसके रोब में चाहे झुग्गी में रहूँ मर्जी की आप मालिक बनूँगी किसी लिहाफ या बुरके की क्या जरूरत है   दूसरे किसी की चाहत के साथ क्यों जीऊँ   ? क्यों जिन्दगी गुजारी जाये ?

सोनी की साँस फूल गई जैसे अभी-अभी लंबी दौड़ के बाद पल भर आराम करने के लिए रुकी हो । चेहरे पर गाढ़े काले धुएँ की परछाई पोती गई। आत्मग्लानि के अहसास की परछाई

"अब तो सामने सुनसान पगडंडी है   जिसके दोनों ओर झाड़, करीर और कांटे हैं, कैक्टस है   या आक ही आक उगी हुई है " उसने भर्राई आवाज से कहा। मुझे लगा सोनी अभी-अभी अपनी ही सलीब से उतरी है हाड़-मांस की सलीब पर टँगी सोनी का रोम रोम रिसता हुआ आँखों के रास्ते बह चला है क्या मियाँ-बीवी का रिश्ता भी [illegible] होता है   ? गरजों का रिश्ता   जरूरतों की साझेदारी   ? फिर पति के नाम की [illegible] कैसी   ? कहा पक्का विश्वास बँधा था एक बार फिर, सोचा कभी [illegible] में एक कर किसी दीवार में चिनी जाएगी   पर सब फरेब   [illegible] अगर जिन्दगी में अँधेरा बँधा था रोशनी की किरन ने चमक कर ही अँधेरे [illegible] धकेला तो तो अँधेरे में भी खुद ही अकेली चलूँगी। दूसरे का हाथ [illegible] ठोकरें खाने का क्या फायदा ?   कागज के फूलों का क्या [illegible] असली होते हैं। मैं जानती हूँ, धरती पर भार हूँ   मैं   [illegible]

वापिसी

- डा. रश्मि मल्होत्रा -

एक खनखनाती झरने-सी उसकी हंसी भी मेरे कानो मे जहन मे ज्यू की त्यू है। और जब वह मुझ से प्रथम बार मिली थी तो मधुमी-कलि की तरह चटक छलकती थी उसकी अखियां मुसकुराती हुई। पनीली सी नयनो वाली वह कभी इतनी आत्मीय बन जाएगी मैं सोच भी नहीं सकती थी। इकनौमिक्स की लेक्चरार थी ममता महिला कालेज मे। फिर भी हिन्दी साहित्य से कब कैसे उसका लगाव इस कदर बढा- बिल्कुल एक जनून की तरह - कि वह अब साहित्य लिखने भी लगी थी। जब भी कालेज से आती बडल के बडल किताबो के होते उसके हाथो मे और दो चार दिन बाद पुन उसको वह किताबें वापिस करते और अन्य बडल ले जाते हुए पाया जाता। इस तरह कम समय मे ही उसने सभी जाने-माने साहित्यकारो की अनेक अच्छी-अच्छी पुस्तके पढ डाली। उसकी अध्ययन-अध्यापन की प्यास इतनी गहरी थी - यह और कोई भी अनुभव कर पाया हो या नहीं पर उसके पिता को यह आश्वासन था कि वह एक दिन लेखिका अवश्य होगी। सभी बेटियो से अधिक मान-इज्जत और प्यार मिलता उसे। छोटी बहनो के लिये पिता का प्रमुख आदेश होता, कालेज से आते ही रिक्शा से उसकी किताबों के बडल उठा कर लाना उसके लिए खाना इत्यादि परोसना और वह उसकी छोटी-बडी ख्वाहिशो का पूरा-पूरा ध्यान रखने के साथ-साथ घर की अन्य जिम्मेदारियो से भी अलग रखते ताकि उसके अध्ययन मे कोई खलल न पडे। मै भी साहित्य की विद्यार्थिनी होने के नाते उसका साथ पसन्द करती। महीने मे 10-15 दिन मेरे वहां बीतते, कालेज के बाद। हम देर-देर तक साहित्य-चर्चाओ मे डूबे रहते पर उस घर की विशेषता थी कि घर का कोई भी सदस्य खलल न डालता।

अन्तत उसकी चचल अखियों ने मन का मीत लिया और अब उसकी शादी एक उच्च व्यवसायी के साथ होगी। नव दुल्हन के रूप मे लाखो सपने सजाए थे ममता ने। परन्तु ससुराल की दहलीज पर पाव रखते ही उसे वह सपनो के महल टूटते दिखाई दिए। अनुभवो के कठोर-सकलनों ने उसकी समस्त भावनाओं को तोड-फोड कर रख दिया। वह भावशून्य सी हो उठी। ससुराल की दहलीज पर ज्यो ही पैर रखा उसके कानो में सीसा सा घुलने का आभास हुआ। अभी वह गठरी बनी बैठी ही थी कि प्रश्न पर प्रश्न पूछे जाने लगे, अरी बहू, दहेज के सामान की लिस्ट कहाँ है ? कुछ है भी बक्से-वक्से में, या मेहमानो के सामने

मेरी नाक कटाऐगी ? उसके मन मे शायद यह था कि चार चार बेटियों का बाप भला दे ही क्या सका होगा ?पर वह शायद भूल गयी थी कि इतनी उच्च शिक्षा दिलाकर उसके पिता ने इस योग्य बना दिया है कि वे अपने पैरो पर बिना किसी सहारे के खडी हो सकती है । फिर वह तो एक लेक्चरार है जो हर माह अच्छी तनख्वाह लाएगी और उसकी झोली भरेगी। पर वह यह न जान पायी कि इन छोटी छोटी बातों से उसने बहू का किस तरह दिल दुखाया था उसके भोले हृदय पर तो मानो विस्फोट ही हो गया था ।

उसे रह-रह कर याद आने लगा कि उसके माता पिता ने किस प्रकार स्वय सादीसी जिन्दगी व्यतीत करके उसके और उसके बहन भाइयों को पढाया था । एक सच्चा गहना पहनाया था । उसके मन मे स्वाभिमान की भावना भरी थी । एक बहुत बडी इच्छा थी उसकी अपने पैरों पर खडी होने के बाद अपने मा -बाप का बोझ कुछ हल्का करने की । बडे-बडे समाधान थे उसके विचारों में नारी उत्थान के पक्ष मे वह कुछ करना चाहती थी। परन्तु कहा नारी जाति की समस्याओं के बावजूद आज अब स्वय ही नारी की महान समस्या दहेज के चक्रव्यूह मे फस चुकी है ? सामान खोला गया सभी के बीच । दहेज को लेकर फब्तिया भी कसी जाती । दबे-दबे बयान भी किया जाता कि ' दहेज क्या दिखाए जब आया ही कुछ नही । उसके दिल दिमाग में बुरी तरह काटे ही कांटे उगने लगे जो गहरी टीस देते । भोले-हृदय की चिडिया उड गयी । बोलो का लावा उसका तन-मन भस्म कर डालता। कभी सास-ननदों के गुट और कभी उसके पति को शामिल कर कुछ-कुछ सुनाने का भरसक प्रयास - मानों किसी गम्भीर समस्या पर विचार किया जा रहा हो या मानो पहाड ही टूट पडा हो । उसने जान लिया कि जिन तीरो का निशाना वह बन रही है उन्ही विष बुझे तीरो ने उसके पति की सीना छलनी करने के बजाये उसमे नमक-मिर्च लगा विशद व्याख्या करके प्राण घाती बना डाला है और यह बस उसे पति की नजरों से गिराने की एकमात्र चाल ही थी । उसे धीरे-धीरे समझ मे आने लगा कि वातावरण को कटु बनाने वाले कितने सधे हुए तरीके से चिन्गारी फैकते है, उसको व्यग्य की धौकनियों से सुलगाते है और भडक जाने पर घी का कार्य भी करते है । (और यह कार्य भी इतनी बखूबी किया जाता कि घर के भोल भाले पुरूष वर्ग को तो क्या किसी अन्य को भी भान तक न होता कि कौन शिकारी है तथा कौन शिकार)।

अब वह सजग चैतन्य सी रहने लगी । अपने दु ख-सुख मे साथ देने का प्रयत्न करने लगी। बासी परम्पराओं तथा थोथे प्रहारों से स्वय पति का कवच सा बनने की चेष्टा में लगी रहने लगी । कभी उन्नतशील समाज का वास्ता देकर और कभी हर दोष अपने ऊपर

लेकर सहज रूप से पति को सम्मान दिलाने का प्रयत्न करती, पर उसे लगा वह हर कोशिश मे स्वय टूटने लगी है। वह स्तब्ध सी हो जाती जब घर के अन्य सदस्यो के साथ साथ अपने उच्च-पदासीन पति को भी उनकी प्रत्येक लाछना और प्रताडना के साथ ' हा" में " हा ' मिलाते सुनती। अनपढ लोग ऐसी बाते करें तो कुछ समझ भी आ सकता है कि उसकी बुद्धि नहीं होती परन्तु, ऐसे सभ्य दिखते परिवार के बीच उसके सभ्रान्त पति भी उनकी बातो का विरोध करने की बजाय उन्हें बढावा देने लगे। उसका तिलिस्म जल्दी ही टूट गया। उसे अपने माता पिता की विदा होते समय की वह शिक्षा बारबार याद आने लगी, ' बेटी धरती की तरह रहना। थोडे दिए को भी बहुत मानना और मा बाप की लाज रखना"। और उसने कुछ न कर पाने के कारण सहनशक्ति को अपना सबसे बडा अस्त्र बना लिया। कोई भी कैफियत देने का प्रश्न ही कहा उठता था ' यह उन उपद्रवी लोगो की पहली जीत थी कि उसके पति को भी उससे दूर कर दिया गया। उसके पति की घुटी घुटी बातें बताती कि उसके मन में कोई फास अटकी है जो उसे अपनी पत्नी और अपने ससुराल पक्ष से दूर रखे रहती है। इसकी पुष्टि कई बार कई रूपों में हो चुकी थी।

विवाह से पूर्व जहा घर के काम-काज में हस्तक्षेप करने की आदत न थी उसे अपने अध्ययन में व्यस्तता के कारण। विवाह के बाद तक भी वही आदत बनी रही। वह आती कालेज से और गुमसुम सी खाना इत्यादि खाकर आराम करने अपने कमरे में चली जाती, और कोई न कोई साहित्यिक पत्रिका में अथवा अध्ययन में खो जाती। अध्ययन की उसकी आदतें तो थी ही। लेकचर की तैयारी करती। अत मानसिक उद्वेलन कम करने के लिए वह अपने आपको अलग-थलग रखकर अधिक से अधिक व्यस्त रखती ताकि न ही वह उनके ताने सुने और न ही अपना दिल जलाए।

शाम पति के घर लौटने से पहले ही वह तैयार मिलती और साय कालीन चाय इत्यादि पीकर पति पत्नी दोनो कहीं न कहीं घूमने निकल जाते। इस तरह वह तो घर के घुटे हुए वातावरण से कुछ राहत पा लेती। परन्तु पति अधिक सहज न हो पाते। पत्नी की उदासी को दूर करने का वह न तो उचित उपाय ढूँढ पाते और न ही स्वय उसके साथ इतने आन्तरिक हो पाते। उन्हें लगता कि घूमकर लौटने के बाद फिर वही भारी वातावरण होगा और फिर सामना करना होगा घर के सदस्यों की कटूक्तियों का घूमा लाए महारानी को? फिर भी खुश हो पाई या नहीं ? घर में रहकर भी वह कौन सा तीर चलाएगी। कालेज से आकर पत्रिकाए ही तो पढती रहती है दिनभर पढी-पढी। इतना पैसा व्यर्थ ही बरबाद करती है इन पत्रिकाओं पर 2 रूपये रद्दी में भी नहीं बिकती ये।" आदि आदि

आखिर वह क्या करें, कहाँ जाए किस प्रकार पत्नी और घर के लोगों को खुश रखें ? उसे कुछ सूझ ही नहीं पा रहा था। अब वह उदास कटा-कटा सा रहने लगा था। उसने अधिक से अधिक घर से बाहर रहना प्रारम्भ कर दिया था। अपना एक 'फ्रेंडस सर्कल' बना लिया था। जब भी उसे समय होता वह अपने मित्रों के पास चला जाता। हर शाम मित्र गणों के साथ ताश प्रोग्राम बना लेता।

अपनी पत्नी तथा परिवार के प्रति दायित्वों को निभाने से भी कतराने लगा। देर-देर से घर लौटना, ताश खेलना तो पैसे से इस तरह खेलना, जिससे कभी तो उसकी जेब नोटों से भरी होती और कभी बिल्कुल खाली। इस तरह पत्नी भी कुढती हुई असहाय सी रह जाती। न उसे रोक पाती न उसे मना कर पाती। दोनों के अन्तर की दूरी और भी बढती चली गई।

आखिर उसने अपना दैनिक कार्य-क्रम भी बदल डाला। पत्र-पत्रिकाएं सब बंद कर डाली। वह सुबह जल्दी ही उठ जाती। खाने इत्यादि में हाथ बँटाती और बचे-कुचे समय में जल्दी से तैयार होकर जैसे-तैसे कालेज पहुँचती। घर पहुँच कर फिर कपडे बदल कर किचन की ओर पहुँचती। खाना बनाती, खिलाती। स्वय कभी खाती कभी नहीं। मगर किसे फुर्सत थी जो उसे देखता मनाता। मानों वह अपने से [redacted] रूठी रहती। बुझे मन से वह कमरे में पहुँचती, उसे लेक्चर तैयार करना होता -कापियाँ जाँचनी होती। रात देर-देर तक देखती रहती। वह क्या करे इतना समय ही कहाँ होता। आधा- अधूरा ही काम हुआ होता कि रात के खाने का समय आ पहुँचता। रोजमर्रा का एक बंधा बंधाया नीरस सा कार्यक्रम बन चुकी थी उसकी जिन्दगी।

अब वह रोज कॉलेज देरी से पहुँचने लगी। लेक्चर भी कभी तैयार कर पाती और कभी नहीं। अन्य साहित्य गतिविधियों की ओर ध्यान देना तो सपने की बात हो गई थी उसके लिए। मात्र खंडहर सी बनकर रह गई थी उसकी जिन्दगी। शैक्षिक वातावरण की भूख ने उसे अतृप्त बना दिया। पति द्वारा निग्लैक्ट करने पर वह व्याकुल सी रहने लगी। जीवन की उत्प्रेरणा जो उसके संवेगों को राह दिखाती थी - कुछ सृजनात्मक मांगती थी उससे वह गुम हो चुकी थी। उसे समझ नहीं आ रहा था - वह इन विवशताओं को कौन सा नाम दे। उसे लगा अब तो केवल एक शुष्क सा कर्तव्य-पथ है जिसमें अपने आपको तपाना है। स्नेह की तपिश के बिना मानों वह ठिठुर रही हो हर पल।

उसे लगता नारी विवश क्यों हो जाती है - पुरुष के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चलने

परन्तु वह अकेली नही थी एक दूसरी आत्मा भी थी। उसका दायित्व भी तो उसी पर था। उसे अकेले ही इस समस्या का हल ढूढना था।

अन्त मे बहुत सोच समझ कर उसने एक निर्णय ले ही लिया -एक कठोर निर्णय - नीम के समान कडवा निर्णय - पर एक लाभदायक निर्णय। इसके सिवा उसे कोई चारा नजर नही आया।

उसने बडी शिष्टता से गृहत्याग कर - कालेज में ही स्टाफ क्वार्टर ले लिया और घर से बिना कुछ भी समान लिए चली गई चुपचाप। जाते-जाते केवल इतनाभर कहा कि उसके पति को उसकी जरूरत महसूस हो तो वह भी आ सकता है वहाँ। क्योंकि अब उसकी सहनशक्ति जवाब दे चुकी है और अधिक समय तक उस परिस्थिति मे रहने के लिए वह तैयार नही है। प्रत्यक्ष रूप मे अपना कोई रोष प्रकट करे किसी के समक्ष या उसकी आँखो और कानों का सयम टूटे उससे पहले ही उसने इज्जत सहित यह बनवास स्वीकार कर लिया।

उस परिवार की भीड मे जो हर घडी दूसरों को खुश करने की कोशिश मे घट रही थी। जो उन्हे हर आर्थिक स्थिति से उबारने की चेष्टा मे ही लगी रहती थी उन्हें तो उसकी इस त्यागमयी भावना की खबर तक न लगी परन्तु अब जब वह अपने नए घर की ओर पूरा ध्यान देने लगी और उसका पति भी अपने परिवार के लिए आर्थिक रूप से कुछ अधिक सहायक सिद्ध न हो सका, बल्कि एक बोझ सा ही लगने लगा सबकी आखे स्वत खुलने लगी।

अब सभी एक-एक कर असहाय से महसूस करने लगे और अपनी अपनी गलती स्वीकार कर बेटे से बहु को वापिस बुला लाने का अनुरोध करने लगे। उसकी भी आँखे खुल चुकी थी। उसे लगा कि उसकी पत्नी कोई अपराधी नहीं है। उसने ही उसे भरी दुनिया में अकेला छोड दिया था। अगर वह दोनों साथ होते और उसने जुए द्वारा बुरी सगत न अपना कर तभी कोई उचित समाधान ढूढा होता तो आज वह कितने सुरक्षित होते - एक दूसरे के सानिध्य में। उसकी पत्नी ने तो समय की माँग के अनुसार ही निर्णय लिया था अत उसे अब सहज लौटाना सम्भव नही। उसने सबको बहू से क्षमा माँग लेने की सलाह दी जो मान ली गई।

सबको क्षमा देने में तो देरी न की परन्तु वापिस न लौटने की भी क्षमा माँगी। साथ ही उन्हें विश्वास दिलाया कि वह समय-असमय हर आर्थिक सहायता के लिए सदैव तैयार है

और रहेगी। हाँ अगर उसका पति चाहे तो वह भी रह सकता है उसके साथ। पति अ सम्भल चुका था। पति को और क्या चाहिए था वह तो उसके साथ के लिए तरस चु था। वह सहर्ष तैयार हो गया। अब वे एक दूसरे के सानिध्य मे कितने आश्वस्त थे - ए दूसरे के अपराधो को क्षमा करके। और एक दूसरे मे ही अपनी जीवन की पूर्ति पाकर

